मोहरिते सच्चवयणस्स पलिमंथू (ठाणंगसुत्त, ५२९)

अनुसन्धान - ६९

प्राकृतभाषा अने जैनसाहित्य विषयक संपादन, संशोधन, माहिती वगेरेनी पत्रिका

संपादक : विजयशीलचन्द्रसूरि

कलिकालसर्वज्ञ श्रीहेमचन्द्राचार्य नवम जन्मशताब्दी
स्मृति संस्कार शिक्षणनिधि

2016

मोहरिते सच्चवयणस्स पलिमंथू (ठाणंगसुत्त, ५२९)
'मुखरता सत्यवचननी विघातक छे'

अनुसन्धान

प्राकृतभाषा अने जैनसाहित्य-विषयक
सम्पादन, संशोधन, माहिती वगेरेनी पत्रिका

६९

सम्पादक :
विजयशीलचन्द्रसूरि

श्रीहेमचन्द्राचार्य

कलिकालसर्वज्ञ श्रीहेमचन्द्राचार्य नवम जन्मशताब्दी
स्मृति संस्कार शिक्षणनिधि
अहमदाबाद
२०१६

अनुसन्धान ६९

आद्य सम्पादक : **डॉ. हरिवल्लभ भायाणी**

सम्पादक : **विजयशीलचन्द्रसूरि**

सम्पर्क : C/o. **अतुल एच. कापडिया**
A-9, जागृति फ्लेट्स, पालडी
महावीर टावर पाछळ, अमदावाद-३८०००७
फोन : ०७९-२६५७४९८१
E-mail : s.samrat2005@gmail.com

प्रकाशक : **कलिकालसर्वज्ञ श्रीहेमचन्द्राचार्य नवम जन्मशताब्दी स्मृति संस्कार शिक्षणनिधि, अहमदाबाद**

प्राप्तिस्थान : (१) **आ. श्रीविजयनेमिसूरि जैन स्वाध्यायमन्दिर**
१२, भगतबाग, जैननगर, नवा शारदामन्दिर रोड,
आणंदजी कल्याणजी पेढीनी बाजुमां,
अमदावाद-३८०००७
फोन : ०७९-२६६२२४६५

(२) **सरस्वती पुस्तक भण्डार**
११२, हाथीखाना, रतनपोल,
अमदावाद-३८०००१
फोन : ०७९-२५३५६६९२

प्रति : 250

मूल्य : ₹ 120-00

मुद्रक : **क्रिश्ना ग्राफिक्स, किरीट हरजीभाई पटेल**
९६६, नारणपुरा जूना गाम, अमदावाद-३८००१३
(फोनः ०७९-२७४९४३९३)

निवेदन

'संशोधन' प्रत्येनो अणगमो अे रूढिजड मानसनी जरीपुराणी विशेषता छे. संशोधन विषे प्रवर्तती अणसमज आनुं कारण छे. संशोधन अे सुधारकयुगनी विकृति छे, अथवा सुधारको तरफथी परम्परा उपर थयेलुं आक्रमण छे; संशोधन द्वारा आपणां शास्त्रोनी अने धर्मनी वातोने खोटी ठरावीने आपणने धर्म तथा संस्कृतिथी भ्रष्ट करवानी अेक षड्यन्त्र जेवी योजना छे; संशोधनना नामे अेवी वातो फेलाववामां आवे के तेथी लोको श्रद्धाभ्रष्ट थाय अने धर्मथी विमुख थई जाय; आ प्रकारनी, साची के खोटी, समजण आ अणगमानुं कारण छे.

आ वातो साव खोटी छे अेवुं पण नथी. अेवी घणी घणी हरकतो संशोधनना नामे थई छे अने थती रहे छे के जेने लीधे परम्परापरायण मानस सहज क्षुब्ध थतुं रहे छे, अने संशोधन प्रत्ये तेने अनास्था वधती रहे छे.

अहीं जे खूटे छे अथवा जे आवश्यक छे ते छे विवेक. विवेकदृष्टि अे ज्ञानसंपन्न के श्रद्धासंपन्न चित्तनी अनिवार्यता गणाय. परम्परागत मानस जो ज्ञानाभ्यास माटे विशेष आग्रही होय तो, ते ज्ञानार्जनना समुचित फळ जेवो 'विवेक' तेनामां ऊगवो ज जोईअे. विवेक नथी ऊगतो त्यां बे वानां लगभग जोवा मळे छे : झनून अने अन्धश्रद्धा. आ बेउनुं फरजंद ते कदाग्रह. अेथी ऊलटुं, विवेकदृष्टि खीली होय त्यां बे वानां अनुभवाय छे : उदारता अने विशद श्रद्धा. विवेक आपणने, संशोधन द्वारा सांपडता काल्पनिक के अवास्तविक निष्कर्षो थकी बचावे छे; अने साथे ज, अनुचित रूढ मान्यता तथा परम्परानुं सम्मार्जन पण करवा प्रेरे छे.

'राम अने रावण काल्पनिक पात्रो छे'; 'श्रीपाळ अने मयणानी कथा कल्पनानी नीपज छे'; 'शत्रुंजयतीर्थ ते साचुं नथी'; – आवी वातो ज्यारे संशोधन द्वारा थवा मांडे, त्यारे संशोधन प्रत्येनो विश्वास डगी जाय तो ते साव स्वाभाविक छे. जे पात्रो अने तत्त्वो, युगोना युगोथी लोक-चेतनानी आस्थाना केन्द्र तरीके प्रतिष्ठित होय; ते तत्त्वोने के पात्रोने 'मिथ्या' गणावनारां संशोधनो पोते तो जूठां होवानां ज, परंतु तेनी असर साचां-तथ्यात्मक होय तेवां संशोधनोअे पण वेठवी ज पडवानी. अने तेथी जे नुकसान थाय ते तो परम्पराअे अने सत्ये ज वेठवानुं

आवे. परंतु आमां परम्परानो दोष नहि कढाय. परम्परा पासे विवेकनी जेटली अपेक्षा राखीअे तेटली ज, बल्के तेथी अनेक गणी अधिक विवेकनी अपेक्षा, संशोधन पासे पण राखवानी होय. अे वात पण भूलवी न जोईअे.

संशोधन अेटले परम्परानो लोप नहि. परम्परा उपर प्रहार करवो अे कांई संशोधननो लक्ष्यांक नथी - न होय - न होवो जोईअे. संशोधननो एक ज अर्थ होय : परम्परामां, काळवश, प्रवेशी गयेली विकृतिओनी दूर करवी. हा, अेवुं जरुर बने के आवुं विकृति-निवारण, क्यारेक के घणीवार, कोईने परम्परा परना प्रहाररूप के आघातप्रद के अमान्य बनी बेसे. उपर विवेकदृष्टिनी वात करी तेनो उपयोग अहीं ज आवश्यक बने.

आपणुं ज्ञान, अध्ययन, परम्परानुसारी भले होय, परन्तु तेमां जो विवेकनुं उचित संम्मिश्रण करवामां आवे, तो आपणे रूढिजड के ज्ञानजड न बनी जइअे अने परम्परानुं सम्मार्जन करी आपनारा, लाभकारक संशोधनथी वंचित न रही जइअे.

फरी, विवेकदृष्टि अे सर्वत्र अनिवार्य छे. अस्तु.

— शी.

अनुक्रम

सम्पादन

कवि-श्रीरूपचन्द्रजी-रचित वियोगिनीछन्दोबद्धा विज्ञप्तिद्वात्रिंशिका
— सं. मुनि सुयशचन्द्रविजय गणि
मुनि सुजसचन्द्रविजय १

गौतमस्वामिस्तुतिः (अनुबन्धफलगर्भा) — सं. पं. अमृत पटेल ५

श्रीऋषभदेवनी २ स्तुतिओ — सं. विजयशीलचन्द्रसूरि ९

पं. श्रीविवेकसागरगणिरचित-अक्षरार्थप्रकाशिनीवृत्तियुतं
श्रीपार्श्वजिन-यमकबद्धस्तवनम् — सं. मुनि कल्याणकीर्तिविजय ११

विषमव्याख्याकाव्यानि — सं. मुनि कल्याणकीर्तिविजय १७

श्रीअक्षयचन्द्र वाचक पर प्रेषित एक लेखपत्र
— सं. विजयशीलचन्द्रसूरि २२

वाचकश्रीसकलचन्द्रगणिरचितं गणधरप्रबोधश्रीवर्धमानस्तवनम्
— सं. विजयशीलचन्द्रसूरि २७

श्रीजयवन्तसूरि-कृत पंचेन्द्रिय गीत — सं. उपा. भुवनचन्द्र ३२

श्रीसकतमुनि तथा सा. श्रीजसोदांजीनां गीत — सं. उपा. भुवनचन्द्र ३८

मुनि-श्रीउदयसागरजी-कृत थूलिभद्र-चन्द्रायणा
— सं. मुनि त्रैलोक्यमण्डनविजय ४२

मुनि-श्रीनेमिकुंजर विरचित गजसिंहकुमार-चोपाई - उत्तरार्ध
— सं. किरीट शाह ५८

रामसनेही सम्प्रदायना महन्त दिलसुद्धरामजीने
(इन्द्रप्रस्थ) दिल्ही पधारवानुं निमन्त्रण आपतो विज्ञप्तिपत्र
लिप्यन्तरण - मुनि सुयशचन्द्रविजय गणि, सुजसचन्द्रविजय
सम्पादन तथा भावानुवाद— निरंजन राज्यगुरु ७५

श्रीपंचपरमेष्ठिनमस्कारार्थः - सं. मुनि धर्मकीर्तिविजय गणि ११३

श्रीनेमविजयजीकृत
भरुच-कावी-गंधारना 'छ'री पालित सङ्घ स्तवन
— सं. डो. शीतल मनीष शाह १२०

श्रीअनंतहंस गणि रचित
पावागिरि-चैत्यप्रवाडि — सं. डिम्पल निरव शाह १३६

स्वाध्याय

तत्त्वबोधप्रवेशिका-१ - प्रामाण्यवाद — मुनि त्रैलोक्यमण्डनविजय १५१
नवपदप्रकरण-बृहद्वृत्तिनी प्रशस्तिना अर्थघटन अंगे
— मुनि त्रैलोक्यमण्डनविजय १७७

प्रकीर्ण

श्रीहेमचन्द्राचार्य-चन्द्रक-१४-समारोह : अहेवाल १८२

श्रीहेमचन्द्राचार्य-चन्द्रक-१४थी सन्मानित
डो. नलिनी बलबीरनुं प्रतिभाव-प्रवचन १८४

कवि-श्रीरूपचन्द्रजी-रचित

वियोगिनीछन्दोबद्धा विज्ञप्तिद्वात्रिंशिका

– सं. मुनि सुयशचन्द्रविजय गणि

मुनि सुजसचन्द्रविजय

स्तोत्र साहित्य पोताना आराध्य के पूज्य प्रत्येनी स्वहृदयभावोनी अभिव्यक्तिनुं श्रेष्ठ माध्यम छे. साहित्यना विशिष्ट अङ्ग समा आ स्तोत्रोमां कोईकवार तेमना गुणो गावा द्वारा, कोई वार तेमना देहनुं वर्णन करवा द्वारा, तो कोईकवार आत्मनिन्दाना माध्यमे तेमनी स्तुति-स्तवना करवामां आवे छे. विविधभाषानिबद्ध - विविधछन्दोमय लघु के दीर्घ आवी अनेक कृतिओ जैन-जैनेतर सम्प्रदायमां प्राप्त थाय छे.

प्रस्तुत रचना आवी एक लघु कृति छे. तेमां आत्मनिन्दा करतां करतां श्रीशत्रुंजयगिरिनायक 'श्रीऋषभदेव'प्रभुनी स्तवना करवामां आवी छे. कृति खरेखर खूब रसाळ छे. तेमानां केटलांक पद्यो तो खूब हृदयङ्गम छे. अे काव्यना शब्दो-भावो हृदय नहीं, पण नाभिमांथी नीकळ्या होय तेवुं लागे छे.

क्रोधादि ४ कषायने आश्रयीने कविअे लखेला भावो –

(श्लो. १३) - हे जगत्श्रेष्ठ! आपना क्षमारूपी आवरण(कवच) तळे मने प्रवेश(स्थान) आपो. अन्यथा, आ क्रोध रूपी सिंह बकरीना बच्चा जेवा मने खेंची जशे (मारी नाखशे).

(श्लो. १४) - हे सर्वज्ञ! हे वैद्यवर! मारो आ देह मानरूपी रोगथी घेरायो(हरायो) छे. आप मने मृदुतारूपी अमृतनुं पान करावो जेथी हुं अव्यय (अमर) थई जाउं.

(श्लो. १५) - हे प्रभु! जेम करोळियो पोते जाळुं बनावे छे अने तेमां ज फसाय छे, तेम में पण आत्मवंचनारूपी जाळुं गुथ्युं छे. हुं तेमां बन्धाउं-फसाउं नहीं ते माटे आप ते जाळाने ऋजुतारूपी दण्डथी तोडी नाखो.

(श्लो. १६) - लोभरूपी अग्निना तापथी दाझेलो हुं घणो व्याकुळ थई गयो छुं. हे जिन! आप निर्ममता (निर्ममत्व) रूपी मेघजलनी वृष्टिथी मारी अे आकुळताने दूर करो.

सम्पूर्ण कृति 'वियोगिनी'छन्दमां रचायेल छे. प्रिय-वियोग आ छन्दमां

विशेष ऊठी आवे छे.

कर्ता - 'रूपचन्द्र'. आटली विगतना आधारे एमनो विशेष परिचय शक्य नथी. अलबत्त आ नामना एक विद्वान मुनिराज 'खरतरगच्छ'मां थयानी नोंध मळे छे. तेमनुं बीजुं नाम 'रामविजय' पण हतुं. विक्रमनी १८मी सदीमां तेओअे रचेली व्याकरण-वैद्यक-ज्योतिष-आगम वगेरे अनेक विषयोनी ५० थी अधिक कृतिओ प्राप्त थाय छे. ते कृतिओना अध्ययन पछी आ कृति पण तेमनी होवानो निर्णय थई शके. तेमना जीवनसम्बन्धी माहिती 'खरतरगच्छ का बृहद् इतिहास' पुस्तकमांथी प्राप्त थाय छे.

प्रान्ते, आ कृति पण उपमितिभवप्रपंचा-कथागत विमलस्तुति अने कुमारपाळ महाराजा कृत आत्मनिन्दाद्वात्रिंशिकानी जेम पद्यानुवाद पामी लोकजीभे गवाती थाय ते ज आशा सह.

आ कृति अमने विद्वद्वर्य श्रुतस्थविर प.पू. मुनिराज श्रीजम्बूविजयजी म.ना शिष्य पू. मुनिराज श्री पुण्डरीकविजयजी म.ना माध्यमे जेसलमेर-श्रीजिनभद्रसूरि हस्तलिखित ग्रन्थभण्डारमांथी प्राप्त थई छे. ते बदल ते पूज्यश्रीना अमे खूब ऋणी छीए.

*

श्रीआदिनाथाय नमः ॥

जय देव! जयाऽऽदिमप्रभो!, जय शत्रुञ्जयभूध्रभूषण! ।
जय बोधिद! बोधवारिधे!, जगदाधार! जयाऽखिलेश्वर! ॥१॥
मुकुरप्रतिबिम्बलीलया, निखिला भावततिस्त्वदात्मनि ।
जिननाथ! यतो विभासते, भवते तत् परमात्मने नमः ॥२॥
भगवन्नभिगम्य ते विभो-र्भवभीतेन मया दयालुताम् ।
शुभकृच्छरणं शरीरिणां, विहितं त्वच्चलनावलम्बनम् ॥३॥
अथ यावदरातिवारितो, न लभेऽनन्तसुखास्पदं पदम् ।
मम तावदधीश! मा स्म भूद्, विरहस्ते चरणाम्बुजार्चनात् ॥४॥
अवधीरय माऽपराध्ययं, पर(रि)भाव्येति नु मां जगत्पते! ।
महतां हि महाकृपावतां, प्रकृतिर्वारिदवद् विनिश्चिता ॥५॥
तदभद्रवताऽप्यभूयत, त्वदनाज्ञप्तिम(र)कारि यन्मया ।
न तु मन्तुमवेहि मामकं, ननु दोषोऽस्त्ययमीश! कर्मणाम् ॥६॥

तदशर्मदकर्मनोदना-दनुभूता बहुशो निगोदभीः ।
बत तत्समये मदर्तिहा, यदभूद् दूरतरो भवान् प्रभुः ॥७॥
नरकादिगतिव्यथाकथा, अलमुक्त्वा तव नेतुरग्रतः ।
जडबुद्धिरिह प्रबोधितो, यदहं त्वद्वचसैव केवलम् ॥८॥
प्रतिपद्य नु दैवतं पदं, भृशमासं विषयैर्विमोहितः ।
अथ तैः पुनरप्यहं हहा, प्रतिकूले त्वयि तात! ताडितः ॥९॥
जगदीश! कथञ्चिदर्जितं, शिववर्त्मार्ऽपि नृजन्म यन्मया ।
निरपाति तदप्यनन्तशो, मुषितोऽहं बत मोहकर्मणा ॥१०॥
अमुनैवमिहाऽऽत्मविद्विषा, वशमानाय्य भटैः क्रुधादिभिः ।
अहमेष मुहु[:] प्लवङ्गमः, प्रतिगेहं बटुनैव नर्तितः ॥११॥
त्वयि सत्यपि मत्पतौ च मां, यदि दुन्वन्ति रुषादयोऽरयः ।
अपनेष्यति तर्ह्यनाथता-ऽपयशो मे सकलाधिनाथ! कः ? ॥१२॥
उपवेशय तावके क्षमा-वरणे मां त्रिजगच्छिरोमणे! ।
अशमो मृगराडिवाऽन्यथा, हुडदारं नु हहा! हरिष्यति ॥१३॥
अभिमानरुजा जितं वपु-र्मम सर्वज्ञभिषग्विभूषण! ।
अथ पायय मार्दवामृतं, त्वरितं येन भवेयमव्यय[:] ॥१४॥
रचितं च मयाऽऽत्मवञ्चनं, छलजालं कृमिणेव कुर्वता ।
लसदार्जवदण्डखण्डितं, मदबन्धाय विधेहि तद् विभो! ॥१५॥
अहमस्म्यसमाधिबाधितो, बहुलोभानलतापतापितः ।
जिन! निर्ममताघनच्छटा-लहरीभिः कुरु मामनाकुलम् ॥१६॥
पिशुनेन हसेन हास्यतां, गमितोऽहं करुणां दशां गतः ।
दिश तन्महिमाप्ति(प्त)ये हि मां, वरवैराग्यरसं जगद्गुरो! ॥१७॥
इव गेन्दुकमन्तरागतं, ललता(तो) रत्यरती निहत्य माम् ।
अधुना विधिनाऽपसार्य ते, कुरु भर्न्तः(र्त्तः!) समताभुवि स्थिरम् ॥१८॥
भय-शोचनभावकस्य मे, भय-शोकाभिभवो व्यवर्द्धत ।
मुनिनाथ! तथा यतस्व तौ, न पुनर्मां स्पृशतो भवान्तरे ॥१९॥
तनुसम्भवमस्मरन् मुधा, यदबीभत्सत मन्मनोऽशुचिम् ।
अभवं ननु तेन तन्मयः, सदयोद्धारय मां ततोऽधुना ॥२०॥

मम चैव मनो मनोभवो, व्यथते हन्त! मनोभवोऽपि सन् ।
इव वंशजकृष्णवर्त्मनः, कियदाख्यामि ततोऽस्य दो(दौ)ष्ठवम् ॥२१॥
शमयाऽमुमनन्तवीर्यभा-गनुकम्प्यो भवताऽस्मि चेदहम् ।
इयदेव कृपाफलं पुन-र्न च वेदत्रयवेदनोदयः ॥२२॥ युग्मम् ॥
अवगाढचरा मुहुर्मया, सह मिथ्यात्वचिरत्नशत्रुणा ।
भवसन्ततिराशु हीयतां, हितकृन्नाथ! तव प्रसादतः ॥२३॥
अयि मोहमयोऽपि रोचते, प्रियतुभ्यं खलु मे त्वदाश्रयः ।
विरसे लवणाम्बुधावपि, स्फुरति स्वादुरसं जलं क्वचित् ॥२४॥
तव पादतलावलम्बनं, विषया माऽग्रहिषुः कदाऽपि माम् ।
यदमीभिरभीरुमायिभिः, सरलोऽहं बहुशः प्रलोभितः ॥२५॥
मनसा सममिन्द्रियाणि ते, स्मरणात् पारग! वारयन्ति माम् ।
विषयानुकमेव कुर्वते, कुरु यत्नं कमपीह तद् द्रुतम् ॥२६॥
ह्रियतेऽप्यथ यत्नरक्षितं, घनसारोपमितं मनोऽस्थिरम् ।
मिरिचैरिव ते गुणस्मृति-प्रतिबन्धैर्विधिवद् बधान तत् ॥२७॥
अनुकम्प्य निवर्तयाऽऽश्रवान्, जिनप! ख्यापय संवरीति माम् ।
त्वरितं पुनरन्यसङ्गमाद्, विरतं तात! विधेह्यतः परम् ॥२८॥
त्वयि चैव विधाय धारणा-मनुभूयाऽऽत्मगुणान् महारसान् ।
अवदातमवाप्नुयां यथा, वररत्नत्रितयं तथा ननु ॥२९॥
अधिकृत्य पदित्रयाङ्किता-न्यथ तत्त्वान्यपरोक्षमानतः ।
प्रतिमः परमेष्ठिना कदा-ऽहमपश्यामिति(?) मे मनोरथः ॥३०॥
अथ चेत् पृथुलाः प्रतीक्षसे, मम काश्चित् खचिता भवस्थ(स्थि)तीः ।
तदपि दृढ(द्रढि)मानमानया-ऽद्भुतसम्यवक्त्वधनं स्वसिद्धये ॥३१॥
सफलीकुरुतान् ममाऽर्थनां, हरतात् पापमथाऽपि दुर्गत(तिम्) ।
दिश देव! दयापरेप्सितं, परमाधार! नमो नमोऽस्तु ते ॥३२॥
इति हृदयगताभिलाषमाख्यत्, प्रथमजिनं **विमलाचलं** पुनानम् ।
जिनपतिचरणाब्जचञ्चरीकः, कविरचनामुपदाय **रूपचन्द्रः** ॥३३॥

॥ इति विज्ञप्तिद्वात्रिंशिका समाप्ता ॥

॥ शुभं भवतु ॥ श्रीः श्रीः ॥

* * *

गौतमस्वामिस्तुतिः (अनुबन्धफलगर्भा)

— सं. पं. अमृत पटेल

[व्याकरणशास्त्रमां अनुबन्धोनुं घणुं महत्त्व छे. धातु साथे जोडायेला अनुबन्धो, ते ते चोक्कस परिस्थितिमां चोक्कस कार्यनुं सूचन करतां होय छे. आवा अनुबन्धोने लीधे थयेला धातुप्रयोगोने क्रमशः समावती अने अे द्वारा श्रीगौतमस्वामीनी स्तुति करती एक द्व्याश्रय प्रकारनी रचना अत्रे प्रकाशित थई रही छे. रचनाना अने तेना पर रचायेली अवचूरिना कर्ता अज्ञात छे. अवचूरिमां पहेलां स्तुति विशे विवरण अने त्यारबाद अनुबन्धो अने ते अनुबन्धोथी सर्जाता स्तुतिगत प्रयोगो अंगे छणावट छे. लालभाई दलपतभाई विद्यामन्दिर, अमदावादनी लादभेसू ७३१७ क्रमाङ्कनी १ पत्रनी पञ्चपाठी प्रत उपरथी प्रस्तुत कृतिनुं लिप्यन्तरण थयुं छे. प्रत सं. १५१५मां श्रीमेरुरत्न गणिना शिष्य श्रीसिद्धान्तसुन्दर द्वारा लखाई छे. प्रतनी Xeroxना अभावमां श्रीअमृतभाईना महदंशे अशुद्ध लिप्यन्तरणना आधारे यथामति सम्पादन-संशोधन कर्युं छे.

—सं.]

*

श्रीवर्द्धमानशिष्याग्रणी-र्महिमाधाम गौतमाह्वगुरो! ।
अनुबन्धफलश्लोकै-स्त्वामज्ञोऽपि स्तुवन्नस्मि ॥१॥

अवचूरिः - अस्या अवचूरिर्लिख्यते । यथा - हे गौतमाह्वगुरो!, अनुबन्धाना-मकारादि-हपर्यन्तानां यत् फलं, तदाधारत्वेनाऽऽधारस्य आधेयोपचारात् फलमेव ये प्रयोगास्तेषां तैर्वा ये श्लोका वृत्ति(त्त)विशेषास्तैः कृत्वा, त्वामज्ञोऽपि स्तुवन्नस्मि इति योगः । अत्र 'वर्धमानशिष्याग्रणी'रिति पदं श्रीवीरस्येव श्रीगौतमस्याऽपि स्तुत्यर्हतां प्रतिपादयति । 'महिमे'त्यादि तु यदज्ञोऽप्यनन्तगुणं भगवन्तं स्तोतुं शक्नोति, तत्र भगवानेव हेतुरित्यर्थं व्यनक्ति । तथा 'श्लोकै'रिति पदं प्राय आर्यानिबद्धायामप्यस्यां स्तुतौ न दुष्टं, ''भवइ य इत्थ सिलोगो, पेहेइ हियाणुसासण''मित्यादावपि तथादर्शनात् । अथवा बन्धवृत्तरचनां अनु- लक्षीकृत्य ये फलभूताः श्लोका यशांसि, तैर्हेतुभिरित्यर्थव्यक्तेः । न च यशसां काव्यफल-भूतत्वमयुक्तं, ''काव्यं यशसेऽर्थकृते'' इत्यादिवचनात् । अथाऽनुबन्धाः -

''अकारः सर्वत्र उच्चारणार्थः'' । यथा अत्र 'असक् भुवि, वर्त्तमाना मिवि 'अस्मी'ति ॥१॥

अथ प्रस्तुतस्तुतिमाह -

मिन्नेधमानमुद् यो, भजते नन्दन् भवन्तमस्त्वाऽन्यत् ।
विष्णुमसित्त्वा तम-चिक्रीडच्छ्रीर्नाऽविजच्चाऽस्मात् ॥२॥

[अवचूरिः] - मिन्नेत्यादि । स्निह्यद्-वर्धमान-हर्षो यः कश्चित् गर्हितापरव्यापारं अस्त्वा- क्षिप्त्वा त्वां भजते, तं नरं श्रीर्लक्ष्मीर्विष्णुं स्वप्राणप्रियं असित्त्वा- मुक्त्वाऽचिक्रीडत्- व्यलीलसदिति । ननु यथा स्वप्राणेशं मुक्त्वा श्रीरमुं नरमचिक्रीडत्, तथाऽमुमपि मुक्त्वा कदाचिदन्यः कश्चित् क्रीडितो भविष्यति इत्याह - नाऽविजत्- तस्मान्न पृथगभूदित्यर्थः ।

इह हरिप्रिया-सम्पदोरभेदेन उपन्यासः ''कमला-सम्पदोः कामध्वजे मकर-मत्स्ययो''रित्यादिना तथाप्रतिपादनात् । 'भजते' इत्यत्र वर्त्तमानापरो निर्देशो भगवतो मुक्तिप्राप्तत्वेन साक्षादाश्रयणायोगेऽपि मनसाश्रयणे यो _ _ _ _ मित्यर्थ व्यक्तार्थः । 'अचिक्रीड'दित्यत्र अतीतत्वेन निर्देशः चेदविनयं भजसि तर्हि दु_ _ष्यो जात एवेत्यादाविव भजननैरन्तर्येणाऽवश्यफलसद्भावख्यापनार्थः । एवं सपि (?) स्वयं ज्ञेयम् ॥२॥

न च भजनमेव फलवदपि तु स्तवनमपीति तत्फलमाह -

नेन्दोर्यदवैक्षीज्जगदगमच्च प्राकटीत् तदस्य यशः ।
योऽनुद्विग्नमनास्त्वा-ममोहित! स्तोष्यते नेतः! ॥३॥

[अव०] - नेन्दोरिति । नेतः- स्वामिन्! । न मुह्यतीति हे अमोहित! - मूढतामुक्त!, [अनुद्विग्नमनाः-] अभग्नचेता यस्त्वां स्तोष्यते, तस्य जनस्य तद् यशः प्राकटीत्- प्रकट्यभूत्, यद् इन्दोश्चन्द्रसकाशान्नाऽवैक्षीदै_ल्येन नष्ट थगभूत्(?), जगत् कर्मतापन्नमगमच्चाऽव्यापच्चेति सोऽभूत् स्तुतिकर्तुः स्वात्मनि यशःप्रकाशनादनौचित्यं स्तुतेरुपलक्षणमात्रत्वं च । न च स्तुतिकाल एव यशःप्रादुर्भवोऽपि तु तदभिप्रायेण प्रागपीति ज्ञापनार्थं च स्तोष्यते इत्यत्र भविष्यन्ती-परो निर्देशः ॥३॥

भजन-स्तुत्योरभावे भगवद्-वाक्याऽऽराधनं विफलमाह -

त्वदमोग्धृ-त-प्रियङ्कर-प्रशिश्रियाणा-ऽपराग-वाक्यं यः ।
सेवेतैष ऋतीयितविपदाऽऽपोत्फुल्लसारर्द्धिम् ॥४॥

अव. - त्वदित्यादि । त्वत्सम्बन्धि न मुह्यति न शास्त्रार्थे विपर्यस्यतीत्यमोग्धृ । अत एव धातूनामनेकार्थत्वात्, ऋतं- सत्यं प्रियङ्करं- हितं, "उपसर्गेण धात्वर्थो बलादन्यत्र नीयते" इत्युक्तेः प्रशिश्रियाणं- प्रशान्तमपरागं- नीरागं च वचो यः सेवेत । एष जन ऋतीयितविपदा प्राप्तव्यसनः सन्नुत्फुल्लसारर्द्धिं- स्थिरसम्पदम् आप- लेभे इत्यर्थः ।

'अमोग्धृत' इत्यत्र "ऋतो वा तौ [च" इत्यनेन] ऋता सह ऋदेव । न च 'प्रशिश्रियाणे'त्यत्र रेफसंयुक्तेन पकारेण _ _ _ _ _ _ पादादिस्थितरेफसंयुक्तव्यञ्जनेन प्रागुक्तायोगात् "अल्पव्ययेन _ _ ग्राम्यजनो मिष्टमश्नाति" इत्यादावपि तथादर्शनात् ।

अथोदाहरणानि - आत् - "आदित" इति सूत्रेण क्तयोरादौ इट् निषेधात्(र्थः) । यथाऽत्र 'ञिमिदाच् स्नेहने', मिद्, अकर्मकत्वाद् "गत्यर्थाकर्मके"ति कर्तरि "ज्ञानेच्छार्चार्थाञ्जी"दिति सति क्ते इडभावात् क्तस्य दस्य च नत्वे 'मिन्ने'ति । इत् - 'इङितः कर्तरी"ति सूत्रेण कर्तरि आत्मनेपदार्थो, यथा 'एधि वृद्धौ', एध्, आत्मनेपदित्वादानशि शवागमे च 'एधमाने'ति । ईत् - "ईगित" इत्यनेन फलवति कर्त्तर्यात्मनेपदार्थो, यथा 'भजी सेवायाम्', भज्, वर्तमाना ते शवि 'भजते' इति । उत् - "उदितः स्वरान्नोऽन्तः" इति नागमार्थो, यथा [नन्दन्....] । ऊत् - "ऊदितो वे"ति क्त्वादौ इट्विकल्पार्थो, यथा 'असूच् क्षेपणे', अस्, क्त्वायां विकल्पादिटि चाऽस्त्वा असित्वा चेति । ऋत् - "उपान्त्यस्याऽसमानलोपे शास्वृदितो ङे" इति ङे परे णौ उपान्त्यह्रस्वाभावार्थो, यथा 'क्रीङ् विहारे', क्रीड्, णिगि अद्यतन्यां "णिश्री०"ति ङे; द्वन्द्वाद्वौ च (द्वित्वादौ च) प्राग्ह्रस्वाभावादचिक्रीडत् इति । ॠत् - "ॠदि०" इत्यनेन विकल्पेन ङार्थो, यथा "विजृंकी पृथग्भावे", विज्, अद्यतन्यामङि पक्षे सिचि वृद्ध्यादौ चाऽविषदवैक्षीच्चेति । लृत् - "लृदिद्द्युतादी"त्यङर्थो, यथा "गम्लृं गतौ", गम्, अद्यतन्यामङि चाऽगमदिति । [एत्-] "व्यञ्जनादेर्वोपान्त्यस्य" इत्यनेन सूत्रेण प्राप्ताया अपि "न श्विजा० ह्म्येदित" इत्यनेन वृद्धिनिषेधार्थो, यथा प्रपूर्वः 'कटे वर्षावरणयोः', कट्, अद्यतन्यां सिचि "इट ईति" सिज्लुगादौ

च वृद्धेरभावात् प्राक्टीदिति । एत् - ''डीयश्व्यैदितः क्त्रयो''रित्यनेन इडभावार्थः । तथा ओत् - ''सूयत्याद्योदित'' इत्यनेन क्त्रयोर्नकारार्थो, यथा उत्पूर्व 'ओविजैप् भयचलनयोः', विज्, क्ते इडभावे क्तस्य नत्वे क्तादेशस्याऽसत्त्वाद् विजो जस्य गत्वे पश्चात् नञ्-योगे चाऽनुद्विग्नेति । औत् - ''धूगौदित'' इत्यनेनेड्विकल्पार्थो, यथा 'मुहौच् वैचित्र्ये' तृचि तृनि वा गुणे नञ्-योगे इटि पक्षे ''मुह द्रुहे''ति हस्य घत्वे तुर्धत्वे घस्य गत्वे चाऽमोहितरमोग्धृ चेति ।

अनुस्वारः - ''एकस्वरादनुस्वारे'' इत्यनेनेडभावार्थो, यथा 'ष्टुंग्क् स्तुतौ'', ष्टु तस्य स्तु, भविष्यन्ती स्यते, तथा 'णींग् प्रापणे' ''पाठे धात्वादेर्णो न'' तृचि, इत्युभयत्रेऽभावे गुणे च स्तोष्यते नेतरिति च । गुणाभावार्थो, यथा 'ऋंक् प्रापणे', ऋ, प्रत्यये तथा - 'प्रीगण् तर्पणे', प्री, ''नाम्युपान्त्यप्रीकृगृज्ञः क'' इति के, प्रत्ययस्य कित्त्वाद् गुणाभावे ''संयोगा''दितीयि च ऋत प्रियेति च । खः ''खित्यनव्ययारुषो मोन्तो ह्रस्वश्चे''त्यनेन मागमार्थो, यथा प्रियङ्करेति । ग ''ईगित'' इत्यनेनाऽऽत्मनेपदार्थो, यथा प्रात् 'श्रींग् सेवायां' श्रिग्, कर्तरि कान-प्रत्यये द्वित्वादौ च प्रतिशिश्रियाण इति । घः ''क्तेऽनिटश्चजोः कगौ घिती''त्यनेन कत्वगत्वार्थो, यथा, 'रञ्जी रागे', रञ्ज्, रज्यतेऽनेन व्यञ्जनादिति करणे घञ्, ''घञि भावकरणे'' इति न्लुकि, 'वचंक् भाषणे', वच्, ''ऋवर्णव्यञ्जनाद् ध्यण्'' ध्यणि, उभयत्र प्राग् वृद्धौ गत्वे कत्वे च राग वाक्यं चेति । ङः ''इङितः कर्तरि'' इत्यात्मनेपदार्थो गुणाभावार्थश्च, यथा 'सेवृङ् सेवने' इति [], तथा 'ऋति घृणागतिस्पर्धेषु', ऋत्, ''ऋतेर्ङीय'' इति गुणाभावे क्तादौ च [सेवेत] ऋतीयितेति च । ञिः ''ज्ञानेच्छाचार्थाञ्जी-च्छील्यादिभ्यः क्त'' इत्यनेन सति क्तार्थो, ञस्तु वृद्ध्यर्थो, यथा उत्पूर्वो 'ञिफला विशरणे', फल्, क्ते ''अनु० फुल्लोत्फुल्ले''ति निपाते चोत्फुल्लेति, 'सृं गतौ', सृ, ''सर्तेः स्थिरव्याधिबलमत्स्ये'' इति घञि वृद्धौ च सारेति । अत्र सर्वत्र साधनिकाविस्तरः स्वयं ज्ञेयोऽनुबन्धफलमात्रप्रकटनार्थत्वादस्या, एवमग्रेऽपि ॥

* * *

श्रीऋषभदेवनी २ स्तुतिओ

— सं. विजयशीलचन्द्रसूरि

वाचक सकलचन्द्रकृत 'गणधरप्रबोध'नी प्रतिमां, ते कृति पूरी थतां ज ४ श्लोक प्रमाण ऋषभदेवस्तुति छे. आवश्यक क्रियामां बोलाती ४ थोय - प्रकारनी आ स्तुति छे. कर्तानुं नाम नथी. सकलचन्द्र गणिनी होय तो बनवाजोग छे. आमां ३ श्लोक अनुष्टुप् अने एक - त्रीजो श्लोक आर्यामां छे, ते विशेष.

बीजी स्तुति प्राकृतमां पांच पद्यात्मक छे. ते पण प्रकीर्ण पत्रमांथी उतारी छे. भावोत्पादक रचना.

*

(१)

युगादिपुरुषेन्द्राय, युगादिस्थितिहेतवे ।
युगादिशुद्धधर्माय, युगादिमुनये नमः ॥१॥

ऋषभाद्या वर्धमानान्ता, जिनेन्द्रा दश पञ्च च ।
त्रिकवर्गसमायुक्ता, दिशन्तु परमां गतिम् ॥२॥

जयति जिनोक्तो धर्मः, षड्जीवनिकायवत्सलो नित्यम् ।
चूडामणिरिव लोके, विभाति यः सर्वधर्माणाम् ॥३॥

सा नो भवतु सुप्रीता, निर्धूतकनकप्रभा ।
मृगेन्द्रवाहना नित्यं, कूष्माण्डी कमलेक्षणा ॥४॥

(२)

श्रीऋषभदेवस्तवनम्

जयसि तुमं भुवणावलि-सरोजवणसंडचंडमायंड! ।
वम्महमयंदसिंधुर-कुंभयडवियाडणमयंद! ॥१॥

मुत्तिवहूकंठग्गह-उक्कंठिय! मलियमोहमाहप्प! ।
तुज्झ नमो तिहुयणरक्खणक्खणिय! परमकारुणिय! ॥२॥

जय जय नाह(हि)समुब्भव! मरुदेवीनयणनंदण! जिणिंद! ।
लोआलोअदिवायर! निन्नासियमोहतिम(मि)रोह! ॥३॥

जय सयलजीववच्छल! तिहुअणवरभवणमंगलपईव! ।
लोआलोअविलोयण! विहडियमिच्छत्ततिमिरोह! ॥४॥

जय संसारमहोयहि-निवि(व)डियजयजंतुतारणतरंड! ।
जय ससुरासुरसंथुय! जय जय रिसहेस! जिणनाह! ॥५॥

रिसहजिनस्तवनम् ॥

* * *

पं. श्रीविवेकसागरगणिरचित-अक्षरार्थप्रकाशिनीवृत्तियुतं श्रीपार्श्वजिन-यमकबद्धस्तवनम्

— सं. मुनि कल्याणकीर्तिविजय

राजगृह नगरमां बिराजमान श्रीपार्श्वनाथ भगवाननुं आ संस्कृतभाषामय यमकबद्ध स्तवन छे. कुल ११ श्लोकोथी बनेल आ स्तवनमां प्रथम १० श्लोको पार्श्वनाथ प्रभुनी स्तवना-स्वरूप छे, ज्यारे छेल्लो श्लोक विनन्ति-स्वरूप छे. प्रथम १० श्लोको यमकालङ्कारथी विभूषित छे अने वंशस्थबिल छन्दमां रचायेला छे, ज्यारे अन्तिम श्लोक वसन्ततिलका छन्दबद्ध छे. प्रथमना १० श्लोकोमां **'पार्श्वं भजे राजगृहे गृहे गृहे'** ए ध्रुवपद छे. आम पण शब्दालङ्कार कठिन होय छे, अने तेमां पण यमकालङ्कार अत्यन्त कठिन छे. तेनाथी विभूषित काव्य बनाववामां कविनी पूरेपूरी सज्जता जोइए, जे अहीं पदे पदे अनुभवाय छे. यद्यपि आ स्तवनमां कर्ताए पोताना नामनो क्यांय निर्देश कर्यो नथी तेथी, अने बीजां पण कोई साधनोथी तेमना विशे जाणी शकायुं नथी, तेथी आ स्तवनना कर्ता अज्ञात ज रहे छे; छतां पण ११मा श्लोकमां **श्रीसोमसुन्दरगुणा०** एवो निर्देश मळतो होवाथी एवुं अनुमानी शकाय के आ स्तवनना कर्ता, विक्रमना १४मा-१५मा शतकमां थई गएला प्रभावक जैनाचार्य तपगच्छपति श्रीसोमसुन्दरसूरिजी भगवन्तना शिष्यपरिवारमांथी ज कोई विद्वान् मुनिराज होई शके.

आ स्तवनना कठिन भावोने समझवा माटे पं. श्री**विवेकसागरगणि**ए **अक्षरार्थप्रकाशिनी** नामक वृत्ति पण रची छे, जे पण साथे ज प्रकाशित छे. आवा स्तवननी वृत्ति रचनार व्यक्ति पण सहजपणे पहोंचेला विद्वान् होय ज. प्राप्त साधनोनी मददथी तो तेमना विशे पण कांई जाणी शकायुं नथी. विद्वज्जनो तेमना विशेनी माहिती पूरी पाडे तेवी अभ्यर्थना.

प्रति परिचय : आ प्रति **जोधपुर** (राजस्थान)स्थित **राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान**नी २११९३/२ क्रमाङ्कित प्रति छे. प्रति त्रिपाठ छे. अक्षरो सुवाच्य छे, अने लेखन पण शुद्ध छे. प्रतिलेखन पं. **श्रीआनन्दसौभाग्यगणि**ए ज्येष्ठ सुदि ५ना गुरुवारे **महिषदुर्ग**मां कर्युं छे एम तेनी पुष्पिका परथी जणाय छे, परन्तु लेखन संवत्नो क्यांय निर्देश नथी. छतां य, लेखन शैली परथी, आ प्रति प्रायः १७मा सैकामां लखाई हशे, एवुं अनुमान करी शकाय छे. कुल एक ज पत्रनी त्रिपाठवाळी आ प्रति छे.

*

श्रीगुरुभ्यो नमः ॥

यो भ्राजसेऽतान्तिरभीरभीरभी-मान्तोऽघसर्पे वरवी रवी रवी ।
मोहान्धकारेष्ववनीवनीवनी, पार्श्वं भजे राजगृहेऽगृहेगृहे ॥१॥

अक्षरार्थप्रकाशिनी : यो भ्राजसेऽतान्तिरभीरभीरभी-मान्तोऽघसर्पे वरवी रवी रवी – इत्यस्य यमकस्तोत्रस्याऽक्षरगमनिकोच्यते । तथाहि – 'हे**ऽगृह**!- न विद्यते गृहं- वेश्म कलत्रं वा यस्य सोऽगृहो मुनिस्तस्य सम्बोधनं, हे पार्श्व! तं, यत्तदोर्नित्यसम्बन्धात् त्वां **राजगृहे** नाम नगरे वर्त्तमानमहं भजे- सेवे; किंविशिष्टे राजगृहे ? **ई**- लक्ष्मीः (तस्या) गृहमिव **गृहं**- स्थानं, तद्रूपे, अथवा वीप्सायां **गृहे गृहे**- प्रतिगृहं; तं कमित्याकाङ्क्षायामाह - **यो भ्राजसे**- शोभसे, किंरूपः ? **तान्ति**र्व्यथा न विद्यते यस्येति सः; पुनः कीदृक् ? **अभी**र्न विद्यते भीर्भीतिर्यस्य स तथा, पुन**रभितः** समन्तत **ईः**- समवसरणादिर्लक्ष्मीर्यस्येति सः, **अभीमाः**- सौम्या **अन्ता**- मुखाद्यवयवा यस्याऽथवा **भी**र्भयं, **मा**- लक्ष्मीस्ते उभे न विद्येते येषां ते**ऽभीमा**- गणधरादयस्तेऽ**न्ते**- समीपे यस्येति सः, अथवा **भी**र्भयं, मा- श्री**रन्तो**- मरणं, एतत्त्रयमपि नास्ति यस्य स तथा । पुनः कीदृक् ? **वरवि**र्वर- उत्कृष्टो विः- पक्षी, सर्वपक्षिप्रधानत्वाद् गरुडः, स इव सः, कस्मिन् ? **अघं**- पापं, तदेव चातुर्गतिकसंसारविषमूर्च्छाजनकत्वात् सर्प इव **सर्पो**- भुजङ्गः; तत्र पुनः किंविधः ? रविरिव **रविः**- सूरतुल्यः, केषु ? **मोहो**- द्विविधमोहनीय-कर्मप्रकृतयस्ता एवाऽ**न्धकारा**स्तिमिराणि, व्यामोहजनकत्वात्, तेषु रवणं **रवो**- शब्दस्तद्वान्, योजनगामिवागित्यर्थः; पुनः कथम्भूतः ? **अवनी** लक्षणया धरित्रीस्थाः प्रजा, सैव वनी- काननसमूहस्तत्र **वनं**- जलं दानार्थमस्याऽस्तीति वनीजलदस्ततुल्य इत्यर्थः ॥१॥

भद्रौषधीसानुमतीमती मती-रानन्दयन्तीनमताऽमतामता ।
मूर्तिर्जयेत् तेऽवृजिनं जिनं जिनं, पार्श्वं भजे राजगृहे गृहे गृहे ॥२॥

अ.प्र. : **भद्रौषधी**ति । हे पार्श्व! यस्य **ते**- तव, **मूर्त्ति**राकृति**र्विनीलौ मल्लि-पार्श्वौ** इति वचनात् साम्याज्जिनं- कृष्णं, **जयेच्छ्या**मत्वातिशयेन तिरस्कुर्यात्; कीदृशी मूर्त्तिः ? **भद्रा**णि- कल्याणानि, तान्येवाऽऽर्त्तिर्गदस्तन्निवर्तकत्वे**नौषध्य**-स्तासु, **सानू**नि- शिखराणि विद्यन्ते यस्यां सा **सानुमता**- गिरिभूरिव, गिरिभूमौ

औषधीनां प्रसिद्धेः; **ईः**- श्रीः शोभा वा, तद्वती; **मतयो**- मत्यादिज्ञानानि, ता **आनन्दयन्ती** उल्लासयन्ती; पुनः कीदृशी ? **इनस्य**- सूर्यस्य **इनानां**- राज्ञां वा **मताः**- पूज्या, न मता**न्यमता**नि- विचाररहितत्वात् कुमतानि, ता**न्यमता**-न्यनभिप्रेतानि यस्याः सा, **तमवृजिनं**- निष्पापं **जिनं**- रागादिजेतारं, **पार्श्वं भजे** इति पूर्ववत् तुर्यं पदं व्याख्येयम् ॥२॥

मुक्तेरधाद् यं सुमनोमनोमनो-रथावहाऽस्तारधराधरा धरा ।
मनोम्बुजेऽसानुशयाशयाऽऽशया, पार्श्वं भजे राजगृहे गृहे गृहे ॥३॥

अ.प्र. : मुक्तेरधादिति । हे **सुमनोमनोमनोरथावह!**- **सुमन**सो- देवा विद्वांसश्च, तेषां यानि **मनां**सि, तेषां ये **मनोरथा**- अभिलाषविशेषास्ता**नावह**ति- पूरयतीति तथा; तथा हे **असानुशयाशय!**- **अनुशयः** क्रोधस्तेन सह वर्तते यः स **सानुशय**स्तादृ**गाशय**श्चित्तं यस्य स तथा, न तादृशः निःकषायचित्तस्तस्य सम्बोधनं; **मुक्ते**र्मोक्षस्य, यमकादिषु व्यस्तसम्बन्धेऽप्यदोषा**दाशया**- अभिलाषेण, **धरा**- धरणी- प्रजाः; **मनोम्बुजे**- चित्तकमले, परमात्मस्वरूपतया **यं**- त्वा**मधाद्**- अधार्षीत्; कीदृशी धरा ? **अस्तोऽरी**णां- बाह्याभ्यन्तरवैरिणां समूह **आरं**, तदेवाऽतिदुर्भेद्यत्वाद् **धराधरो**- गिरिर्यया संक्षिप्तवैरिपर्वतेत्यर्थः । शेषं पूर्ववत् ॥३॥

वाणी कृपाणीक्षुरसाऽरसा रसा-नन्दा यदीयास्यभवाऽभवाऽऽभवात् ।
आस्ते तरीवेतिवनेऽवनेवने, पार्श्वं भजे राजगृहे गृहे गृहे ॥४॥

अ.प्र. : वाणी कृपाणीति - हेऽ**भव!**- निस्संसार!, **यदीयास्यभवा**- यस्य-तव मुखजाता, **वाणी**- वाक्, **ईतिवने**- **ईतयो**ऽतिवृष्ट्यादयस्ता एव **वनं**- जलं, तत्र **तरी**व- उडव इवाऽऽ**भवात्**- भवपर्यन्तमास्ते; तथा [हे अवन! हे रक्षक!], **इ**ः- कामः, स एव **वनं** लतावृन्दं, तत्र **कृपाणी**- शस्त्रीव चाऽऽस्ते; कथम्भूता ? **इक्षुवन्मधुरो रसो** यस्याः सा तथा, पुनः कीदृक् ? न विद्यते **रसः**- शृङ्गारादिर्यस्या सा तथा, **रसाया**- धरित्र्याया, **आनन्दो**- हर्षो यस्याः सकाशात् सा तथेत्यर्थः ॥४॥

सौजन्यसम्पद् रमते मतेऽमते!, वैराग्यभङ्गीकृदरीदरी दरी ।
श्रीणां यमेत्याऽमरतार! तारता, पार्श्वं भजे राजगृहे गृहे गृहे ॥५॥

अ.प्र. : यं- त्वामेत्य- प्राप्य, **सौजन्यसम्पत्**- स्वजन्यसम्पत्- स्वजनतासम्पत्तिर्**मते**- अर्थात् तव शासने, **रमते**- विलासान् करोति । **अमता**ऽनभिमता **ईः**- राज्यलक्ष्मीरिः- कामो वा यस्य सम्बोधनम् - **अमते**!; किंविशिष्टाऽसौ ? **वैराग्यभङ्गी**- ज्ञानगर्भादिप्रकारं करोतीति; तादृक् श्रीसर्वज्ञसौजन्यं दृष्ट्वा बहूनामपि वैराग्यं भवतीत्यर्थः; पुनः कीदृक् ? **अरयो**- रागादयस्तेषामीर्लक्ष्मीः स्फीतिर्वा, तां दृणातीति **अरीदरी, श्रीणां**- स्वर्गापवर्ग-सम्पदां, **दरी** गुहास्थानमित्यर्थः; **अमरा**- देवास्तेषु **तारः**- प्रधानस्तस्य सम्बोधनं- हे **अमरतार**!, **तायां**- भवानुबन्धिलक्ष्म्या**मरता**- अनासक्ता, विशेषणमिदं सौजन्यसम्पदां, तं पार्श्वं भज इति प्राग्वत् ॥५॥

स्तोतुं भवन्तं विबुधा बुधा बुधा-दयो यमीशाऽऽविनया नयानयाः ।
दधुर्न शक्तिं धरधीरधीरधी, पार्श्वं भजे राजगृहे गृहे गृहे ॥६॥

अ.प्र. : स्तोतुं भवन्तमिति । [हे ईश!-] हे स्वामिन्! **यं भवन्तं**- त्वां, **स्तोतुं**- स्तुतिविषयीकर्तुं, **विबुधा**- देवाः, **शक्तिं** - सामर्थ्यं, **न दधुर**धार्षुः, कीदृशाः ? **बुधाः**- पण्डिताः विशिष्टावध्यादिज्ञानसम्पन्नाः, पुनः कीदृशाः ? **बुधादयो**- बुधो नाम ग्रहस्तत्प्रभृतयः, पुनः **आ**- समन्ताद्, **विनयो**- विनीतता येषां ते तथा, **नयान्**- सन्मार्गा**नानयन्ति**- प्रापयन्ति जनान् ते तथा, **धरः**- पर्वतस्तद्वद् **धीरा**- निश्चला, **धीः**- बुद्धिर्यस्य तस्य सम्बोधनम्, **अधि** अधिका, **ईः**- समवसरणादिलक्ष्मीर्यस्य तस्य सम्बोधनम्, अथवा तं **पार्श्वमहं भजे,** अहं कीदृक् ? **अधीः**- बुद्धिविकलः ॥६॥

तृष्णातुरे सिद्धिरमाऽऽरमार! मा-योज्जासकोऽसत्समरोऽमरो मरोः ।
त्राता कलेः संवरभूरभूरभूः, पार्श्वं भजे राजगृहे गृहे गृहे ॥७॥

अ.प्र. : तृष्णातुरेति । हे **सिद्धिरम**!- सिद्धौ सिद्ध्या वा रमो रमणं- विलासो यस्य तस्य सम्बोधनम्, अरीणां समूह **आरं**, तन्मारयतीति **आरमार**स्तत्सम्बोधनं हे **आरमार**!, **यस्त्वं कलेः**- कलियुगादेव, **मरोर्**निर्जलदेशात्, **त्राता**- रक्षिताऽभूः- अभवः, कस्मिन् ? **तृष्णा**- लोभतृड्, **आतुरे**- पीडिते, त्वं कीदृक् ? **माया**- कौटिल्यं, **तामुज्जासयति**- विनाशयतीति तादृक्; तथाऽसन्नविद्यमानः, **समरः**- सङ्ग्रामो यस्य सः तथा, **अमरो**- देवोऽथवा न विद्यते **मरो**- मरणं मरकमाद्यं

वा यस्य शाश्वतकत्वान्नीरुजत्वाच्च सः तथा, **संवरः**- इन्द्रियादिसंवरणं, तस्य **भूः**- उत्पत्तिस्थानं, तथा **भूर्जन्म**, तन्न विद्यते यस्य सोऽभूः, तं **भजेति** प्राग्वत् ॥७॥

कामं विलासं कमलामला मला-नोदा विधत्ते सकला कला कला ।
आश्चर्यकृत् ते विगदाऽऽगदागदा, पार्श्वं भजे राजगृहे गृहे गृहे ॥८॥

अ.प्र. : कामं विलासमिति । हे **विगद**!- गदादिशस्त्ररहित!, **ते**- तव, **आश्चर्यकृद्**- विस्मयकारिणी, **कला**- प्रशस्ता, **सकला**- निरवशेषा, **कला**- ज्ञान-विज्ञानादिरूपा, **काम**मत्यर्थं, **विलासं**- सर्वविषयावच्छेदकत्वेन लीलां, **विधत्ते**- तनोति, किंविशिष्टा कला ? **कमल**वन्नीरजवत्, **कमल**या- सर्वतोमुखलक्ष्म्या वा, **अमला**- निर्मला; तथा **मलं**- पूर्वभवसञ्चितं कर्म, तस्याऽऽ**नोदः**- क्षपणं यस्यास्तादृक् सदुपदेशादितृत्वात् सा, तथा **आ**- समन्ताद्, **गदा**- रोगास्त एव दुर्भेद्यत्वादगाः- पर्वतास्तान् द्यति- छिनत्तीति **आगदागदा**- रोगहारिणीत्यर्थः; शेषं प्राग्वत् ॥८॥

त्वां सद्विवेकं जनता नताऽऽनता-रातिं नितान्तं विमतामता मता ।
संसारसंहारकृतेऽकृतेकृते!, पार्श्वं भजे राजगृहे गृहे गृहे ॥९॥

अ.प्र. : त्वां सद्विवेकमिति । हे **अकृतेकृते**!- **अकृता एः**- कामस्य, **कृतयो**- विकारा येन तस्य सम्बोधनं, **जनता**- लोकवृन्दं, **सद्विवेकं**- प्रधानचातुर्यं, **त्वां नता**- नमस्कृतवती **नितान्त**मित्यर्थः, कस्मै ? **संसारो**- भवस्तस्य **संहारः**- संहरणं, तस्य **कृते**- तदर्थं; कीदृशं त्वाम् ? **आनता**- आक्रान्तत्वेनाऽरातयो- बाह्याभ्यन्तरवैरिणो यस्य तं, कीदृशी जनता ? **विमता**न्यभिप्रेतानि, **अमता**नि- कुत्सितमतानि [यस्या] यया वा सा तथा, पुनः किंभूता ? **मता**- सर्वेषामभिमता, सन्मार्गानुसारित्वादित्यर्थः ॥९॥

तन्तन्ति मोदं वसुधासुधाऽसुधा-रूक्ष्स्य ते गीर्विधृतेऽधृतेधृते! ।
वामेय! मायाविलया लयालया, पार्श्वं भजे राजगृहे गृहे गृहे ॥१०॥
अ.प्र. : तन्तन्ति मोदमिति । हे **वामेय**! वामाया अपत्यं **वामेय**स्तस्य सम्बोधनं, **ते**- तव, **गीर्वाणी**, असून्- प्राणान् धारयती**त्यसुधारकः** प्राणी तस्य- जन्तुजातस्य, **मोदं**- हर्षं, **तन्तन्ति**- भृशं तनुते; किंविशिष्टा गीः ?

वसुधाया- धात्र्याः, **सुधेव**, सुधा क्षीरं, तत्तुल्या, मधुरत्वातिशयेन, **विशेषेण धृतिः**- समाधिर्यस्य तस्य सम्बोधनं; तथा **अधृता**- अधारिता, **यां** - लक्ष्म्याम्, **एः**- कामस्य वा, **धृति**र्धारणं येन तस्य सम्बोधनं हे **अधृतेधृते**!, पुनः कीदृग्? **मायाया**ः- कौटिल्यस्य, **विलयो**- विनाशो यस्याः सा, तथा **लयं**- शुक्लध्यानविशेषम्, **आ**- समन्ताल्लाति- गृह्णाति या, तादृशी **या**- लक्ष्मीर्यस्याः सा तथा, ध्यानग्राहिश्रीरित्यर्थः; शेषं प्राग्वत् ॥१०॥

इच्छामि नो सुरपतेः पदसम्पदोऽहं
चक्राधिपस्य पदवीमदवीयसीं वा ।
श्रीसोमसुन्दरगुणास्तरितेल! देया
वामेय ! मे निजपदाम्बुजरेणुसेवाम् ॥११॥

॥ इति **श्रीपार्श्व**जिनयमकबद्धस्तवनं समाप्ततामाप्तम् ॥ **आनन्दसौभाग्यगणि**ना- ऽलेखि श्री**महिषदुर्गे** । ज्येष्ठ शु. ५, गुरौ ॥

अ.प्र. : इच्छामीति । **हे श्रीसोमसुन्दरगुणास्तरितेल**!- **श्रिया** युक्तः **सोमः**- पार्वणादिचन्द्रस्तद्वत्**सुन्दरा** ये **गुणा**स्तै**रास्तारिता**- आच्छादिता, **इला**- पृथ्वी येन तस्य सम्बोधनम्, **अहं**- त्वद्भृत्यः, **सुरपते**रिन्द्रस्य, [**पदं**]- द्वात्रिंशदादि- लक्षविमानाधिपत्यं, तस्य [**सम्पदः**]- श्रियो, **नो इच्छामि**; तथा **चक्राधिपस्य**- चक्रवर्तिनोऽ**दवीयसी**मासन्नां द्वात्रिंशत्सहस्रमितमुकुटबद्धराजाधिपत्यादिरूपां वा [**पदवीं**], वामाया राज्ञ्या अपत्यं **वामेय**स्तस्य सम्बोधनं, **मे**- मम स्वभृत्यस्य, **निजपदौ** एवाऽ**म्बुजे**- कमले, तयो **रेणुः**- परागस्तत्**सेवा**मेव केवलां **देया**- दद्याः, इत्येवाऽहं समीहे इत्यर्थः ॥११॥

॥ इति श्रीयमकबद्धश्री**पार्श्वनाथ**स्तववृत्तिरक्षरार्थप्रकाशिनी समाप्ता ॥छ॥
पण्डितश्रीपण्डितशिरोमणि पं. श्री**विवेकसागर**गणिभिः कृतेति ॥

* * *

विषमव्याख्याकव्यानि (क्रिया-कर्तृ-कर्मगुप्तानि)

— सं. मुनि कल्याणकीर्तिविजय

आ कृतिमां प्रहेलिका (उखाणां) प्रकारना विषम कही शकाय तेवा श्लोकोनो संग्रह करवामां आव्यो छे. कुल ३२ श्लोको छे. एमांथी प्रथम श्लोकना अर्धभागनी व्याख्या साथे ज आपेली छे, बीजा पण केटलाक श्लोकोना विषम शब्दोनो अर्थ टिप्पणी तरीके हांसियामां आप्यो छे. तो केटलाक श्लोको सुभाषितरत्नभाण्डागार वगेरे सुभाषितसंग्रहोमां उपलब्ध होवाथी ते श्लोकोना विषम पदोनी टिप्पणी त्यांथी लईने मूकी छे. पण केटलाक श्लोको प्रायः कोई सुभाषितसंग्रहमां उपलब्ध नथी थता अने अतिविषम छे, तेथी तेमनी व्याख्या/टिप्पणी मूकी शकाई नथी. संग्रहकर्तानुं नाम क्यांय उल्लिखित नथी.

प्रतिपरिचय : आ प्रति जोधपुर (राजस्थान)स्थित राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठानना संग्रहनी १७४८१/२ क्रमाङ्कित प्रति छे. अक्षरो सुवाच्य छे तथा लेखनशुद्धि सारी छे. पत्र १ छे. लेखन संवत् निर्देशायेल नथी छतां लिपि वगेरे जोतां विक्रमना १७मा सैकामां लखायेल होय तेवुं अनुमानी शकाय. लिपिकारनो कोई उल्लेख करायो नथी.

*

॥ श्रीसर्वज्ञाय नमः ॥

खाटपाट-वृषभाट-नगारी-डाभ-डाभकर-वात-हुडाटाः ।
एतयाशु तव कीर्तिप तुष्टा, गामसीमसहितां प्रदिशन्तु ॥१॥

खे- आकाशे अटन्ति- चरन्ति खेटाः- पक्षिणः, तेषां पाति- रक्षति खाटपो- गरुडः, तेनाऽटतीति **खाट्पाटः**- कृष्णः; वृषभेणाऽटतीति **वृषभाट**- ईश्वरः; **नगारिः**- इन्द्रः; इडया भातीति **इडाभश्चन्द्रः**; डलयोरैक्ये **लाभकरो**- विनायकः, हुडेन- मेषेण अटतीति **हुडाटोऽग्निः** ॥१॥

कान्तया कान्तसंयोगे, किमकारि नवोढया? ।
अत्राऽपि कथितं श्लोके, यो जानाति स पण्डितः ॥२॥ (अत्रापि)

पण्डितस्य[१] सदा पापं, संसारपरिवर्धनम् ।
जिनेन्द्रस्तवने यस्य[२], तस्य[३] जन्म निरर्थकम् ॥३॥

१. स्य- क्षिप । २. यस्य- यत्नं कुरु । ३. तस्य- त्यज ॥

युधिष्ठिरसभामध्ये, दुर्योधनः समागतः ।
तस्मै काञ्चन-रत्नानि, वस्त्राणि च धनानि च ॥४॥ (अदुः)

पम्पासरसि रामेण, सस्नेहं सविलासया ।
यत् कृतं सीतया सार्धं, तन्मे मित्र! निवेदय ॥५॥ (सस्ने)

कुमारपालभूपाल[१], त्वमहो जीवरक्षणे ।
सभासमक्षमादिष्टं, गुरुणा हेमसूरिणा ॥६॥

१. अड उद्यमे । अल- उद्यमं कुरु ॥

तातेन कथितं वत्स!, लिख लेखं मदाज्ञया ।
[१]न तेन लिखितो लेखः, पितुराज्ञा न लोपिता ॥७॥

१. नतेन- नम्रेण ॥

शरीरं विगताकार-मनुस्वारविवर्जितम् ।
यदिदं जायते रूपं, तत्ते भवतु सर्वदा ॥८॥ श्रीः ॥

आलिङ्ग्य मन्दिरे रम्ये, [१]सदानन्दविधायिनि ।
कान्ता कान्तं कुरङ्गाक्षी, कुम्भिकुम्भपयोधरा ॥९॥

१. असत्- अक्षिपत् गृहमध्ये ॥

मधुमत्तमयूरस्य, प्रस्थे माल्यवतो गिरेः ।
सीताविरहसन्तप्तं, रामं मुहुरमूमुहत् ॥१०॥ (सीता)

त्वमिह रुचा[१] मदनसखो, लड[२] भीतिप[३] डीन[४]विविधबहुविहगे ।
सरसि सरोरुहसंचय-विलम्बिरोल[५]म्बरमणीये ॥११॥

१. कान्त्या कामसदृशः । २. लल- क्रीड, क्रीडां कुरु । ३. हे भीतिप!- हे राजन् । ४. लीना विविधा- अनेके बहवो विहगाः- पक्षिणो यत्र- यस्मिन् । ५. रोलम्बाः- भ्रमराः ॥

अम्ब[५]रमम्बु[११]नि पत्र[९]मराति[८]:*, पीत[६]महीन[+]गणस्य[७] ददाह[१६] ।
यस्य[४] वधू[१२]स्त[१४]नयं गृह[१०]म[७]ब्जा[१३], पा[३]तु स[१] वो[२] शिवलोचन[१५]वह्निः ॥१२॥

स कृष्णो वो- युष्मान् पातु, यस्याऽम्बरं पीतं, यस्य गृहमम्बुनि, यस्य पत्रं- वाहनं अहीनगणस्याऽरातिर्गरुडः, यस्य वधूरब्जा- कमला, यस्य तनयं हरलोचनवह्निर्ददाह ॥ इति सुभाषितरत्नभाण्डागारे टिप्पणम् (१८९-८५)।* अरातिर्गरुडो वाहनम्। + नागगणस्य।

*ज्येष्ठो[६] +मासो[७]ऽनुगा[८] शय्या[९], **कम्बलो[५] यस्य[४] शं[१]ङ्क[२]रः ।
इतिः स्तात्[३] Δबाण[११]जन्मेश-पिता पुत्रो[१२] विनायकः[१३] ॥१३॥

* वर्तते । + मा - लक्ष्मीः । ** कं- जलम् । Δ बाणजन्मा- उषा, तस्या ईशः- अनिरुद्धः, तस्य पिता प्रद्युम्नः, स एव पुत्रो यस्य वर्तते इति सर्वत्र ॥

अहं च देवनन्दी च, कुशाग्रीयधियावपि ।
नैव शब्दाम्बुधेः पारं, किमन्ये जडबुद्धयः ॥१४॥ (न ऐव)

एहि रे रमणि! पश्य कौतु*कं, धूलिधूसरमुखं दिगम्बरम् ।
साऽपि तद्वदनपङ्कजं पपौ, पूर्वमुक्तमपि किं न बुध्यसे ? ॥१५॥

* तुकं- बालम् ॥

पा*मारोगाभिभूतानां(भूतस्य), श्लेष्मव्याधिनिपीडित! ।
यदि ते जीवितुं वाञ्छा, तदहो! शीतलं जलम् ॥१६॥

* पिब ॥

अविवेकिनि पुरुषे यः, करोत्याशां समृद्धये ।
दूरदेशान्तरं गन्तुं, करोत्याशां स मृ*द्धये ॥१७॥

* मृत्तिकाश्वे ॥

श्रीवीरः श्रवणसुखां, संशयहरिणीं स्थितः समवसरणे ।
कामलपदमलरूपिणि, गां गीतारिर्मं*दीनायी ॥१८॥

* न दीनायी - न दीनरूपा ॥

काबेरीतीर-कर्पूर-परागामोदसोदराः ।
रतिखेदलवांस्ते ते, पुरन्ध्रीणां समीरणाः ॥१९॥ (तेऽपुः)

बिम्बाकारं सुधाधारं, मुग्धाधरममुं नरम् ।
अत्र क्रियापदं गुप्तं, मर्यादा *दशवार्षिकी ॥२०॥

* दंशं दशने, दश क्रिया ॥

गौरीपदं नखाकारं, शशिनं शिरसा दधौ ।
इहैव गोपितः कर्ता, दत्तः षाण्मासिकोऽवधिः ॥२१॥

(गौरीप दन्नखाकारं ?)

केष्ठामानगजायुक्ता, वार्चवीश्वरगोजगाः ।
शं वो ददतु काजेशा, वेदेलास्वर्धुनीधराः ॥२२॥

[1. केष्ठा- के- जले- पद्मे तिष्ठतीति, सावित्रीत्यर्थः, 2. मा- लक्ष्मीः, 3. नगजा- गौरी, 4. वार्चः- हंसः, 5. वीश्वरः- गरुडः, 6. गोजः- वृषभः, 7. कः- ब्रह्मा, 8. अजः- विष्णुः, 9. ईशः - शङ्करः ॥]

पिबतस्ते शरावेण*, वारि कल्हारशीतकम् ।
केनेमौ दुर्विदग्धेन, हृदये संनिवेशितौ ॥२३॥

* हे एण!

गोसहस्रस्य पुत्रेण, गोसहस्रसुतो हतः ।
रुदितं गोविहीनेन, गो गता मे सुतस्य भोः ॥२४॥

गोगणैः पीड्यमानोऽसौ, गोसहस्रसुतो हतः ।
गोरसं पातुमिच्छामि, गोभिर्यच्च न दूषितम् ॥२५॥

सूदारा उलपालिमेखलतटी कच्छोटजान् बिभ्रती
पूता रेभरडीननीलजसभा नागीव पातालगा ।

---

1. **उलपानि** - हरिततृणानि, तेषा**मालिः**- पङ्क्तिः; सैव **मेखला**- काञ्ची यस्यास्तद्विधा **तटी**- भृगुर्यस्याः सा, तथा **पूता**- पावना, तथा **रेभः**- शब्दः, तं **राति**- अङ्गीकरोति इति **रेभरा**- सशब्दा, मुखरा इत्यर्थः, तथा **लीनानां**- एकान्तगतानां **नीरजानां** पङ्क्तिस्थानां, हंस-चक्रवाक-कलहंसादीनामित्यर्थः, **सभा**- परिषत् यस्याः सा तथा, **खाधः**- अम्बरादधः, **नागीव पातालगा**- भोगवती इत्यर्थः, तथाऽ**जो**- ब्रह्मा, **कालियारिः**- हरिणव्याधो रुद्रः, **तैः समं**- सहैव, युगपदित्यर्थः, **पीडिता**ऽवगाहितेत्यर्थः, तथाऽ**मा**- मीयते इति मा, तद्विरुद्धा, इयत्ताशून्येत्यर्थः, **अमोघो**- नेतृणां मोक्षप्रद **ओघरव**- स्रोतोध्वनिर्यस्याः सा तथा, एवंगुणविशिष्टा **मन्दाकिनी**, **सूदारा**- सुतरामुदारा, **वो**- युष्माकं, इति शेषः, **अघवारणपदं**- अघवारणस्य पदमवस्थितिं, **क्रियात्**- करोतु, यद्वा, **वो**- युष्मान्, **अघवारणपदं**- अघवारणसमर्थान् इत्यर्थः] (सुभाषितरत्नभाण्डागारे टिप्पणम् - १९३/९३) ॥

खाधोऽसावजकालियारिहरिणव्याधैः समं कर्मसी(पीडिता-)
मामोघौघरवाघवारणपदं मन्दाकिनी वः क्रियात् ॥२६॥
जिन! त्रिजगतः पूज्यः, मुदा त्वां सत्क्रियावॅलीः ।
अत्र गुप्तक्रियाकर्तृ-विज्ञाने वार्षिकोऽवधिः ॥२७॥

* आवट्- आययौ । ईः- लक्ष्मीः ॥

निरन्तरमवन्त्वेते, वोऽवो* धर्मपरायणान् ।
अत्र कर्तृपदं गुप्तं, विलोक्यं सुविचक्षणैः ॥२८॥

* अवः- अर्हत्-सिद्धा-चार्योपाध्यायाः ॥

केशाः कजालिकासाभाः ओकारारिपिनाकिनः ।
विविगोगतयो दद्युः, शं वोऽब्जाम्बुनगौकसः ॥२९॥

विनिर्जितत्रिपूणीह, यशांसि यदि वाञ्छसि ।
तदा सुभटरोमाञ्ची-शतपत्रमटेरणं ॥३०॥

गोकर्णराडाभरणं[1] यदीयं, यद् गव्यहव्यादजमाददाह[2][3] ।
कुम्भेनचूडामणिरायुगान्तं[4][5], पायादपायादुरगात्मजार्धः[6][7] ॥३१॥

[1. वासुकिः, 2. गव्यहव्यादः- वह्निः, 3. कामदेवं, 4. कुं- पृथ्वीं, 5. नक्षत्रपतिश्चन्द्रो मुकुटो यस्य सः, 6. उः- शिवः, 7. अगात्मजा- पार्वती, साऽर्धं यस्य सः ॥ (सुभाषितसुधारत्नभाण्डागारे)]

दूरं नर्मदयात्रपावनरतामार्त्तार्घनाशोच्चया-
हंसाली कमलं विलोक्य तमसाविद्रागमत्वाविलम् ।
कासेनाऽऽकुलितासनोभवतया शक्त्यामयी तत् कथं
जायेत स्पृहयालुरेतदधिकः कौ नौ भवत्यादरः ॥३२॥

॥ इति विषमव्याख्याकाव्यानि क्रिया-कर्तृ-कर्मगुप्तानि ॥ शुभं भवतु ॥

* * *

श्रीअक्षयचन्द्र वाचक पर प्रेषित एक लेखपत्र

– मं. विजयशीलचन्द्रसूरि

अेक नूतन उन्मेष धरावतो अने विज्ञप्तिपत्र-साहित्यमां अलग भात पाडतो न्यायचर्चाथी सभर पत्र अत्रे प्रकाशित थई रह्यो छे. पत्र कृष्णदुर्गथी लखायो छे अने विक्रमनगर(-बिकानेर) पहोंचाडायो छे. मूळ पत्रनी नकल करनार व्यक्ति द्वारा पत्र लखनार अने पत्र मेळवनार मुनिराजोनां नाम काढी नंखायां छे. नकल करायेला पत्रोमां आ अेक साधारणपणे जोवा मळती बाबत छे अने अनुसन्धानमां आवा अनेक पत्रो आ पूर्वे प्रकाशित थई चूक्या छे. जो के प्रस्तुत पत्रना अन्ते वाचक श्रीअक्षयचन्द्रजीनी प्रशंसा करतो श्लोक सचवायो होवाथी, पत्र तेमना पर ज लखायो हशे तेनुं अनुमान करी शकाय छे.

पत्रलेखके पत्रमां सौप्रथम गुरुतत्त्व अने धर्मतत्त्व, देवतत्त्व साथे सम्बन्धित होवाथी पूजनीय छे तथा सिद्ध भगवन्तो करतां परोपकृतिनी अपेक्षाअे अरिहन्त भगवन्तो वधु शक्तिसम्पन्न गणाय ते तर्कसरणिथी सिद्ध करी आप्युं छे.

त्यारबाद पूर्वपक्ष द्वारा अेक दीर्घ शङ्कानो उपन्यास थयो छे. समग्र शङ्कानो भाव अे छे के तीर्थङ्करो जो सकलशक्तिसम्पन्न होय अने परोपकाररसिक होय तो अे आपणने केम संसारनां दुःखोमांथी छोडावता नथी ? अने अेमनी शक्ति जो आपणो, अनार्योनो, नारकीना जीवोनो, निगोदनो - कोईनो पण उद्धार करवामां समर्थ न होय तो अेमने 'परमेश्वर' केवी रीते गणाय ?

उत्तरपक्ष द्वारा आ शङ्कानुं न्यायोचित समाधान अपायुं छे के आपणी अपात्रताने लीधे ज तीर्थङ्करोनो पुरुषार्थ विफल बने छे. वास्तवमां तो अरिहन्त भगवन्तो कोईनी पण उपर सीधो उपकार नथी करी शकता. ए तो तरवाना - छूटवाना उपायो देखाडे छे. जे अे उपायोने अपनावे छे, ते तरी जाय छे. जे नथी अपनावता ते डूबी जाय छे. तीर्थङ्करोनुं कर्तृत्व अे खरेखर तो करणकर्तृत्वमां ज पर्यवसित थाय छे. तीर्थङ्करो तो मेघनी जेम बधे ज अेकसरखी धर्मदेशनानी वृष्टि करे छे. पण कोईक, जवासानी जेम, अे वृष्टिमां पण सूकाई जाय तेमां अे वृष्टि करनारनो शो दोष ?

अनार्य देशमां तीर्थङ्करो पोते न गया अने त्यां धर्मदेशना न आपी ते पण तेमनी परोपकारबुद्धि ज हती ते वात पण अत्रे सरस रीते समजावाई छे.

अन्ते, पत्रलेखके गुरुभगवन्तने वार्षिक वन्दना निवेदित करीने अने तेमनी स्तुति करीने पत्र समाप्त कर्यो छे.

*

लेखविशेष:

नम: श्रीप्रवचनमहाराजाधिराजाय ॥

स्वस्ति श्रीमत्तीर्थकरपरमेश्वराय । न खल्वेतं विना कश्चिदपरोभयि-(?भजि?)तुं शक्योऽस्ति । अथवा साध्विदमुच्यते –

स्वर्गे नन्दतु कामितामितरुचा वृन्दारकाणां गण:
क्ष्मापीठे विलसन्त्वलं युगलिनस्ते ते च चक्र्यादय: ।
पाताले प्रविराजतां फणिपते: पर्षत्तथाप्युच्चकै:
श्रीवामेय! यदि त्वदूनमखिलं पालालभूतं जगत् ॥१॥

अथैवं तदा गुरु-धर्मावपि कथं प्रमाणीक्रियेते ? । मेति कश्चिद् ब्रूयात् । तीर्थकरपरिवारत्वेन तदभिमतधनत्वेन च कृत्वा क्रमशस्तयोस्तस्मिन्नन्त-र्भूतत्वात् । ततश्च जैनोऽयं पन्था इति सिद्धम् । जिनस्याऽनादिसंसारमलनिर्जेतुरिति सम्बन्ध-विभक्त्यर्थेऽण्प्रत्यय: । न ह्यत्र श्रमणादय: पृथग् ज्ञापिता भवन्ति । जिनग्रहणेनैव तेषां ग्रहणात् । मूलोपादाने शाखासमुपादानवत् । न च मूलमप्यन्तरेण शाखा भवेयु:, भवने वा नवीनाङ्कुरप्रादुर्भावनाऽसामर्थ्यात् तासां प्रकटवैफल्यप्रसक्ते: ।

न च वाच्यं परमेष्ठिमन्त्रे गुणोत्तरवृद्ध्या सर्वगुणप्रधाना: साधव एवाऽतस्त-द्ग्रहणमुचितमिति । अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसाधूनां यथोत्तरं गुणहानिदृश्यमानत्वात् । अथ 'हा ! सिद्धानामाशातनाकर्त्तारो भवन्त' इति चैन्मैवम् । भगवत्सिद्धान्तस्या-ऽनन्तनयमयत्वात्, परोपकारकरणाऽपेक्षयाऽर्हद्भ्य: सकाशात् तथाविधशक्तिहीना: सिद्धा भवन्ति । नहि सिद्धजीवानां वपुर्वा वचो वा मनो वा प्राप्यते । नापि वपुर्वचोमनोभ्य: पृथगेक दु:खिजनतोपकृतिर्विधातुं शक्यते, बादरदृष्टित्वेन कीटकप्रायत्वाज्जन्तूनाम् । अथवा साध्विदमुच्यते –

चेतोभिर्लवसप्तमामरमन:सन्देहनिर्वापको
वाग्भि: श्रोतृजन:(न)प्रकाशपटुतापावित्र्यचिन्तामणि: ।

निश्शेषातिशयैः समृद्धवपुषा नेत्रोत्सवः पश्यतां
सर्वेणाऽपि शिवङ्करोऽसि भगवन्! स्याद्वाददीपात्मकः ॥१॥

ननु सोऽत्र तीर्थकरो नास्ति अस्ति वेति वाच्यम् । नास्तीति चेत्, न। देवासुरनराणां तत्पूजायां साक्षात् प्रवर्तनात् । न खल्वविद्यमानः कश्चित् पूजयितुं शक्यते । अस्तीति चेत् । साधारणो विशेषितो वा ?। साधारण इति चेत्, तस्य सर्वोत्कृष्टताख्यातिव्याघातः । न च लोके सामान्योऽपि महिमानमाप्नोति । अथ विशेषित इति, तदा सर्वज्ञोऽसर्वज्ञो वा । असर्वज्ञ इति चेत्, तदयुक्तम् । कथमन्यथा "केवलवरनाणदंसणे समुप्पण्णे" इति वाक्यश्रवणं स्यात् ?। सर्वज्ञ इति चेत्, परदुःखान्यसौ हर्तुमलं न वा ?। नेति चेद्, वञ्चितं जगत् । को हि नाम स्वार्थसिद्धिं विनाऽप्यपरं सेवेत ?। कथं वा "तिन्नाणं तारयाणं बुद्धाणं बोहयाणं" इत्यादिपदसमाधिलाभः ?। अथ दुःखहर इति चेद्, देशतः सर्वतो वा ?। देशत इति चेद् अवान्तरसामान्यतैवाऽस्य । दृश्यन्ते च द्रविणारोग्यादि-दायिनोऽत्रापि बहवो देवाः । तथा च सति "नमोत्थु देवाहिदेवाणं" इत्यादेर्विफलता स्यात् । सर्वदेवेभ्योऽधिकं दीव्यन्तीति देवाधिदेवा इति निरुक्तिसिद्धेः । सर्वत इति चेत्, अद्याप्येते वयमनादिसंसारि(र)कान्तारेऽपि कथं पर्यटामः ?। यदि नाम प्रत्यक्षमस्मदादीन् पीडितानपि जानन् पश्यन्नसौ नहि सुखयितुं प्रभवति, तदा "अयमेव जिनो देवस्त्रैलोक्यपरमेश्वर" इत्यादेः फल्गुतैव काचित् । नहि स्वयं दरिद्रोऽपि 'धनपाल' इति लोकैराहूयमानस्तात्त्विकं धनपालत्वमापततीति।

अथ निजत्वापेक्षया तत्समाधिरिति चेद्, 'आत्मेश्वर' इत्येतावतैव योग्यता स्यात्, किमर्थं पुनः परमः प्रकृष्टश्चासावीश्वरः समर्थश्च इति भ्रान्ति(न्त)शब्दप्रयोगः ?। न च गृहमात्रेश्वरस्य नगरेश्वरत्वं श्रूयमाणं भवतीति ।

अत्र प्रतिविधीयते – यदेतदनन्तानामेव प्राणभाजां नरकनिगोदादिभव-भ्रमणदुःखजालं तत् तेषामेव तथाविधस्वयंसिद्धस्वभावदूषणं, अप्राप्तसामग्रीकत्वे-नाऽपात्रत्वात् । अथवा साध्विदमुच्यते –

न हि तीर्थकराऽदृष्टं किञ्चनाऽप्यत्र भावि मे ।
योग्यताना(म)न्तरेणापि किञ्चनाप्यत्र भावि मे ॥१॥

अथाऽस्त्वेवं, तथाप्यस्य मेघस्येव सर्वत्र वर्षणं युज्येत, न च तथा श्रूयते । अनार्यखण्डेषु स्वयमगमनात् साधूनां च तद्गमनप्रतिषेधशासकत्वात् ।

मैवं वोचः । अनार्या हि ये भिल्लपुलिन्दादयः सम्यगपि धर्मशिक्षाप्रदाने केचिद् दृढतरं क्रूराध्यवसायितां श्रयन्ते । यतस्तेषां भावना विलोक्यताम् –

अहो! अस्य कस्यचिद् गर्विणो गतिः (?) ।
यदस्मान् धर्मभाजोऽपि पापित्वे मन्यते ह्यसौ ॥१॥

इति तदभिप्रायप्रचीयमानदौर्गत्यावेक्षणदुःखितो भगवान् 'मा भूयादेतेषाममङ्गल'मिति कृत्वा सदसत्परीक्षाचर्चावितरणं वारयति । न चाऽमृतदधिदुग्धपानेऽपि सर्पस्य निर्विषतेति श्रद्धातुं पार्यते । नापि गङ्गासिन्धुरोहितादिनदीविमलजलपूर्यमाणोऽपि लवणोदधिर्मधुरतामुररीकरोति । अत एव सिद्धान्तः – "चउद्दसपुव्विस्स सम्मसुयं अभिन्नदसपुव्विस्स सम्मसुयं तओ परं भिन्ने भयणा" इत्यादि । स्वाधीनप्रकृतित्वात् सर्वेषाम् ।

अपि च श्रूयतां – नहि किञ्चिदपि द्रव्यं द्रव्यान्तरस्य कर्तृत्वयोग्यं भिन्नावगाहत्वात् । दृश्यन्ते च तीर्थकरास्मदादयः प्रत्यक्षभिन्नाः, तता(तः) कथममुना तारयितुमेव शक्याः ? । अथवा साध्विदमुच्यते –

जागृहि सोदर! सत्वर-मधुनेति त्वदपरेषु मा मुह्यः ।
भ्रान्तैर्वा सिद्धैर्वा किमेव कार्यं तवाऽत्वत्वैः ॥१॥

विरमसि चेत्त्वं परत-श्चेतनया किं तदा तव भ्रान्तम् ।
रमसे यदि गृ(ग्र)थिलात्मा भवदर्थे किं तदा सिद्धम् ॥२॥

सिद्ध्यति चैवं परमेश्वरस्य भव्यशुक्लपाक्षिकसंज्ञिधीरपुरुषपर्षत्पोषकत्वमुपायत्वात् । न पुनः कर्तृत्वात् । तारयतीति तारकः । धर्मं ददातीति धर्म[द] इत्यादयः पर्यायाः करणकर्तृत्वप्रसिद्धा ज्ञेयाः । करणस्याप्युपचारतः कर्तृत्वापत्तेः । ततश्च करणं साधनमुपाय इत्यनर्थान्तरम् । तदेतद् यथाऽपरस्वभावमेवोपकरोति अखण्डं वर्षत्यपि धाराधरे यवासादीनामुष्णयोनिकत्वेन बाधाया दर्शनात् । न च मेघस्तद्रिपुरिति वक्तव्यो भवति । गिरिगहनवननगरग्रामादौ तुल्यं तस्य वर्षणात् । अथवा साध्विदमुच्यते –

प्राप्ते वसन्तमासे ऋद्धिं प्राप्नोति सकलवनराजी ।
यन्न करीरे पत्रं नाऽयं दोषो वसन्तस्य ॥१॥

दृश्यं च महाराजस्य चरित्रं –

मादृक्षेऽपि यदेतेषां प्राणिनामस्ति दुर्दशा ।
हा! धिग्मामित्यसौ स्वामी दीर्घं खिद्यति सर्वतः ॥१॥
कृतकर्मविपाकाग्नि-र्दहत्येतान्ननारतम् ।
पश्यताऽपि मया हाहा! केनाऽहं त्रिजगत्पतिः ? ॥२॥

इत्येवमालोकयतस्तस्य का नाम तदपराधवृत्तिः! । न ह्यतिविज्ञयशस्विवैद्यस्य रोगिजनाऽगृहीतभेषजत्वे 'कुतस्तनोऽयं वैद्य' इति ख्यातिराधेया स्यात् । अतः कथञ्चिदनादिघोरतरान्धकारमिथ्यामलविगमनिर्देशकं जगज्जीवराजीवजीवातुसंज्ञितं केवलिदेवं प्रतिपद्य प्रमोदामहे वन्दामहे च । इदानीमभिज्ञाभिप्रायान्तरमपि प्राप्तव्यम् । तच्चेदं –

श्रीविक्रमनगरे कपिलोलूककणादबृहस्पतिशाक्यशिवभूतितरुसाङ्ख्य-वैशेषिकनैयायिकचार्वाकबौद्धबौढिकस्वविषफलसमास्वादपराङ्मुखप्रवृत्त्युद्भूताऽमृतार्ण-वोल्लोललीलोपमसर्वनयावतारस्याद्वादरसप्रवचनवचनवीक्षादक्षप्रेक्षापरीक्षिता(त)निज-तत्त्वानन्दपदपदवीसंप्रापणोत्सवसदुपायपरिचर्यापराणां तथाविधपण्डितमण्डल-मण्डनवराणां श्रीमच्छ्री -------- विगततन्द्राणां चरणजाहमुपगम्य हर्षोत्कर्षाद् वार्षिकवन्दनाविज्ञापनाय **कृष्णदुर्गस्थ** ----- प्रभवतीति । एतावतैवाऽस्माकं कृतकृत्यत्वात् । कथमिति चेदेते ब्रूमः - सम्यक्त्वफला हि ज्ञानमहतां महती मतिः सङ्गतिर्वा । अथवा साध्विदमुच्यते –

नानारूपविकल्पजल्पविपिनप्लोषानलः केवलं
सम्यक्त्वामृतसागरोज्ज्वलकलाकल्लोलकोलाहलः ।
साम्यानन्दपदप्रवेशनपटुः सर्वत्र नः सर्वदा
भूयादक्षयचन्द्रवाचकपदाम्भोजप्रसादोदयः ॥१॥

जयति जिनराज इति ॥

* * *

वाचकश्री-सकलचन्द्रगणिरचितं
गणधरप्रबोध-श्रीवर्धमानस्तवनम्

— सं. विजयशीलचन्द्रसूरि

१६मा-१७मा शतकनां घणां वर्षोमां पथरायेलो सत्ताकाळ धरावता वाचक सकलचन्द्रगणिनी आ एक अप्रगट रचना छे. भगवान महावीर द्वारा, तेमना ११ गणधर इन्द्रभूति गौतम आदिने, तेमना पृथक् पृथक् ११ संशयोना निराकरणपूर्वक, प्रतिबोध अने दीक्षा थयां तेनुं वृत्तान्तवर्णन आ ४८ कडीनी रचनामां थयुं छे. तेना ४८मा त्रिभङ्गी अथवा हरिगीत-प्रकारना पद्यमां कर्ताए पोतानुं नाम आलेख्युं छे, साथे पोताना गुरु विजयदानसूरिनो पण उल्लेख कर्यो छे. आ रचनानी प्रति चाणस्माना जैन सङ्घना 'नित्य विनय जीवन मणिविजय ज्ञानभण्डार' (क्र. ९६५)मांथी प्राप्त थई छे. प्रति २ पानांनी छे. प्रान्तभागे सं. १६१६मां लख्यानी नोंध छे, जे परथी कर्ताना सत्ताकाळमां ज ते लखायेली छे तेम समजाय छे. कर्तानो स्वहस्त होय तोय ना नहि.

*

सो सुत तिसला-देवि-सतीनो, जस पद पूजइ रमणि[1] सि(स)चीनो ।
जस तणु सुभगो विगत[2] जरीनो, राजहंस जो कृपा-नदीनो ॥१॥
जो महिमा-कल(कुल?)नृपति-खजी[3]नो, सोषक जो मिच्छत्त-मतीनो ।
जिण परमाद कीउ न घटीनो, सोइ वीर मि ध्यानि कीनो ॥२॥
वर्धमान जिन त्रिजगधणीनो, ध्यान धरी करि पातक रीनो ।
जो समतारसपानि पीनो, मनवंछित जस नामि सीँनो[4] ॥३॥
जो जिन-मुनि-ध्यानार्णव-मीनो, जस गति वायु चरइ सुखडीणो ।
जो प्रभु विचरिउ देशि अदीनो, मूरत्ति जस अमृतरस थीणो ॥४॥
जो अतिशय गुणरयण न दीनो, जस नादिं जीतु सुरवीणो ।
अकल रूप हइ जो सामीनो, तस ध्यानिं मम पातक खीणो ॥५॥
जस दंसणि जन ईति[5]-विहिणो, सुगुरु भयो जो सम जोगीनो ।
सालतरु-तलि झाणि सीनो, तेणि ध्यानि प्रभु केवल[6] लीनो ॥६॥

खिणु उपदेस तिहां प्रभु दीनो, अचरजु तिहां प्रभु लाभिइं छीनो ।
दश दो जोयण निशि चलिआ ए, पगडिइ माझि अपापा पाए ॥७॥
समवसरणि बेइठ सुरि कीनो, राजति जइसो मुगटि नगीनो ।
धर्म सुणि भविजन जिन लीनो, जाणति सर्वणि अंमृत पीनो ॥८॥
दुंदही वाजइ मधुरउ तीनो, अभविक मुगसेलु नही भीनो ।
वात चली आयु सबबेदी, भव अणंतका संसय छेदी ॥९॥
सुरविमाण अंबरिथी आवइ, यगनिवाड छोडी सब जावइ ।
गौतममुख माहण सबु खीजइ, सुर स्यूं कोप कीइं स्यालीजइ ॥१०॥
एणि जिनि जाणपणुं हम छीजइ, ऊठी चलउ ऊसपति पाडीजइ(?) ।
चउच्यालां शत माहण मिलीआ, उसमांथी धुरि गोतम चलीआ ॥११॥
छोत विविध बोलइ बरुदाली, जिनरिधि देखि चली पगि खोली ।
हा! अविचार करी हुं आयु, अब क्युं जावति आप छपायु ॥१२॥
तब मधुरी झुणि सांइ बोलायु, इंदभूति गोयम सुखि आयु ? ।
चमकिउ क्युं मो नामिणिइ जाणिउ, बूझूं हुं छूं तिजग-पिछाणिउ ॥१३॥
उ सब जाणपणुं तउ छाजइ, जु मुझ चित्तकु संसय भाजइ ।
तब तिभुवणकउ राजा बोलइ, तीन भुवन हरखि शिर डोलइ ॥१४॥
मुझ तुझ गोयम संसय सूझइ, जीव नही..... ।
....., एही पद जीवसत्ता दूझइ ॥१५॥
ढाल ॥ आसाउरी ॥ रामगिरी अधरस देसाख ॥
वीर मधुरी वाणि बोलइ इंद्रभूति सुणो, वेदपद विपरीत म भणो ।
समउ अरथ सुणउ, वेदपद 'ददद' दमो दानं दया अरथ घणो ॥१६॥

वीर मधु० ॥

विज्ञानघन ऊपजी आपइं पंच भूत थकी ।
पंच भूत विणासि विणसइ इसी वेद फेंकी ॥१७॥ वीर० ॥
एणि पदि संसय पड्यो तुं इंद्रभूति सुणे ।
आ(अ)त्थि जीवो जाणि लख्यणि चेता(त)नादि गुणे ॥१८॥ वी० ॥
पुण्यपापहतणु भाजन जुरी जीव नही ।
तु किस्यानइं यागमुखं शुभ क्रिया तिंही कही ॥१९॥ वी० ॥

इति सूणी गोयम पबूधो पंचशत सार्थि ।
दीख दीधी सूरिपद दइ वीरजिन हाथिइं ॥२०॥ वी०॥
लोकपाल कुबेर दीनां धर्मउपगरणं ।
यतनस्यूं जइ यति न धरइ होसइ अधिकरणां ॥२१॥ वी० ॥
सुणी आयु **अग्निभूती** तिम ज गर्व धरी ।
वालस्यूं हूं निज सहोदर तर्कवाद करी ॥२२॥ वी० ॥
तिमज वीरि बोलाइ लीनो "कर्मसंदेही" ।
कर्म रूपी जीअ अरूपी बंध गति केही ॥२३॥ वी० ॥
वीर भासइ सुखदुक्खादिक जीव बहू भांती ।
कर्म विणु ए केणे चितरिउ राखि मति जाती ॥२४॥ वी० ॥
परिवारस्यूं बूझवी दीख्यो **वायुभूति** सुणी ।
"सोइ तनु सो जीव" संसय भाजि त्रिजगधणी ॥२५॥ वी० ॥
नीरथी पंपोटे[२०] परि सो देहथी ऊपजी ।
इस्यूं ज तूं चिंति जाणइ कुमति तिं इह भजी ॥२६॥ वी० ॥
जीव इंदिय गया पूठइं विषय चिंत धरइ ।
देहथी जु गयु इंदिय पुरुष किम समरइ ॥२७॥ वी० ॥
तिमज सो परिवारि दीख्यो **विगत**[२१] सुणि आयु ।
"भूत इह उर[x] नहीं" जाणुं सून्य जग भास्यु ॥२८॥ वी० ॥
विगत सुण तिं झूठ बुझो भूंति[२२] जग भरिउ ।
चंद रवि प्रमुख देखह प्रतखि[२३] पांतरिउ[२४] ॥२९॥ वी० ॥

ढाल ॥ राग गुडी ॥ तिमतिम समकितधर थोडिलउ ए ढाल ॥

भावि पटोधर वीरनो, सामि **सुधर्मा** मुणिंद ।
समवसरणि जब आवीउ देखि[२५] सुर नर इंद ॥३०॥ भावी० ॥
वीरजिणिंदि बोलावीउ, ए संसय तुझं जोइ ।
"एणि भवे देहिअ जे जस्यो; सो परि भवि तिम होइ" ॥३१॥ भावि० ॥
काज हुइ कारणसमूं, यंम[२५] जवथी जव होइ ।
सालि थकी जव किम होइ, मुझ उर भ्रंति न कोइ ॥३२॥ भावि० ॥

[x] ओर-अन्य-बीजुं ।

प्रभु कहइ बंध छइ जूजूउं, कर्मप्रकृति बहु भेद ।
नारि वली नरपणूं लहइ, ब(चि?)हु गति पलटि वेद ॥३३॥ भावि० ॥
इम बूझवि जिनि दीखीउ पंच सयां परिवारि ।
तब **मंडित** पणि आवीउ, "बंध न मोख्य" विचार ॥३४॥ भावि० ॥
प्रभु कहइ हेतु-सत्तावने देहिं बाधि रे बंध ।
न्यानादिक धरी छोडवि, मुगति कर्म नही बंध ॥३५॥ भा० ॥
प्रतिबोधी प्रभु दीखीउ, अऊठं[२६]सया स्यूं सोय ।
मोरीअपूत बोलावीउ, तुझ मनि "देव न कोइ" ॥३६॥ भा० ॥
रवि विधु बुध ग्रहगण जोउ, समवसरणि पणि देव ।
सो समझावी मुनि कीउ, अऊं[२६]ठसयां करि सेवि ॥३७॥ भा० ॥
"नारक संसय" आवीउ, तोहि **अकंपित** कांइ ।
ते तिहां परवश दुखि पड्या, नारक नावि रे जाइ ॥३८॥ भा० ॥
समझावी व्रत थापीउ, तीन सयां स्यूं सोइ ।
"पुण्य न पाप" संदेहे तुं, **अविचलभायो** जोइ ॥३९॥ भा० ॥
सुकुल सरूप धनायुषो, पुण्य हुइ नही पापि ।
पापि बहु दुखी देखीइ, इम तुं संशय कापि ॥४०॥ भा० ॥
तीन सया स्यूं व्रत धर्यो, **मेतारय** तव आइ ।
"नही परलोक"तुं संसई, जाति मरण किम थाय ॥४१॥ भा० ॥
इम कही सो पणिं बूझव्यो, तीन सयां परिवार ।
विबुध **प्रभास** पधारीआ, "नवि निरवाण" विचार ॥४२॥ भा० ॥
मोष्य करमखय जाणिवो, इम छइ वेदनिं वाँ[२७]कि ।
तु तुझ मनि संदेह को, मुगति छती चित ताकि ॥४३॥ भा० ॥
प्रभु इम कही सो बूझवी, दीख्यो तिशत समेत ।
इम एकादश गणधरा, त्रिपदी लिं श्रुतहेतु ॥४४॥ भा० ॥
अंग उपांग पूरव रची, ऊभा प्रभुपदपंति ।
सुरभि चूरण हरि-थालथी, प्रभु गणधर शिरि दंति ॥४५॥ भा० ॥
गणिपद तीरथ अ[२८]णूंजतां, आणी **चंदनबाल** ।
दीखी बहु नृपकुमरिस्यूं, वरिसइ कुसुम सुरसाल ॥४६॥ भा० ॥

संघ चतुरविध थापीउ, बलि लावि महीपाल ।
इम करतउ वीर ध्याईउ, दुरित हरइं त्रिणिकाल ॥४७॥ भा० ॥
भावइं पटोधर वीरनउ० ॥

इति विगतमोहं विजितकोहं भुवनबोहं पारगं
संसयापोहं कुगतिरोहं जगति सोहं पारदं ।
केवलालोकं नमत लोका वीर पुरुषोत्तमवरं
सिरिविजियदाणमुणिंद सेवक **सकलचंद**शुभाकरं ॥४८॥

इति श्रीगणधरप्रबोध श्रीवर्धमानस्तवनम् ॥ संवत् १६१६ वर्षे फागुमासे शुक्लपक्षे पूर्णिमायां तिथौ लिखिता ॥

केटलाक कठिन शब्दो

१. रमणि-पति, सची-इन्द्राणी : इन्द्राणीनो पति-इन्द्र । २. विगत-रहित, जरी-जरा । ३. खजानो । ४. सिद्ध । ५. उपद्रव । ६. केवलज्ञान । ७. मध्यम अपापा(नगर) । ८. श्रवणे । ९. मगशेल पत्थर । १०. आव्या । ११. सर्ववेदी-सर्वज्ञ । १२. यज्ञनो वाडो । १३. ऊसपति, बृहस्पति (?) । १४. ४४०० । १५. छात्र । १६. पगे खाली चडी गई । १७. छूपाईने । १८. ध्वनि । १९. फक्किका-फाकी-अर्थ (?) । २०. परपोटा । २१. व्यक्त (विशेषनाम) । २२. भूत, पांच महाभूत । २३. प्रत्यक्ष । २४. पांतरिउ (?) । २५. जेम । २६. ३५० । २७. वेदनी वाणी । २८. अणूजतां, अपूर्ण रहेतुं जोईने (?) ।

* * *

श्रीजयवन्तसूरि-कृत
पंचेन्द्रिय गीत

— सं. उपा. भुवनचन्द्र

मध्यकालीन गुजराती भाषाना कविओमां श्रीजयवन्तसूरिनुं नाम अग्रस्थाने छे. 'गुणरत्नाकर छन्द' ए तेमनी ख्यातिप्राप्त प्रौढ कृति छे. तेमने रसकवि कही शकाय. पण तेमनी कविता, एक वैरागी सन्तने शोभे एवी रीते, अन्ते शान्तरसपर्यवसायिनी ज छे. गीत, चन्द्राउला जेवी तेमनी अन्य कृतिओ पण मळे छे. 'पांच इन्द्रियना गीत' ए तेमनी अद्यापि अप्रसिद्ध रचना छे. आनी एक हस्तप्रत अमारा संग्रहना प्रकीर्ण पत्रोमांथी मळी छे. बीजी एक ह.प्र. मुनिश्री सुयशविजयजी-सुजसविजयजी द्वारा प्राप्त थइ छे जेना माटे तेमनो आभारी छुं. प्रथम ह.प्र. वधारे जूनी छे, तेना आधारे प्रस्तुत वाचना तैयार करी छे. बीजी ह.प्र.मांथी पाठभेदो नोंध्या छे.

पांच इन्द्रियोनां पांच गीत एक ज ढाळमां रचाया छे. इन्द्रियोनो क्रम बन्ने ह.प्र.मां जुदो जुदो छे. एकेयमां शास्त्रीय क्रम नथी. प्रथम ह.प्र. प्रमाणे अहीं गीतो राख्या छे. बीजी प्रतमां क्रम आवो छे : कर्ण-नेत्र-नासिका-स्पर्श-जिह्वा.

अन्योक्ति रूपे रचायेल आ गीतोनी भाषा सरळ छे. थोड़ा कठिन शब्दोना अर्थ नोंध्या छे. जूनी ह.प्र.मां जयवन्तसूरि कृत एक हरियाळी पण अन्ते लखेली छे ते पण अहीं लीधी छे. आ हरियाळीनो ऊकेल छे - ओघो / रजोहरण ।

*

१. कर्णेन्द्रिय गीत

राग : केदारो गोडी

नेहि रे बांध्या वनि वसुं[१], नवि सही सकुं विछोह;
संसार सार स्वरूप ते, जेह सरिसु जेहनेइं मोह. १
लोधीडा लै, अम्हनइं[२] म करि विछोह
पेली पेली हरिणलीसुं मुज मोह
तोरूं तोरूं हइडलूं कठिन सलोह.[३] [आंकणी०] २

दोहिलु रे विरह वाल्हां तणुं, वर मरण दहइ[५] एकवार;
नितमरण[५] नीसासे करी, कुण जाणइ रे विरहीयां सार. लो० ३
नेहे रे बांध्या हरिणलां, अवगणी जीवित देह;[६]
दीइं[७] प्राण आवी दूरिथी, साचु साचु हरिण सनेह. लो० ४
तस केडि तां छांडि नहीं, जां लगिं मरण धरंति;
अहीं जूओ हरिण ऊखाणलुं, जेह साथि रे जस[८] मन हुंति. लो० ५
पापी रे दोहिलु वेधडो, वेध्यां ते मरइं सुजाण;
जिम गान-गुणइं मृग वेधीया, आपइं आपइं रे आपणडा प्राण. लो० ६
[९]*गीत गुणना वेधीया, मृग दीइं जीवित दान;*
ते हरिण वनवासी भलां, नहीं भलां रे माणस अजाण. लो० ७
मोकलुं इंद्री काननुं, मृग लहइं दुख अपार;
जयवंत पंडित *बूझवइं, टालु टालु रे विषय विकार.* लो० ८

इति कर्णेंद्री गीतं

२. नाशिका गीत

कमलणी वींटी कांटडइं, वली वसइ कादवि कंठि;
तुहि भमर वेध-विलूधडउं, नवि मूंकि रे कमलनी पूंठि. १
भोगीडा लै, भोला भमरा म राचि,
तुं तु बंधाइसि[१] कमलिनी काजि;
तुं तु वेधडइ विलुधडउ आज,
नवि देखइं करतु अकाज. [आंकणी] २
जेह साथि लागु वेधडुं, ते कहोनइं[२] किम मेहलाइं;
सुगुणा साथि मिलंतडां, जे भावि रे ते वली थाइ. भो० ३
जेह साथि जेहनइं नेहडु, ते दोष न गणइं तास;
जूओ कमल भमर तणी परि, रातु रातु रे परिमल वास. भो० ४
नवि गणइं कंटक वेदना, नवि धरइं बंधन दुःख;
अलि कमल परिमल वेधीउं, मानइं मानइं रे मन मांहि[३] सुख. भो० ५
नवि रहइं तु तसु विणु मिलइ, जे साथइं जसु मन होइं;
जे रंग राचइ कमलसुं, वेधिउं वेधिउं रे भमर रस[४] जोइं. भो० ६

अति प्रेमल बांध्यां मांणसां, नवि सकइं छंडी ठाइं;[५]
अति कमल परिमल लोभीउं, जूओ जूओ[६] रे भमर बंधाइं. भो० ७
जूओ नाशिका परवसि वणइं, अति कमल मांहि लुब्ध;[७]
जयवंत पंडित बूझवइं[८], म म थाज्यो रे विषय विलुध. भो० ८

इति नाशिका गीतं

३. स्पर्शनेंद्रीय गीत

राग : मारुमिश्र

ते प्रेम करिणी केरडा, केहा केहा गुण समरेसि;
वन विंझ जल रेवा तणां, सुख समरी रे झूरि मरेसि. १
हाथीडा लै, तुं तु पडीओ पासि,
तुं तु जोइ न जोइ विमासि;
तुं तु भूलु भूलु रे करिणी विलासि. [आंकणी] २
नवि चरइं जल न पीइ वली, वहइ करवत धार;
वन विंझ[१] समरि हाथीओ, मेहलइ मेहलइ रे आंसुडानी धार. हा० ३
लै हाथणीनइं वेधडइं, तइं सहियां दुख अपार;
वन तिजीओ परवसि थयु, दुहिलु दुहिलु रे वेध विकार. हा० ४
कहि दुख समि(म)रिसि[२] केतलां, जूओ चिति लागु वेध;
सवि दुख मूल सनेहडु, दुहिलुदुहिलु रे वाल्हां तणु वेध. हा० ५
जे साथि जेणइं नेह करिओ, तस हाथि वेच्यु[३] तेह;
सुख-दुख सहे तस कारणि, पर दुखइं रे दुखीओ सनेह. हा० ६
जोउ हाथिणी परिवसि थयु, करि सहि दुख अनंत;
कस[४]-घात-बंधन-वेदना, मनि साले रे वेधडु बहुत. हा० ७
श्रीविनयमंडण गुरु सीस इम[५], बूझवइं वचन रसाल;
जयवंत पंडित वीनवइ, इम जाणी रे विषय रस टालि. हा० ८

इति स्पर्शनेंद्रीय गीतं

४. नयनोपरि गीत

धिग् पडिओ[१] पापी नयननि, जस वेधि झूरी मरंति;
जे सुपन मांहि नवि मिलइं, ते देखी रे नेहलु धरंति. १

बापलडां लै, भूलि म भूलि पतंग,
तुं तु रातु रातु रे नयणलांनइं रंगि;
तुं तु भूलु भूलु रे दीवडानइं संगि. [आंकणी] २
जस वेधडइं तुं बलि मरइं, तुझ नेह नाणि तेह;
एक हाथि ताली किम पडइं, नितु झूरिवुं रे एणि सनेह. बा० ३
निसनेह निरगुण परवसइं, अति दुलंभ नइं परि रत;
प्राचीन पाप तणि वसइं, एह सरिसउ रे नेह धरि चिति. बा० ४
झूरी मरइं एक एक विना, मनि अवर न धरइं नेह;
कांइ देव तइं इम सरजीउं, दोहिलुं दोहिलुं रे एक पखो सनेह. बा० ५
कुहनइं रे वेध म लागसु, अति विषम वेध विरूप;[२]
जिम दीप केरइ वेधडइं, वली मरइं रे पतंग सरूप. बा. ६
जस वेध लागु जेहनइं, नवि तिजइं ते तस केडि;
माणसां वेध विलूधडां, पामइं पामइं रे मरण सनेटिं. बा० ७
मोकलु नयण विकारडु, तु दीपि पडइं पतंग;
जयवंत पंडित वीनवइं,[३] म म करज्यो रे विषयनुं संग. बा० ८

इति नयनोपरि गीतं

५. जिह्वा-परवश पोपट गीत

सुणि सगुण सुंदर सूडिला, तुं रहिउ छइ फल आस;
म म देसि मुझ ओलंभडा, तुझ मांडिओ छइ पारधीइं पास. १
पोपटडा लै, जोजे ठाम कुठाम,
रखे पडती[१] वात विराम;
तुं तु आविउ आविउ वइरीडनइ ठामि. [आंकणी] २
फल पाखती छइं कांटडा, चिहुं पासि नांख्या पास;
नितु पारधी पुहुरा करंइ, किम फलसइं रे तुझ मन आस. पो० ३
जे साथि मन हुइ जेहनइं, विण मिलइं किम रहिवाइ;
मन भावतां[२] फल चाखतां, जे भावइं रे ते वली थाइ. पो० ४
जे राखतां फल चाखीइं, ते सरिस सरस न कोइ;
वेध-विलूधां माणसां, सुख-दुख रे हीइडइं[३] न जोइं. पो० ५

जु सहसनयन पुहुरइं पडइं, वली वज्र भींति करंति;
भुंइं लोह कांटा पाथरइं, राता राता रे तुहि मिलंति. पो० ६
जेह चिति जेहना गुण वस्या, तस काजि तेह मरंति;
माणसां वेध विलूधडां, मनि कुहना रे बोल न धरंति. पो० ७
पांजरइं पोपटडु पड्यु, फल लोभि जिह्वा काजि;
जयवंत पंडित बूझवइ, इम जाणी रे विषय म राचि. पो० ८

इति जिह्वा परवश पोपट गीतं

हरियाली

एक नर सरल सौभागी दीसइं, बहुनारी भरतार रे ।
उत्तमि माणस बांहि धरिउ, ते करइ उपगार रे. १
एहनु कवीयण अरथ विमासु, ते कुण नर गुणवंत रे ।
सुरनर तेहनइं भगति मानइं, जिनशासन जयवंत रे. २
को बइसइ गज रथ पालखीइं, कोइ तुरंगमि दीसइ रे ।
कुमरीपणइ पण तेहनी नारी, गाडरि बइठी हींसइ रे. ३
हीरे भर्युं पणि नहीं वयरागर, दंडधर न करइ जोर रे ।
पट्टबंध पणि भूप न कहीए, बांध्यु पणि नहीं चोर रे. ४
सवा हाथ तनुमान अनोपम, जे तस सेवइ भावि रे ।
जयवंतसूरि इणी परि बोलइ, ते सुख संपद पावइ रे. ५

[उत्तर : ओघो / रजोहरण]

पाठान्तर

गीत - १ : १. वसे । २. अमनि । ३. कठोर । ४. दिए । ५. बलण । ६. जीव दीयंति । ७. दि । ८. जे । ९. जे गीत ।

गीत - २ : १. बाध्यइ । २. कहु न । ३. मनना । ४. स । ५. गम । ६. जोउ जोउ । ७. बद्ध । ८. वीनवि ।

गीत - ३ : १. वंझि । २. समरसि । ३. हाथ नीकउ । ४. अंकश । ५. (नथी).

गीत - ४ : १. पडू । २. विलूध । ३. बूझवि ।

गीत - ५ : १. अड़ती । २. भावे । ३. हइड़ि ।

शब्दकोश

विछोह (१/१) वियोग
लोधीड़ा (१/२) शिकारी
तां / जां (१/५) त्यां सुधी / ज्यां सुधी
ऊखाणलुं (१/५) दृष्टांत / न्याय
वेधडो (१/६) ऊंडी प्रीत
वेधीया (१/७) रसिक, वींधायेला
विलूधडउ (२/१) विलुब्ध-स्नेहासक्त
ठाइ (२/७) स्थान
विंझ (३/१) विंध्याचल
पाखती (५/३) आसपास, फरते
पुहुरा (५/३) पहेरो, चोकी

* * *

श्रीसक्तमुनि तथा सा. श्रीजसोदांजीनां गीत

— सं. उपा. भुवनचन्द्र

श्रीसकतमुनि (शक्तिमुनि) तथा साध्वी जसोदांजीना तपोमय-वैराग्यमय जीवननी अनुमोदनानां बे-त्रण गीत प्रकीर्ण पत्रोमांथी मळ्या छे ते जाणवालायक होवाथी अहीं रजू कर्यां छे. आ बन्ने त्यागीजनो पार्श्वचन्द्रगच्छनी परम्पराना छे. राजचन्द्रसूरिना विद्यमानकालमां ऋषि जयतसी पासे दीक्षित थनार सकतमुनिनी जन्मभूमिनुं नाम वसुधापुर होवानुं समजाय छे. पिता जोधासा अने माता जयवंतदे. त्याग-वैराग्य प्रबळ होवाना कारणे जनता पर तेमनो प्रभाव सारो हतो अने एमनी प्रेरणाथी श्रावक-श्राविका वर्गे व्रत-तप आदि घणां करेलां. सकतमुनिए बीकानेरमां अनशन स्वीकारेलुं जे ६२ दिवस चाल्युं हतुं. चोर्यासी गच्छमां तेमनो महिमा थयो हतो. गीतो सं. १६८४मां रचायां छे तेथी सकतमुनिनो स्वर्गवास ए ज वरसे थयो हशे एवी सम्भावना गणाय. गीतना रचयिता ऋ. ठाकुरनी गुरुपरम्परा नीचे मुजब मळे छे : श्रीपार्श्वचन्द्रसूरि-समरचन्द्रसूरि-राजचन्द्रसूरि-जयचन्द्रसूरि-वा. हीरानंदचन्द्र-ऋ. ठाकुर.

सा. जसोदांजीनुं जीवन ज्ञान-चारित्र-तपनी आराधनाथी सभर हतुं एम गीत परथी जणाइ आवे छे. आ गीत ऋ. ठाकुरे रच्युं छे ते पण सा. जसोदांजी प्रत्ये केटलो आदर संघमां प्रवर्ततो हशे ते सूचवी जाय छे.

सकतमुनिजीनुं बीजुं गीत साध्वीजीनुं रचेलुं छे अने तेमना हस्ते लखेलुं मळ्युं छे. आ गीतनी भाषा अने लिपि - बन्ने गरबड़वाळां अने भ्रष्ट छे. ए समयना श्रमणीसंघनी (अर्थात् स्त्रीवर्गनी) शैक्षणिक स्थिति केवी नबळी हती तेनी चाडी आ गीत खाय छे. आ गीत सुधारीने फरीथी अहीं मूक्युं छे.

*

१. सगतमुनि गीत

सहगुरु पाय प्रणमी करी, समरी श्रीजिनराजो रे;
गुण गाउं गरुआ तणा, सीझइ वंछित काजो रे. ०१
सगत मुनिसर वंदसुं, आणी मन आणंदो रे;
भविक कमल प्रतिबोहिया, अभिनव ए गुरु चंदो रे. सगत ०२

वसुधापुर वसतां थकां, संभली सद्गुरु वाणी रे;
संयम लीधउ मन रुचिइं, अथिर संसार ते जाणी रे. सगत ०३
पंच महाव्रत आदरी, वारी विषय विकारो रे;
चारित्र पालइ अति भलउ, जाणिक खं[खां]डा धारो रे. सगत ०४
ज्ञान-ध्यान लीनउ सदा, अरिहंतसउं चित लाइ रे;
सुगति तणी करइ साधना, उत्तम नरभव पाइ रे. सगत ०५
बिकानयरइं विचरता, आव्या ते ऋषिराजो रे;
बासठि दिन अणसण करी, साधइ आतम काजो रे. सगत ०६
कपूरांबाइ कहणइं करी, मइं कीधी ए भासो रे;
ते **ऋषि ठाकुर** सुखीयउ सदा, पामइ वंछित आसो रे. सगत ०७

इति श्रीसगत मुनिसर गीत ।

२. श्रीसकतमुनि गीत

श्री संति जिणेसर पाय नमु रइ, हं मांगं एक पसाव
सकत मुन वंदस्य रइ, म्हारूइ हिडलइ हरख अपार
धरु(?)उं दिन दिनं चढतउ प्रणाम, सकत मुन वंदस्यं रइ
श्री पासचंद गछ दीपता रइ, श्री समरूचंद सू[रिं]द सकत०
श्री राजचंद सूरू गुण भर्‌या रइ, श्रीविमलचंद सूखकार सकत०
श्री जयचंद सूरू गुरू राजीया रइ, जेहनउ अधिक प्रताप सकत०
बालपणइ वइरागीया रइ, मांगइं ह(र)इ उनमत सार सकत०
ले उनमति चारत्र लियउ रइ, ऋषि जयत्तसीजी रइ पास सकत०
जोधासा कुल मंडणा रइ, जयवंत दे कुख रतन सकत०
गांमां-नगर-पुर विचरता रइ, आव्या वीकानइर सकत०
चइतु वद दंसम अंणसांण लियउ रइ, मिलीयउ चित्रविध संघ सकत०
हरजी ऋष पूरांजी वीनवइ रइ, सकत ऋष द्यउ हुं मान सकत०
श्री संघ वलवल वीनवइ रइ, तुम्हे वाचउ सूत्र सीद्धंति सकत०
गामागर पुर वीचरजो रइ, लेज्यो लाभ अनंत सकत०
चउरासी गछ म्हमा कर[इ] रइ, वरतावी आंबार सकत०

सह को लाभ घणउ दीय[इ] रइ, जीवदया प्रतिपाल सकत०
म्हां तइ श्री मल लेख पठावियउ रइ, बाजुजी(?) वड्गा पधार सकत०
इण अर दुसम चमइ रइ, जिन मोटी करणी कीध सकत०
श्रावक नित पोसा करइ रइ, श्रावकणी वहेइ उपधान सकत०
समत सोल चउरासीय रइ, गायउ विकानइरइ सकत०
पूरांजी री सीखणी भणइ रइ, भगतांजी खरी जगीस
सकत मुन वंदस्य रइ, म्हारूइ हिडलइ हर्ष अपार
उरउ दीन दीन चढतउ प्रणाम सकत०

इती ऋषजी सकत मुनीसर गीत संपूर्ण समापत् ।
साधवी पूरांजी तत सीखणी कपूरां लिखते ।

(सुधारेलुं)

श्री शांति जिणेसर पाय नमु रे, हुं मागुं एक पसाय
सकत मुनि वंदस्युं रे, माहरा हियडे हरख अपार
धरउ दिन-दिन चढतां परिणाम रे, सकति मुनि वंदस्युं रे १
श्री पासचंद गच्छ दीपतां रे, श्री समरचंद सूरिंद सकत० २
श्री राजचंद सूरि गुण भर्या रे, श्री विमलचंद सुखकार सकत० ३
श्री जयचंद सूरि गुरु राजीया रे, जेहनो अधिक प्रताप सकत० ४
बालपणे वइरागीया रे, मांगे ही अनुमति सार सकत० ५
ले अनुमति चारित्र लियउ रे, **ऋषि जयतसीजी** रे पास सकत० ६
जोधासा कुल मंडणा रे, **जयवंतदे** कुख रतन सकत० ७
गाम नगर पुर विचरतां रे, आव्या बीकानयर सकत० ८
चैत्र वद दसम अणसण लीयउ रे, मिलीयउ चतुर्विध संघ सकत० ९
हरजी ऋषी पूरांजी वीनवे रे, सकत ऋषि द्यउ बहुमान सकत० १०
श्री संघ वलीवली वीनवे रे, तुम्हे वांचउ सूत्र सिद्धांत सकत० ११
गाम नगर पुर वीचरजो रे, लेज्यो लाभ अनंत सकत० १२
चउरासी गछ महिमा करेइ रे, वरतावी आण रे (?) सकत० १३

सहु कोइ लाभ घणो दीये रे, जीवदया प्रतिपाल सकत० १४
में तो (?) श्री लेख पठावीयउ रे, आजजी (?) वेगा पधार सकत० १५
इण आरे दुसम समय रे, जिणे मोटी करणी कीध सकत० १६
श्रावक नित पोसह करे रे, श्रावकणी वहइ उपधान सकत० १७
संवत सोल चउरासी रे, गायो **बीकानयरे** सकत० १८
पूरांजी री शिष्यणी भणे रे, **भगतांजी** खरी जगीस,
सकत मुनि वंदस्युं रे, माहरइ हियडे हर्ष अपार,
धरउ दिन-दिन चढतां परिणाम रे, सकत मुनि वंदस्यु रे. सकत० १९

३. साध्वी श्रीजसोदाजी गीत

(पंच इंद्री रे अहनिसि वसि करइ - एहनी ढाल)

सतीअ शिरोमणि साहुणिइं, अनोपम गुण भंडारो जी;
प्रहइ उठीनइं रे प्रणमुं हुं सदा, आपइ परम आणंदो जी. १
साध्वी जसोदाजी सीलइं सुरनदी, सतीअ वदइ सहु कोइ जी;
भवियण भावइं रे आणा सिर वहइ, वंदइ छइ कर जोडि जी साध्वी० २
ब्राह्मी-सुदंरि-सीतानी परिइं, ओपम लहइ अभिरामो जी;
नामइं पातक नासइ वेगला, नमतां सिवसुख होइ जी. साध्वी० ३
नवकारसी पोरसि प्रमढ एकासणउ, नीवी अंबिल वासो जी;
छठ तप अंतरि आवइ पारणउं, ल्यइ दोषरहित आहारो जी. साध्वी० ४
पहिलइ पहुरि सज्झाय सिद्धांतनउ, बीजइ धरइ सुभ ध्यानो जी;
त्रीजइ पहुरइं जी करइ गवेषण, चउथइ सज्झाय ज्ञानो जी. साध्वी० ५
संयम सूधउ रे पालइ साधवी, निज(जिन) आणासउं मन लीनो जी;
जयणा पालइ रे सघला जीवनी, समकित साधइ दीवो जी. साध्वी० ६
भवजल तरिवा रे नावा अभिनवी, उलखइ भवियण लोइ जी;
उवज्झाय हीरानंदचंद शिष्य ठाकुर वीनवइ,
तुम्ह नामिइं नवनिधि होइ जी. साध्वी० ७

इति श्री साधवीश्री ५ जसोदाजी गीतं

* * *

मुनि-श्रीउदयसागरजी-कृत
थूलिभद्द-चन्द्रायणा

– सं. मुनि त्रैलोक्यमण्डनविजय

स्थूलिभद्र-कोशा अे दम्पतीनी जीवनगाथा एटली चित्ताकर्षक अने हृदय-सन्तर्पक छे के कविओने अने सर्जकोने सदैव प्रेरित-उत्तेजित करती रही छे. एक तरफ उन्माद गणी शकाय ए हदनो राग अने बीजी तरफ वैराग्यनो एटलो ज तीव्र उन्मेष; एक तरफ आखा जगतने भूली जवा मजबूर करे एवी दुन्यवी प्रेमनी पराकाष्ठा अने बीजी बाजु आखा जगतथी उपर उठावी लेती दिव्य साधना - आवां, विरोधी जणातां अने छतां एकबीजामां गूंथायेलां तत्त्वोथी समृद्ध दाम्पत्यजीवननी ऊर्ध्वगाथाने वर्णवतां अनेकानेक मध्यकालीन पद्यकाव्यो प्राप्त थाय छे. आ काव्य ए एवुं ज एक पद्यकाव्य छे.

सामान्यतः 'चन्द्रायणा, चन्द्राउला' जेवा काव्यप्रकारो मध्यकालीन साहित्यमां विपुल सङ्ख्यामां जोवा मळे छे. पण केटलाक काव्यप्रकारोमां खेडाण बहु ओछुं थयेलुं देखाय छे. 'जैन गूर्जर कविओ'नी समग्र कृतिसूचीमां 'चन्द्रायणा' प्रकारनी फक्त एक ज कृतिनी नोंध छे - जिनेश्वरसूरि(मदनयुद्ध)-चन्द्रायणा. प्रस्तुत कृतिथी अे प्रकारनी उपलब्ध काव्यकृतिओमां एकनो उमेरो थाय छे.

'चन्द्रायणा' अेटले केवो काव्यप्रकार ? ते जाणवानुं कोई साधन जड्युं नथी. पण प्रस्तुत कृतिमां कडीओनुं बंधारण जोतां आ प्रकारनी बे विशेषताओ नजरे पडे छे : १. कडीनी चारे पङ्क्तिमां ४-४ मात्राना ४ गण होय छे, मतलब के दरेक पङ्क्ति १६ मात्रानी होय छे. २. कडीनी दरेक पङ्क्तिमां अन्ते वर्णानुप्रास जळवाय छे. आ बन्ने विशेषताओने लीधे काव्य गवाय त्यारे केटलुं मधुर बनतुं हशे तेनी कल्पना थई शके छे. कविअे पोते 'चन्द्रायणा'ने छन्द तरीके ओळखाव्यो छे अने तेने गावा माटे केदार-गोडी राग दर्शाव्यो छे ते वात पण नोंधपात्र छे.

३९ दूहा + १०९ चन्द्रायणा छन्दनी कडीओ अेम कुल १४८ कडीओ धरावता आ काव्यमां स्थूलिभद्रना जन्मथी मांडीने कोशाने प्रतिबोध करवा सुधीनी घटनाओनुं क्यांक विस्तृत अने क्यांक सङ्क्षिप्त बयान छे. कर्तानुं इङ्गित छे स्थूलिभद्रनो कामविजय दर्शावीने धर्मनी महत्ता सिद्ध करवानुं. पण तेओ ते बाबतमां सहेज पण अधीराई दाखव्या वगर, शतदल कमलनी जाणे एक-एक पांखडी

उघाडता होय तेम, सलुकाईथी क्रमशः घटनाओने उघाडता जईने, कथानकनो विकास करतां रहे छे. कविओ दाखवेलां अने कविने एक 'सिद्धकवि' तरीके प्रस्थापित करनारां पाटलिपुत्र नगर, स्थूलिभद्रनो जन्मोत्सव, स्थूलिभद्रनुं यौवन, कोशानुं सौन्दर्य, स्थूलिभद्र-कोशानो संवाद, ते बन्नेनी सुरतक्रीडा, पिताना मृत्युथी स्थूलिभद्रने जागेलो वैराग्य, तेमना वियोगमां तरफडती कोशानी व्यथा, चातुर्मास पधारेला स्थूलिभद्र मुनिने मोह पमाडवा माटे कोशानो उद्यम अने मुनि द्वारा अपाती हितशिक्षा व. वर्णनो एटलां सुरेख छे, एटलां सुरुचिपूर्ण छे के भावक रसतरबोळ थया वगर रही शके ज नहि.

कवि श्रीउदयसागरजी खरतरगच्छना पण्डित श्रीसाधुधर्मना शिष्य श्रीसहजरत्नजीना शिष्य छे. 'जैन गूर्जर कविओ'मां तेमणे रचेला लघुक्षेत्रसमास-बालावबोध (र.सं. १६७६) विशे नोंध मळे छे. प्रस्तुत कृति त्यां नोंधाई नथी. आनी रचना तेमणे सं. १६६६ना आसो शुदि दशमना दिवसे करी छे. कडी ६६ अने १४७मां कविओ पोतानो नामोल्लेख कर्यो छे. श्रीजिनचन्द्रसूरिजीना राज्यमां प्रस्तुत रचना थई छे. (कडी १४५). कडी १४३मां आवता "सहजरतन्न कहइं सुविचारी" ए उल्लेख उपरथी कर्ताना गुरु श्रीसहजरत्नजीनो पण काव्यरचनामां फाळो होय तेवो सङ्केत मळे छे.

सम्पादनमां उपयुक्त सुवाच्य अने शुद्ध वाचना धरावती ५ पानांनी प्रत पूज्यपाद गुरुभगवन्त श्रीविजयशीलचन्द्रसूरि महाराजना अङ्गत सङ्ग्रहनी छे. प्रत द्वीपनगर(-दीव)मां मरघादे व. श्राविकोना वांचन माटे कर्ताना गुरु श्रीसहजरत्नजी द्वारा लखाई छे.

*

॥ ६०॥ ॐ नमो वीतरागाय ॥

चंद्र-किरण जिम निरमली, सरसति भगवति वंदि ।
थूलिभद्र गुण वर्णवुं, **चंदाइणि** सुभ छंदि ॥१॥

इणि जगि ए सम को नही, सील-रयण-गुण-धार ।
मदन-मान मोडी करी, राख्यउ जस-विस्तार ॥२॥

कुण देसइं कुण गामि हुअ, कवण कुलइं अवतार ।
किणि परि संयम आदर्युं, ते सुणिज्यो सुविचार ॥३॥

॥ ढाल केदार-गउडी रागे ॥

पूरव देस वसइं स-रसाला, **पाडलीपुर** वर नयर विसाला ।
सोहइं घरि घरि तोरण-माला, धज-दंडा सोवन-कलसाला ॥४॥
परिमल धूप-घटी सुविसाला, मंगल धवल भणइं सुगुणाला ।
सोहइं धरमतणी सुभ साला, रंग विनोद करइं वर बाला ॥५॥
वन वाडी उद्यान अटाला, भोगी भमभमइं भमराला ।
रूपइं मदन-समा रतनाला, मदिरा-पान करइं मतवाला ॥६॥
नाटिक रंगि रमइं रस-माला, चउरासी चहुटां चउसाला ।
षट दरसण सेवइं मठ-साला, चोरतणा नवि दीसइं चाला ॥७॥
सुभट धरइं निय करि करवाला, मिलिया झूझ करइं मछराला ।
नगर-तलार भमइं रखवाला, नवि दीसइं विकटा विकराला ॥८॥
दीसइं सरवर जल सरसाला, गंगा नीर वहइं असराला ।
जलचर जीव करालक-चाला, रंगइं केलि करइं मछ-माला ॥९॥
ओपइं मंदिर अतिहिं विसाला, पुर पाखलि पोढी गढ-माला ।
देस-धणी घण रणिहि रोसाला, राजा **नंद** जिस्या नर-पाला ॥१०॥

॥ दूहा ॥

नंदराय सुखीओ सदा, गुण-मणि-रयण-करंड ।
हय-गय-रथ-पायक-धणी, पालइ राज अखंड ॥११॥
मंत्रीस्वरमांहि मूलगउ, महितउ श्री**सिगडाल** ।
लाछलदे लखिमी पवर, घरि घरणी सुकमाल ॥१२॥
तसु कुलि इक सुर अवतरइं, सुर-सुख भोगवि सार ।
घण निरमल पूरव दिसि, जिम दिनकर अवतार ॥१३॥

॥ ढाल - २ ॥

सुतनउ जनम हुओ सुखकारी, गुण-मणि-रोहण निय तनु धारी ।
महितउ राजतणउ अधिगारी, वित खरचइं जगि जन-उपगारी ॥१४॥
रामा रंगसुं कुंकुम रोलइं, मृग-नयणी मुखि मंगल बोलइं ।
सधव वधू सुभ मंदिर धोलइं, जोवा लोक मिल्या सहू टोलइं ॥१५॥

नाचइं सुंदर पात्र सुरंगा, चचपट संपुट ताल तरंगा ।
तत्तत थेईय घन गिनि थुंगा, द्यइं भमरी विचि मोडीय अंगा ॥१६॥
धुधुकटि द्रेंकटि मद्दल वज्जइं, वीणा वंस विचित्र सुसज्जइं ।
सरिगम मपधनि सुसरति वज्जइं, राग करी सवि जन मन रंजइं ॥१७॥
सवि सिंगार समान रचावी, विविधपरिं इम पात्र नचावी ।
द्यइं मन-वंछित दान मनावी, नवि मूंक्या कोई ललचावी ॥१८॥
भोजन **पाडलीपुर** जन पोषइं, श्रीफल पान देई संतोषइं ।
चिर जीवउ सुत इम मुखि गोखइं, **थूलिभद्र** नाम ठव्युं चिति चोखइं ॥१९॥
सुत वाधइं घरि सुख विलसंतउ, हसत मुखउ चालइं चमकंतउ ।
सिरि सोहइं छोगो लटकंतो, चटकंतउ खिण मुखि ठणकंतउ ॥२०॥
घूघरडी पगि घमघमकंतउ, चंचल चतुर चलइं रणकंतउ ।
खींखंतउ पुहवी-तलि पडतउ, मात धवारीय राखि रडतउ ॥२१॥
कोमल कमलतणी पांखडली, अणीयाली आंजी आंखडली ।
पहिरीय सोवननी करि कडली, अंगुलि रतन जडी वांकडली ॥२२॥
माता वलि वलि रूप निहालइं, फूलतणी परिं पुत्र संसा(भा)लइं ।
वरिसे पंचे ठव्यउ नेसालइं, विद्या चउद भणी गुरु-सालइं ॥२३॥

॥ दूहा ॥

लिखित पठित जाणइं कला, आगम अरथ अनेक ।
भणी-गुणी मोटउ थयउ, जोवन-वय अतिरेक ॥२४॥
बालपणा सरिखुं भलुं, एणि नहीं संसारि ।
जब जोवन-मद उपजइं, तव पर-वसि नर-नारि ॥२५॥
तेह ज नर-नारी पवर, बालक मूढ हवंति ।
जव जोवन-पंडित मिलइं, मूरख चतुर करंति ॥२६॥

॥ ढाल - ३ ॥

जोवन वेसि हूओ मन रागी, भोग पुरंदर रूप सोभागी ।
बहुली मदनतणी मति जागी, माया नारितणी मनि लागी ॥२७॥
विचरइं नगर जुइं हरिणाखी, वेधक वेध करइं मुखि भाखी ।
रूपइं मदनतणउ सुभ साखी, नव-रस-सरसतणउ नर चाखी ॥२८॥

लाखीणी तनु नीछ्ट गोरी, पहिरी कनकतणी कडि-दोरी ।
सुकुलीण उरि धिगारव जोरी, सुंदर नारि रमइं चिति चोरी ॥२९॥
आसण भोगतणां चउरासी, जाणइं कोकतणउ अभ्यासी ।
नागर-वंसीय लील-विलासी, जस-करपूर दिगंतर वासी ॥३०॥
जोवत नगर फिरइं सवि टोडइं, वेश्याइं दीठउ मन-कोडइं ।
वांकडली निय मूंछि मरोडइं, इणि जगि एह समउ नहीं जोडइं ॥३१॥
देखीय **कोसि**तणइं मनि भावइं, लोक सहू जसु कीरति गावइं ।
चिंतइं ए नर अम्ह वसि आवइं, सोवन कोडि-गमे विलसावइं ॥३२॥
चिंती वात इसी मनि साची, जोवइं गरवतणइं मदि माची ।
थूलिभद्र पुरुषतणइं गुणि राची, तेडइं निय घर सुंदरि नाची ॥३३॥
विकसिय नयण जुइं सुकुमारा, घूमइं नयनतणी मदि तारा ।
देखीय रूप-रतन्न कुमारा, चंचल-चित्त हुई पण-दारा ॥३४॥
सखि जंपइं "सुणि कोशि! अनाडी, इम नवि दीजइ आपण पाडी ।
सुंदर पुरुषतणां धन ताडी, तुं किम लेइसि रे जग-लाडी ॥३५॥
गणिका-जाति कही निसनेही, लेई सोवन दीजइं देही ।
ए मुझ सीख सुणे गुण-गेही, अम्हथी तुं वलि स्युं ससनेही" ॥३६॥

॥ दूहा ॥

निसुणी वचन सखीतणां, सुगुणी चिंतइं नारि ।
ए दीसइं सवि निरगुणी, न लहइं सुगुण-विचार(रि) ॥३७॥
जोवन-वय घरि पवर धण, वलि मन-वंछित भोग ।
मइं पूरव पुण्यइं लह्यउ, मंत्री-सुत-संयोग ॥३८॥
इणि जगि सुंदर मूढ नर, तेहस्युं न करुं संग ।
गुण विण नवि को आदरइं, सींबलि फूल सुरंग ॥३९॥
इम चिंतवी साहमी गई, सुंदरि भणती नाम ।
आदर करि आसन ठव्युं, रतन-जडित अभिराम ॥४०॥

॥ ढाल - ४ ॥

बइसइं थूलिभद्र आसण-धारा, सुंदरि कोसि करइं सिणगारा ।
थापीय कुच-विचि मांणिक-हारा, गिरि-विचि गंगतणी जल-धारा ॥४१॥

रतन-जडी सिरि वेणि-प्रचारा, जोवन-रायतणी असि-धारा ।
पहिरीय हीर सुचीर उदारा, जानु कि भूमि रही सुर-दारा ॥४२॥
निलवटि तिलक धरइं मनुहारी, जाणे मनमथ-मंदिर-बारी ।
कंकण कनकतणा करि धारी, रूपि जिस्यी सुर-नाग-कुमारी ॥४३॥
सुंदर वदन सुपूनिम-चंदा, दीपइं दंत जिस्या मचकुंदा ।
नयन विकासि सोहइं अरविंदा, निरुपम रूप सुतेजि दिणंदा ॥४४॥
राता अधर सुविद्रुम-खंडा, कमल-सुनाल जिस्यी भुज-दंडा ।
अति-गंभीर सुनाभि-तरंडा, मदन-महा-रस-केलि-करंडा ॥४५॥
भमुह-कमाणि करी गुण संधइं, नयन-सुतीर धरि मन विंधइं ।
उन्नत पीन पयोधर बंधइं, भमर भमइं पदमिनि-रस-गंधइं ॥४६॥
षोडस सार सिंगार सुविरची, कोमल अंग सुचंदन चरची ।
पुरुष-प्रधानतणा पद अरची, मोडीय मांन कहइं गुण-रच्ची ॥४७॥
"तुं नर सुंदर रूप-निधानी, हुं गणिका गुण-रयण-सुखानी ।
मिलीयउ योग ज्युं ईश-भवानी, कवण विलंब करइं अभिमानी ॥४८॥
ए मुझ मंदिर सुंदर वासी, भोगवि भोग सुलील-विलासी ।
गणिका-मारग-मूल निरासी, हूई इणि भवि हुं तुझ दासी" ॥४९॥

॥ दूहा ॥

वचन सुणी सुंदरितणां, मंत्री-सुत मन-रंगि ।
तसु मन-परमारथ लही, वचन वदइं उछरंगि ॥५०॥
"रे भोली सुणि कोसि तुं, तुम्हस्युं कवण सनेह ।
उत्तम-कुलवंती वहू, अंति न दाखइं छेह ॥५१॥
चरित कहुं गणिकातणुं, तुं संभलि इक-चित्त ।
मुखि मीठी विणठी हियइं, भोलवि ल्यइं पर-वित्त ॥५२॥

॥ ढाल - ५ ॥

को(वे)श्या कूडतणी कही कोठी, बाहिर-रंग जिसीअ चणोठी ।
वांनरि रींछिण जिम घण रूठी, वाघिणनी परि विलगइं ऊठी ॥५३॥
खिण रूसइं खिण रंगसु दाखइं, मद-उनमाद-भरी मुखि भाखइं ।
संडतणी परि लाज न राखइं, नरस्युं केलि करइं मन-पाखइं ॥५४॥

जे नर कोढीय विगत-मनीषा, नीरस अंग कराल-करीषा ।
उत्तम-अधम न जाणउ परीखा, तुम्ह मनि मांणिक-काच सिरीखा ॥५५॥
लख-पुरुषइं तुम्ह नहीय संतोषा, अवर अनेक अछइं तुम्ह दोषा'' ।
एहवी वांणि सुणी पण-जोषा, वलतुं बचन वदइं घण-रोषा ॥५६॥
''तइं अम्ह जातिसु ओछिप माडी, अवगुण कोडि-गमे ऊघाडी ।
सवि सरिखी किम कोसि-भवाडी, तुं गुणवंत करइं पर-चाडी ॥५७॥
कहइं गुणिका तुझ संग सुहाइं, करतां वाद घणो कलि थाइं ।
अवसर एह न छंड्यउ जाइं, आव्यउ बोल हियइं न समाइं ॥५८॥
कुलवंती बहू कूड करंता, परदेसी हण्यउ सूरीयकंता ।
चुलणी सुंदर नंदन हंता, तउहइं कोइ न छंडइं कंता ॥५९॥
परणंतां कही नारि सुहेली, पिण निरवहतां अतिहिं सु(दु?)हेली ।
मागइं नव नव वेस सहेली, नव जाणइं घर-सूत्र गहेली ॥६०॥
जव निय-नाह रली घरि आवइं, ऊभीय उंबरि कोरडि चावइं ।
बोलइं बरबीय बाँह हलावइं, तुं घरि तूंणि किसी नवि ल्यावइं ॥६१॥
घरि नहीं तेल न भात न दाली, नहिं मिरी लूण नइं धणडाली ।
स्युं आव्या घरि द्यइं मुखि गाली, जा तुं पापीय पाछउ हाली ॥६२॥

॥ दूहा ॥

एहवी नीलज कुल-वहू, नहिं हियडइं सुविवेक ।
पिण परणी नवि छंडीइं, जइं रमइं पुरुष अनेक ॥६३॥

अम्ह घरि ए बंधन नही, निगरथ ऊठी जाइं ।
कुलवंती असती घणी, पुण अम्ह कलंक दिवाइ ॥६४॥

सूरिज ऊगइं पश्चिमइं, हू छंडइं निय ठाय ।
जइं निरविष नव नाग-कुल, नवि छंडुं तुज पाय'' ॥६५॥

नारी विसमी वागुरा, चिंति करी सुविलास ।
उदयसागर मुनिवर कहइं, पाडइं नर-मृग पासि ॥६६॥

वात एक साची सुणउ, सुगुणा सुगुण मिलंति ।
मकरंद मन मान(ल)तइं, हंसा कमलि वसंति ॥६७॥

॥ ढाल - ६ ॥

वचन सुणी तिणि वात विचारी, ए नव-योवन दीसइं नारी ।
सरखीय जोडि मिली सुखकारी, भोग-विलास करइं नर-नारी ॥६८॥
द्यइं मंत्री सुतनइं धन जोडी, साढीय बारस सोवन-कोडी ।
मदिमाती नव-योवन जोडी, रंगि रमइं प्रियस्युं मद मोडी ॥६९॥
जिहां छइं ऊंचीय मंदिर-माला, सोहइं चिहुं दिसि चित्रित साला ।
आरोपी गलि चंपक-माला, प्रियस्युं सेजि चढी सा बाला ॥७०॥
नेहइं नेह मिल्यउ छइं तुझस्युं, तुं विरतउ म म थाइसि मुझस्युं ।
मदन-सरोवर नेहइं भरस्युं, हंसी-हंस मिली रंगि रमस्युं ॥७१॥
घन-कुच-परबत-मांन विहंडी, अमृत-पांन करइंऽधर खंडी ।
भोगतणां सुभ आसण मंडी, मोडइं अंग ज्युं पंकज-दंडी ॥७२॥
प्रिय-पुंतार महा-मदि आया, कुच-कुंभइं नख-अंकुस लाया ।
पीडीय अंगसु काम जगाया, योवन-हाथीय हारि मनाया ॥७३॥
कामतणइं रसि कोश्या प्रीणी, मुखि बोलइं मधुर-स्वरि झीणी ।
किसीय कहुं प्रियडा तुझ करणी, हुं जग-धूरत कीधी घरणी ॥७४॥
जिम रवि-पंकज मेह-मयूरा, जिम जल-मीन सुचंद-चकोरा ।
तिम तुमस्युं मुझ नेह अपारा, इणि भवि तुं नर मुझ भरतारा ॥७५॥
इणि परि सरस विनोद करंती, सा समदा प्रिय साथि रमंती ।
आपणपुं धन धन्न मुणंती, बारह वरस गमइं गुणवंती ॥७६॥

॥ दूहा ॥

इहां इम ए सुख भोगवइं, हिव पूरव वरतंत ।
लघु-बंधव थूलिभद्रनउ, **सिरीओ** अति गुणवंत ॥७७॥
अनुक्रमिं एकल-संथुई, बहिन सात मतिवंत ।
तिणि इक पंडित अवगण्यउ, अवर करइं तव तंत ॥७८॥
गंगा-तटि बुद्धि करी, काढइं सोवन-द्राम ।
महितउ परमारथ लही, पाडइं पंडित-माम ॥७९॥
सूतउ सीह जगाडीओ, प्रगटी पंडित-भर्म्म ।
तव पंडित रूठउ घणुं, दूहउ लिखइ समर्म्म ॥८०॥

"जन मूरख जाणइं नही, जं सिगडाल करंति ।
नंदराय मारी करी, सिरीउ राज ठवंति" ॥८१॥

॥ ढाल - ७ ॥

कोप्यउ **नंद** सुणी तिणि कालं, ल्यइं **सिरीउ** निय-करि करवालं ।
छेदीय सीस हणी **सिगडालं**, आवीय नंद नमइं नत-भालं ॥८२॥
तव नंदइं सिरीउ सनमानी, अति घण मोटीय द्यइं परधानी ।
तव सिरीउ वड-बंधव-मानी, तेडण काजि गयउ बहुमानी ॥८३॥
बोलइं वचन नमी तसु पाया, "आवउ बंधव! तेडइं राया ।
मुंकउ कोसितणी तुम्हे माया, विलसउ भोग करी कुल-जाया ॥८४॥
म करउ कारमु मंदिर चालउ, कुल-आचार भली परि पालउ ।
पदवी जनकतणी संभालउ, द्यउ वयरी-मुखि मुद्रित-तालउ" ॥८५॥
वचन सुणी हियडइं गहबरीओ, जनकतणइं मरणइं दुखभरीओ ।
रमणी-भाव सहू वीसरीओ, **लाछलदे-सुत** तव नीसरीओ ॥८६॥
रे बंधव! मुझ कांइं विछोवइं, छंडत सहस विमासण होवइं ।
आघउ जायनइं फिरि फिरि जोवइं, देखीय **कोसी** धसी धसी रोवइं ॥८७॥
सुंदर चरण धरी जव चालइं, तव गणिका जई पल्लव झालइं ।
तुं माया मुझस्युं किम टालइं, रोवत प्रिय-गलि बांह सुघालइं ॥८८॥
"संभलि सुंदरि! तुं मुझ मिलती, हुं वारुं रहइं तुं विलवंती ।
नवि मुंकुं व्यवहार-सुनीती, तुं मुझ नारी जगत्र-वदीती" ॥८९॥

॥ दूहा ॥

इम समझावी वेसिनइं, खडग ग्रही निज हाथि ।
अभिनव वेस रची करी, चाल्यउ बंधव-साथि ॥९०॥
देखी पुर-जन हरखीया, मंगल धवल भणंति ।
याचक-जन जय ऊच्चरइं, हय हेषार करंति ॥९१॥
बहु परिवारइं परिवर्यउ, आवी परिखदमांहि ।
नंदराय भेटी करी, बइंठउ अतिउछांहि ॥९२॥

॥ ढाल - ८ ॥

"आ पदवी तुम तातनी ऊंची, ल्यउ भंडारतणी तुम्हे कुंची" ।
राजा नंद वदइं इम सोची, तव जंपइं "आवुं आलोची" ॥९३॥
तव एकांत जई मनि चिंतइं, राय कहुं निज स्वारथवंतइं ।
पापीय योवन-पूर वहंतइं, हुं न मिल्यउ मुझ तात मरंतइं ॥९४॥
भूपति साप-करंड-नकुंचा, नवि जाणुं तसु राखण-संचा ।
रहवुं पर-वसि लेवीय लंचा, हणतां जीव नहीं खल खंचा ॥९५॥
नरपति लोक सहू मनि हींसइं, पिण **सिगडाल** किहां नवि दीसइं ।
राजा मित्रसु खिण खिण रीसइं, दीसइं जिम मुख अथिर अरीसइं ॥९६॥
इणि संसारि नहीं सुख जोतइं, करीइं पाप ते आवइं पोतइं ।
माया-लोभ-वसिं तनु खोतइं, ते सहवुं नरगिं दुख रोतइं ॥९७॥
ए भव-सिंधु अगाध असारा, आठह करमतणी घण कारा ।
उतपति-मरणतणा दुख-चारा, श्रीजिन-धरम सुछोडणहारा ॥९८॥
छंडीयं मोह-महा-मद-लेसं, संवेगइं सिरि लुंचीय केसं ।
शासन-देवीय द्यइं मुनि-वेसं, मुनि भेटइं तव नंद नरेसं ॥९९॥
"जोवउ भूपति मुझ आलोच्युं, जे निय मस्तक मइं आ लोच्युं" ।
बोलइं नंद "किस्युं इम सोच्युं ?, तइं कीधुं घण काम असोच्युं" ॥१००॥
"जे नर नान्हपणइं निय सासइं, पांम्यउ जोवन वेसि-आवासइं ।
बइसइं ते किम भूपति पासइं", परिषद-लोक सहू इम भासइं ॥१०१॥
तव मुनि-राय सुचिंति विमासइं, "ए जन मूरख वितथ सु वासइं" ।
श्री**संभूतविजय** गुरु पासइं, **थूलिभद्र** आवीय अंग अभ्यासइं ॥१०२॥

॥ दूहा ॥

प्रगट वात पुरमांहि थई, जे लीधउ मुनि-वेष ।
तव दुख-भरि वेश्या रडइं, सुकुलीणी-गुण-रेख ॥१०३॥
"पहिलां दुःख वियोगनुं, वलीय सुण्यउ वयराग ।
दाधा ऊपरि फोडलउ, तइं कीधउ महाभाग!" ॥१०४॥
प्रियुडा! तइं विरूउं कर्युं, छंडी साजन-वास ।
माया मुंकि कुटुंबनी, गणिका कीध निरास ॥१०५॥

ओलंभा जन-जनतणा, केम सहुं करतार! ।
ए विण अवर न को गमइं, गुणवंतउ भरतार'' ॥१०६॥

॥ ढाल - ९ ॥

गणिका वेध-वलूधीय बाली, रडइं पडइं विरहइं विकराली ।
हुं नव-योवन तइं कां टाली, लागइं प्रिय विण सेजि कंटाली ॥१०७॥
खिण छांहि खिण ऊभीय तडकइं, सहीअर साथि रीसाणीय भडकइं ।
विरहतणुं घण साल सु खडकइं, प्रिय विण धान किस्युं नवि अडकइं ॥१०८॥
ते मुझ नाह किहां मदिमातउ, करतउ मनमथ-केलि सुरातउ ।
पातलीओ मुझ थण-विचि मातउ, मुझ विण इक खिण दूरि न जातउ ॥१०९॥
जोवन-वेसि वियोग-विदूना, संभारइं प्रियना गुण जूना ।
तुम्ह विण कंत! सु वारवहूना, सुंदर-मंदिर-ओरड सूना ॥११०॥
छंडीय सेजि सुभूमि-संथारा, लागइं भूषण आगि-अंगारा ।
मींठीय साकर ज्युं मुखि छारा, इक प्रिय-नाम गमइं मुखि सारा ॥१११॥
इणि समयइं आव्युं चोमासुं(सं), मागइं **थूलिभद्र** सूरि-निदेसं ।
जउ मुझनइं तुम्हे द्यउ उपदेसं, तउ गुरुराय! रहुं उप-वेसं ॥११२॥
जाणी भाव वदइं गुरु वाचं, रहउ तुम्हे **कोसि**-घरइं मुनि जाचं ।
एक मानउ माहरुं गुरु साचुं, देखीय भामिनि-भाव न राचुं ॥११३॥
तव गुरुनउ मुनि आयस पामी, हरखि चल्या गुरुनइं सिर नामी ।
गणिका-सुंदरि-तारण-कामी, आवइं वेसि-घरइं गज-गामी ॥११४॥
तव निय मालि चढी वरसालइं, सा प्रमदा प्रिय-पंथ निहालइं ।
देखीय कंत महा मनि माल्हइं, प्रिय साहमी पगलां भरि चालई ॥११५॥
आवीय कोसि-घरइं रिखि-राया, वचन कहइं मुनि मुंकीय माया ।
''द्यउ चउमासितणी अम्ह ठाया, जिम इक नाम जपुं जिनराया'' ॥११६॥

॥ दूहा ॥

वचन सुणी हरखी घणूं, दीधी निय चित्र-साल ।
मन-उछरंगि वधावीया, भरि भरि मोतीय-थाल ॥११७॥
मुनि पड-सालइं आवीया, ओघइं पुंजी पाय ।
गमणागमणुं पडिकमी, बइंठा श्रीरिखि-राय ॥११८॥

मुनि जाणइं गणिका तरइं, तउ अम्ह शासनि-सोह ।
सा जाणइं मुनिवरपणुं, छंडावुं करि मोह ॥११९॥

॥ ढाल - १० ॥

घण दिवसे प्रियुडउ घरि आयउ, सुंदरिनइं मनि हरख न मायउ ।
मिलीय सखी मुखि मंगल गायउ, कुंकुम रोलि दिगंतर छायउ ॥१२०॥
रचि मंडाण करइं उपचारा, योगतणा अम्हस्युं नहीं चारा ।
जे करता फल-पत्र-अहारा, ते अम्ह देखि हूआ सविकारा ॥१२१॥
चिंतवि एम सुनाटिक मंडइं, हाव धरी नरनां मन खंडइं ।
खटकति मेखल चीर न छंडइं, लटकति गोफण वेणीय-दंडइं ॥१२२॥
तंतीय ताल रबाब सुनादं, भरहर-भुंगल छंदि दवादं(?) ।
मद्दल वीण सुवंसलि सादं, जाऽनुकरइ सुर-दुंदुभि-वादं ॥१२३॥
चतुरपणइं चरणा ठमकावइं, घूघरि तान धरी घमकावइं ।
झेंझें झांझर सा झमकावइं, नाचति सा धरणी द्रमकावइं ॥१२४॥
गावति नारि मुनि-मुख जोवइं, रिखि जंपइं "हिव किंपि न होवइं ।
तुं घृत-काजि सु नीर विलोवइं, भोलीय तुं निय नर-भव खोवइं ॥१२५॥
नवि थाउं हिवं हुं तुझ नाथा, तइं दीधी मुझ बाउलि बाथा ।
संभलि धरमतणी हिव गाथा, तुं पामइं जिम सिव-पुरि-साथा ॥१२६॥
ए संसार-सरूप मइं दीठुं, हिव लागइं मुझ अतिहि अनीठुं ।
विषय-सवाद सु अंति न मीठुं, बालइं अंग ज्युं आगि अंगीठुं ॥१२७॥
आ काया मल-मूत्र-निदानं, देखीय राग धरइं गत-सानं ।
दीसइं भोग-सुखं अणु-मानं, भोगवतां दुःख मेरु-समानं ॥१२८॥
ए भव-सायर दुःख अगाधं, वेदन गरभतणी घण बाधं ।
करीय कुकर्म्म सुजीव-विरोधं, सहवुं नरगि सुदुःख स(आ)बाधं" ॥१२९॥
मुनिवर-वचन सुणी मनि बीन्ही, काँचा कुंभतणी परि भींनी ।
बोलइं धर्मतणइं गुणि लीनी, 'हिव टालउं(तारउं?) मुझनइं दुख-दीनी ॥१३०॥
तव हरखी रिषि धरम सुणावइं, श्रीजिन-धरमनां सूत्र भणावइं ।
सूधां श्रावकनां व्रत पालइं, नर-भव पर-भव सा अजुआलइ ॥१३१॥

सा जीती गणिका जगि सूरी, इम चउमासी करइं मुनि पूरी ।
जय-जस-वाद वरी गुण भूरी, वांदइं श्रीगुरु आवि सनूरी ॥१३२॥

॥ दूहा ॥

गुरु निरखी हरखी भणइं, "आवउ दुःकरकार" ।
वलि वलि दुःकर उच्चरइं, कोपइं अवर अपार ॥१३३॥
विषमी ठांमिं अम्हे रह्या, नवि लीधुं अम्ह नाम ।
चतुरपणुं गुरुनुं लहुं, द्यइं एहनइं बहुमान ॥१३४॥
"ए दोहिलुं सहस्युं अम्हे, द्यउ मुझनइं आदेस" ।
गुरुनुं वचन लही करी, पुहता कोसि-निवेस ॥१३५॥

॥ ढाल - ११ ॥

गणिका निरखीय वात विमासी, आव्या मुनिवर एह चउमासी ।
जोवा भाव कहइं सुविसासी, "अम्ह छइं रतन-सुकंबल-आसी" ॥१३६॥
मुनिवर राग धरी तव चालइं, पुहतउ दुरगम देस नेपालइं ।
तिहां राजा रिषि-वंछित आलइं, कोरीय दंड सुकंबल घालइं ॥१३७॥
वरसालइं जल-चीखल-पंथा, चंचल चरण चलइं जिम मंथा ।
अति घण ताढि न ओढण कंथा, आवइं इणि परि सोई निर्ग्रंथा ॥१३८॥
जव आपइं मुनि सा तिणि ता लइं, नांखइं अंग लूही निय खालइं ।
तव बोलइं मुनि "कां न संभालइं, तइं गमीउं मणि-कंबल आलइं" ॥१३९॥
"रे रिषि! मूरख! आप न जोवइं, काग ऊडावणि मांणिक खोवइं ।
कंबल-सम तुम्ह संयम होवइं, ते तुं अम्ह वसि कांइं विगोवइं" ॥१४०॥
वचन सुणी मुनि मारगि आवइं, मनि लाजी निय पाप खमावइं ।
तुं मुझ तारणनारि सुहावइं, थूलिभद्रना गुण वलि वलि गावइं ॥१४१॥
लही प्रतिबोध चलइं रिषिराया, कही वरतंत नमइं गुरु-पाया ।
नियमुखि थूलिभद्र सुजस ज गाया, बइंसइं सीहतणी कुण छाया (?) ॥१४२॥
ए मुनिराय महाब्रह्मचारी, सहवासी गणिका जिणि तारी ।
सहजरतन्न कहइं सुविचारी, ए सम कोइ नहीं उपगारी ॥१४३॥
श्री**सिगडाल**-सुनागर-तोकं, श्रीजिन-शासन-भाण-विरोकं ।
पालीय सील गया सुर-लोकं, नमत जनाः खलु तं गत-शोकं ॥१४४॥

तसु पटि अनुक्रमिं **खरतर**-ईशा, युगवर **श्रीजिनचन्द्र**सूरीसा ।
आगम-अरथ-सुजाण मुनीसा, जीवउ इणि जगि कोड वरीसा ॥१४५॥
निरमल सीलतणा गुण भावइं, **सहजरतन्न** सुसीस सुणावइं ।
साह गुणराज सुचिंति सुहावइं, **मरघादे** हरखी गुण गावइं ॥१४६॥
संवत सोलसु छासठि (१६६६) वरसइं, आसो सुदि दसमी सुभ दिवसइं ।
श्री**थूलिभद्र**तणा गुण गाया, **उदयसागर** मन-वंछित पाया ॥१४७॥
जिहां लगि द्रू-रवि-मंडल राजइं, अचल सुमेरु महा-छवि छाजइं ।
तिहां लगि मुनि-गुण-मांणिक-माला, चिर प्रतपउ **चंदाणि** रसाला ॥१४८॥

॥ इति श्रीथूलिभद्रचंदाइणि संपूर्णा ॥ श्रीरस्तु ॥ श्रीमति द्वीपनगरे सुश्राविका-मिरघादे-अमरादे-अरघादे-डाडिमदे-प्रमुखाणां पठनार्थं लिलिखे सहजरत्नगणिनेति ॥

*

शब्दकोश

कडी	शब्द	अर्थ	कडी	शब्द	अर्थ
२	मोडी	तोडीने	१२	मूलगउ	मुख्य
६	अटाला	अटारी	१२	घरणी	गृहिणी
७	चउसाला	चतुःशाल-चोरा	१५	रोलइं	लपेडे छे
८	झूझ	युद्ध	१५	धोलइं	धोळे छे
८	मछराला	मूछाला	१६	चचपट	तालध्वनि माटेनो
८	नगर-तलार	कोटवाळ			रवानुकारी शब्द
९	असग़ाला	पुष्कल	१७	सुसरति	सुस्वर
९	करालकचाला	बिहामणां चाळ्यं	२१	खींखंतउ	हरकत करवी
		करनारां(?)	२१	धवारीय	धवरावी,
१०	ओपइं	शोभे छे			स्तनपान करावी
१०	पाखलि	चारे तरफ	२८	वेधक	विदग्ध
११	पायक	पगे चालनारो	२८	वेध	आकर्षण
		सैनिक, पदाति	२९	धिगारव	धिक्कार (?)

कडी	शब्द	अर्थ	कडी	शब्द	अर्थ
२९	जोरी	जोरजुलम	७८	एकल-संथुई	सातेए मळीने(?)
२९	नीछट	तद्दन(?)	७९	माम	प्रतिष्ठा
३०	कोकतणउ	कोकशास्त्रनो	८५	कारमु	अजुगतुं
३२	कोडिगमे	करोडो प्रकारे	८६	गहबरीओ	गभरायो
३४	तारा	आंखनी कीकी	८७	विमासण	मूंझवण
३४	पणदारा	पण्यस्त्री, वेश्या	८९	जगत्रवदीती	त्रण जगतमां
३५	पाडी	अधिकार			प्रख्यात
३५	लाडी	सुन्दर कन्या	८९	बारुं	रोकुं
३९	सींबलि	शीमळो	९०	वेसि	वेश्या
४३	निलवटि	कपाळ पर	९१	हेषार	हेषारव, घोडानो
४५	तरंडा	नावडी			हर्षसूचक ध्वनि
४६	कमाणि	धनुष्य	९५	संचा	सांचो-कळ
४६	गुण	दोरी	९५	खंचा	खचकाट
४७	रच्ची	राचेली	१००	असोच्युं	विचार्या वगरनुं
५२	विणठी	बगडेली	१०२	सुवासइं	कहे छे
५४	पाखइं	वगर, विना	१०७	वेध-वलूधीय	स्नेह-
५५	कराल-करीषा	बीहामणां छाण			विलुब्ध
		जेवां	१०८	खडकइं	खटके छे
५६	पणजोषा	पण्ययोषा, वेश्या	१०८	साल	दुःख
५७	ओछिप	नबळाई	१०९	रातउ	रातो-मातो
५९	तउहइं	तो पण	११०	वारवहू	वेश्या
६०	गहेली	घेली	११२	उपवेसं	वेश्या समीपे
६१	कोरडि चावइं करोड वातो संभळावे		११३	जाचं	याचीने
६१	बरबीय	अभिमानी	११४	आयस	आदेश
६३	नीलज	निर्लज्ज	११५	वरसाल	वर्षा
६४	निगरथ	गरथ (घन) वगरनो	१२१	मंडाण	तैयारी
६६	वागुरा	जाळ	१२२	गोफण	वेणी साथे गूंथातुं एक
७२	विहंडी	खंडित करीने			घूघरियाळुं आभूषण
७३	पुंतार	महावत	१२३	तंती	तन्त्री-वीणा

१२३	दवादं	वाजिंत्रविशेष (?)	१३२	सनूरी	उमंगभर्युं
१२३	रबाब	एक तन्तुवाद्य	१३८	चीखल	कादव
१२३	भरहरभुंगळ	एक प्रकारनी भुंगळ	१३८	मंथा	मंथान-वलोणानुं नेवढं
१२३	मद्दल	मृदङ्ग	१४४	तोकं	पुत्र
१२४	द्रमकावइं	धूजावे छे	१४४	विरोकं	सूर्य
१२७	अंगीठुं	सगडी	१४८	द्रू	ध्रुवनो तारो
१२८	सान	समज	१४८	महाछवि	महान तेजे
१२९	अबाध	खूब			

* * *

मुनि-श्रीनेमिकुंजर विरचित
गजसिंहकुमार-चोपाई - उत्तरार्ध

– सं. किरीट शाह

[मुनि श्रीनेमिकुंजरजी द्वारा सं. १५५६मां रचित, गजसिंह नामना राजकुमारनुं चमत्कारात्मक कथानक गूंथता प्रस्तुत काव्यनुं, रतलाम ज्ञानभण्डारगत सं. १७०८मां लखायेली अेक हस्तप्रतना आधारे श्रीकिरीटभाईअे लिप्यन्तरण कर्युं छे. आ काव्यना प्रथम बे खण्ड अनुसन्धान-६७मां प्रकाशित थया छे. तेना अन्तिम बे खण्ड (लगभग २१४ कडी) अत्रे प्रकाशित थई रह्या छे. प्रतमां अशुद्धिओनुं बाहुल्य अने अस्पष्ट मरोड तेमज काव्यगत केटलाक अजाण्या शब्दप्रयोग अने उच्चारणोने लीधे सम्पूर्णतः शुद्ध वाचना तैयार थई शकी नथी. तेम छतां तेमणे मोकलेली हस्तप्रतनी छायाप्रतिना आधारे यथाशक्य शुद्धीकरणनो प्रयत्न कर्यो छे. आ क्षेत्रमां नवी व्यक्तिओ उत्साहभेर जोडाती रहे तेवो उद्देश आ कृतिना प्रकाशनमां प्रधानपणे रह्यो छे. – सं०]

*

हिवइ ते परणी विद्याधरी, मयणवती सयण आगली;
देखी वर-कन्यानों रूप, मन हरखे विद्याधर भूप... १
सीलें सुख संपति होइ पूर, सीले दुरगति नासइ दूर;
सीलतणों महिमा अे होय, **गजसिंघ** कुमरतणी परि जोय... २
सीलें सुर-नर सानिध करइ, सीलें सुरगति नर संचरइ;
सील-प्रभावइं विघन सव टलई, राखस-भूत-प्रेत नवि छलई... ३
कुमर प्रतिं विद्याधर कहई, सुख भोगवि तूं अम घरि रहइ;
राज धन्यनी नही कांई मणा, मांगी लिऊ जे होसि आपणा... ४
वलतु कुमर इणि परि कहई, पूरव विरह मुझ तन दहइ;
पहिली नारि मइं परिणी च्यारि, मूकी सूती वनह मझारि... ५
विद्याधरीअे आण्यो अम हरी, पछइ न जाणुं पूरव चरी;
सूध जोइ आव्युं जेतलइं, तुम्हें बेंटी राखो तेतलइ... ६
बीजी वात सघली सोहिली, स्त्रीना पग-बंधण दोहिली;
तिण कारणि हूं तुम्हनइं कहूं, सूंस लीधा विण हूं किम रहुं... ७

राउ भणइ देस-देसांतरी, जोसें देस-वदेस फिरी;
नारीनों दोहिलो संघात, अेम जाणीनइं मानी वात... ८
दीधी विद्या सारी दोय, अंजन करे न पेखइ कोय;
आगासगामिनी बीजी दीध, राय जमाइनइं हित कीध... ९
त्रिहु मास ऊपरि दिन सात, हुं आविस जोई सवि वात;
करीय मनावी चाल्यो वीर, मन चिंतइ साहस-धीर... १०
जिहांथी लीधो विद्याधरी, पहिलु जोयो ते सवि फिरी;
विद्यातणइ प्रभावें करी, आव्यो ततखिण तिहां संचरी... ११

॥ दूहा ॥

अंबर ऊडी आवीयो, निरखइ ते वन मांहि;
तिण वड-तल आवी करी, कुमर दहो दिस चाहि... १२
नारि नारि जंपइ इसु, साद करइ सुविसाल;
उलंभा देवइ देवनिं, जोवइं वन निरमाल... १३
दिवस गयो रयणी थइ, सोधतां ते नारि;
अेक असंभम वातडी, दीठी वनह मझारि... १४
राति अंधारी अेवडुं, संचल हूवो जाम;
अेक नारि आक्रंदती, जंपइ अरिहंत नाम... १५
जनम जनम अरिहंत सरण, मुख विलवलइ अपार;
सबद सुणीनइं कुंवरि, सज कीया हथियार... १६
गईवर-मुख नारी पडी, साही भइकड जंत;
नवि मारइ मेल्हइ नही, कुमरिं ते पेखंत... १७

॥ पधडी छंद ॥

तव धायो धसमसंत वीर, कर धरइ करवाल करंती धीर;
मुख हाकइ थाकई नही लग़ार, जाणे परि सिंघह अपार... १८
करि मोडइ मुंछ विसाल-वाल, रातडा नयण कीधा विकराल;
ऊधसइ जिम संड मत्त, वह परि उगमाइ तिलत्त(?)... १९
बोलाव्यो गयवर तेणि वेग(गि), अे नारि छोडि मुह केडी लगि;
ते सुणीय वयण मेंल्हीय बाल, थयुं कुमर-केडि देखंत फाल... २०

सुंड उलालइ त्राडइ भिडइ तेउ, वनमांहि झुझ करइ ते बेउ;
ते हणीयो गयवर खग-प्रहारि, जीवंती मेल्हावि‍य सा नारि... २१

॥ चउपइ ॥

गयवर हणी मेल्हावी बाल, पूछइ कुंवर वात विसाल;
सि कारणि वन माहे पडी, केणी परि गयवर-मुख चडी... २२
नारि भणइ अे कारण सुणो, **श्रीपुर** नयर छइ अम्हतणो;
श्रीचंदराय अम्हारुं तात, **सीलवंती** नामि मुझ मात... २३
तसु बेटी हूं अछो कुमारि, करम-उदय आव्या तेणि वारि;
मुझ माता बालापणि मुई, हूं मंत्रईनइ वसि हुई... २४
मुझसु द्वेष धरइ ते घणुं, हुं पण नाम न लिउं तिह तणो(णुं);
मुझ अवगुण अहिनिस उचरई, झूठी वात राउ आगलि करई... २५
कूडी आल मुझनइ तिण दीध, राउ भंभेरीनइ वसि कीध;
मंत्रेईयई घाठी नडी, भरी दुःख सरोवरमाहि पडी... २६
सरोवरमांहि गयवर अछइ, पडतां तेणि साही हुं पछइ;
बीजा गयवर धाया जाम, पग साहीनइ नाठो ताम... २७
मइं समरुं श्री जिनवर देव, तउ लाधी सही तुम्हारी सेव;
मुझनइ दीधुं जीवतदान, तुम्हे सही पुरुषमांहि प्रधान... २८
हिव सही तुम्ह मुझनइं वरो, आस अम्हारी पूरी करो;
जनम जनम तुम्हारि पाय, अवर पुरुष माहरि भाय... २९
मानी वयण रमणी ते वरी, तेहनुं नाम **मयणमंजरी**;
साखी थया चंद्र नइ सूर, वरिय नारि तिण आणंदपूर... ३०
हिव ते निसुणो स्त्रीनी वात, जे हुती मंत्रेई मात;
तेणें राय आगलि वात ज कही, स्वामी कुमरि नीकली गई... ३१
तुम्हनइ वात हुं कहती जेह, इणि कीधी छइं साची तेह;
लेई पुरुष गई नीकली, लाज अणावी कुलनइ वली ... ३२
तं निसुणीनइ कोप्यो राउ, कोणि कीधुं अेवडुं अन्याय;
चंचल चडउ ततखिण वली, श्री केडइ बाहर नीकली... ३३
बाज्या ढोल नफेरी जाम, सुभट सव सज हूवा ताम;
पाखरीया घमघमइं तोखार, चाल्या जोवा कारण नारि... ३४

जोवइ वन ते दह दिस फिरी, नर साथि दीठी कुंवरी;
जण साहवा कारण धाईया, कुमर आवंता बोलावीया... ३५
जण जंपइ कुमर अजाण, आज सही तूं चूकसि प्राण;
गजसिंघ कुमर ते प्रीछी वात, आव्यो सही अेहतणो तात... ३६
मुझ कन्हलि विद्या छइ वडी, सिधपुरुष आपी जे जडी;
मुझसिउ जउ अे जुडइ आज, तउ तेह राख्यानुं केहो काज... ३७
ते ऊषधीनइ करी प्रणाम, झुझ कारणि सज थयुं ते ताम;
तव लीधुं कुंवरि करवाल, पूठइ राखी अबला बाल... ३८
राय हकार्या जण आपणा, झुझ कारणि सज्ज हूवा घणा;
हाक देईनइ साम्हा थाय, किहां जाय रे रूठो राय... ३९
कुमरि भणइ निसुण रे राय, सूतो सींह जगाव्यो आय;
ताहरा दलनुं काढुं मूल, उडाडुं जिम आकह तूल... ४०

॥ छंद ॥

जयसिंघ-राय-कुल-कमल-दिणेसर, उगम लगइ सदा अलवेसर,
भुज-बलि भिडतां किमइं न भजइ, साहसीक इक नामह छजइ... ४१
जयवंतउ भड भडवा लगो, चउपट मल्ल चउसाल,
तव धायो धूवड(?) धसमस करतुं, कर लीधुं करवाल,
नीय तेजइ दीपइ रणिह न थिपइ, वाणी गहुर रसाल,
मही मंडल मंडइ कुमर महा भड, मोडइ मुछ विसाल... ४२
अेक नयणिह डारइ अेक न वारि, अेक हांक्या सवि डरइ,
अेक तेजइ नासइ तिमर विणासइं, जिम ऊगमति सूर,
अेक कायर कंपइ दीणह जंपइ, छीपइ तेहना वीर,
इम झुझ करंतां सडसड्ड सुडइ, कुमर साहसधीर... ४३
जे पग धरंतां कर सरमंतां जे कुंतिहि झुझंति,
जि किम्हेइ न चूकइ तीन दिस भव कइ धीरह तुष धरंति,
जे गयवर मारइ काढइ काढी रहइ जे व्रत कहुं ते च्यारि,
ते सघला नाठा कुमरि, नवि दीठा नासी गया पारि... ४४
इम झूझ करंतां रण रमंतां, नवि लगि हथियार,
तें महिमा निसुणो ऊषध केरो, पुनइ करइ जयकार,

तउ राय दीठा जण सव नाठा ऊठो हाकी तेउ,
हिव अंगोअंगइ झूझ करण सज हूवा ते बेउ... ४५

॥ छपद् ॥

झूझह कारइ ते बेउ रणह रोस चडिया, अंगहि लगिसु घण घण भिडीया,
जीतु ततखिण राउ रण करटतुभगा, पेखी अचरिज जीमा तामां आयठ लगु,
भणइ राउ कर जोडी करी कहो वछ कारणि किसुं,
अणजाणतां अम्ह झूझ मांडुं जिसुं होइ बोलइ छइ तिसुं... ४६

॥ चउपई ॥

कर जोडी राजा इम भणइ, हूवो जमाइ अे अम्हतणइं;
कारण बात कहो तुम्ह आज, कां ईम आणो माहरी लाज... ४७
तउ वलतुं कुंमर बोलंति, तुम्ह बेटी पूछो अेकंति;
सुणी वात राजा मन धरी, कहों वछ अे पूरव चरी... ४८
श्री जंपइ हिव निसुणो वात, हूं द्रुहुवेई मंत्रेई मात;
जिण कारणि सरोवरमहि पडी, पडतां गइंवरनइ मुखि चडी... ४९
मुखि साही वनमांहि पहूत, मइं आक्रंद कर्या तव बहुत;
हूं छोडावी गइंवर पास, सुणो पिताजी अे साची वात... ५०
तं निसुणी सव प्रीछी वात, मनमांहि अति हरख्यो तात;
जिह कटक पहिलुं खलभलुं, ततखिण आवीनइं सहु मिलुं... ५१
कुमर प्रतिं इम बोलइ राय, नयर पधारो करीय पसाय;
चंचल चपल तुरंगम चडी, वन माहिथी कटक ऊपडी... ५२
नगर भणी ते चाल्युं तेह, अेणि प्रस्तावि वूठो मेह;
नयनला सवि पूरइ वहिं, ते कटक आवी तिह रहि... ५३
नदी महागिर पूरइ वहइ, तेहनुं पाट घणी दूर रहइ;
कांठि कटक आव्या जिसइ, अचरिज वात इक दीठी तिसइ... ५४
रघवलगी तिहां कन्या दोय, पूरमांहि ताणीछइ सोय;
मुख बुंबारव करइ अपार, धीर वीर को करइ अम्ह सार... ५५
कुमरतणी दृष्टि ते पडी, ततखिण धायुं दडवडी;
जडीप्रभावे पइठो पूर, जलनइं न बीहतुं सूर... ५६

महापूर कुमरी ते तरी, श्रीवाहरि तिण साची करी;
नदी मांहिथीं काढी तेउ, जीवती ते लीधी बेउ... ५७
राजा चिंतइ मनमहि इसुं, सूर रुप आव्यो अे किसुं;
जिणें अेकलां कंटक निरजणी, वली वात अे कीधी घणी... ५८
राइ पूछी ततखिण नारि, किम ताणी तुमे पूर मझारि;
दोय सरीखी रूपि रुवडी, नवि परणी वइ जुयलडी... ५९
श्री भणइ निसुणो वृतंत, **दसरथ** नयर अमाहरुं हुंत;
छइ **नंदीदास** विवहारी तेह, अम्ह पितानुं नाम ज अेह... ६०
पापबुध ते तिहां छइ राय, तिण मांड्यो मोटो अन्याय;
को परदेसी नारी च्यारि(र), वलि आवी ते नयर मझार... ६१
पापबुध ते राये धरी, च्यारे नारि लीधी अपहरी,
लेइ अंतेवरमाहि पहूत, हाहाकार थयुं तिहां बहुत... ६२
तिहां महाजन छोडावा गयुं, तउ राजा साम्हो कोपीयुं,
रूडी सीख दीयइ तसु जेह, साम्हा अन्याई कीजइ तेह... ६३
तउ महाजन बुध बहु धरी, अवर नगर अधुवारुं करी,
माणस सवे वस्तु लेई गया, आपण पईउडा घर रह्या... ६४
अम्हो अम्ह तात वउलावी जाम, भाई सार्थि आव्यो ताम,
रथ बइसारी चाल्यो वीर, पुहुता **श्रीपुर** नयर गंभीर... ६५
नदी उपकंठ अम्हो ऊतरी, जमवा तणी सजाई करी,
कांठि मूकी गयो अम्ह भाय, अन्नह कारण नयरेमांहि... ६६
आवी तव नय-जल-पूर, लोक सवे नासी गया दूर,
रथ सहित अम्हे जले आफलुं, आज सही मनवंछित फलुं... ६७
इणि पुरुषें अम्ह कीधी सार, अम्हनइं भवभव अेह भरतार,
पूरव पुन्य करी अे मिल्यो, भाग आंब अम्ह हृदय फल्यो... ६८

॥ वस्तु छन्द ॥

राय चितइ राय चिंतइ मनह मझारि सार जमाई पामीयो
सत रूप तणों तेज सोहइ पूरव भव करी पुनि आज अम्ह

घरि अेह जइ कुमर भणइ राजा प्रति स्वामी वयणे अवधारी
दसरथ नयर जोई करी छोडावुं ते नारि... ६९

॥ चउपई ॥

नदी पूर उपसमुं जेतलइ, श्रीभाई आव्युं तेतलइ;
कुमरतणा चरण प्रणमेउ, कहइ वात कर जोडी बेउ... ७०
अे बिन्हे नारी तुम्ह वरो, साला बहिनेवी सगपण करो;
उच्छक लगन लीयो तिण वार, अेतलइ परणी ते बिन्हे नारि... ७१
ततखिण कुमर कटक मेलंति, आणंदपुर कागल मेल्हंति;
सेन्या लेई साला आवीया, गय पाखरी तुरी सज्ज कीया... ७२
लेई कटक कुमर चालीयो, श्रीचंद राजा साथें थयो;
राजा राणा तेडाव्या बहू, कटक मेल्या तिण अवसरि सहू... ७३
ढमढम बाजइ ढोल असंख, उंउं मंगल बाजइ संख;
रिरि सरणाई बाजंइ तूर, मिल्या सुभट गहिगहिया सूर... ७४
गामि गामि आवइं भेटणा, दान मान तसु दीजइं घणा;
देसमांहि दिवरावी धीर, पुहुतो दसरथपुर गंभीर... ७५
दीठो नगर चिहुं दिस फिरी, रह्यो कटक तिह कहु करी;
पापबुध ते राइं सुणी, दल बीटी सीख दीधी घणी... ७६
गइवर रहवर तुरिय पाखरया, अंग रंगाउलि सज करया;
चालो पापबुध सामिही, हय गय पायक संख्या नहि... ७७
जिमें तुरंगमि दीधुं पाय, तउ आडी ऊतरी बलाय;
हाथ लीया हथियारह जाम, साहमी छींक हुई ते ताम... ७८
कटक लई ते सांचर्यो, तिम कागे कोलाहल कर्यो;
डाबी भयरव तउ कलकली, धूंधाती छाणी तसु मिली... ७९
जमणी देव टहूको करइ, नागराज आडो ऊतरइ;
अेक भणइ अे मरसे आज, अेक भणइ अे जास्ये राज... ८०
पापी जई सही किमे न थाय, भय भंगाणा पडीया नाय;
अणकनकन बलीयो अबूझ, पोलें आवी मांड्यो झूझ... ८१
बिहूं दले मिलावो हूवो, सुभट झूझवा माग्यो दूउ;
परदल भडवा जे भजस्यइ, तेहनों ठाकुर सही लाजस्यइ... ८२

हिवइ बिउना दलवडी आवली, भारि भोम थई आकुली;
कसलाणा ते आफल्या, इसा सूर रणमांहि भल्या... ८३
हयवर गयवर जुडीया अंपार, हथियारइ लागइ हथियार;
घोडो घोडासिउ भिडइ, पायक पायकसिउ भिडइ... ८४
रथसिउ रथ जुडइ अपार, इणि परि झूझ होइ उदार;
उड्या लोहो जइ अेके कोस, झूझरइ राज तउ पूरइ रोस... ८५
कायर नासि सूरुं धसइ, रण पेखी ते साम्हो हसइ;
बांधी बाणतणी वाधी गठरी, रिव करी मूकुं तिण आवरी... ८६
खांडी झलकई वीजह जिसीं, सुहड तणा मन तेणें उधसीं;
तेजी तुरी नवि साह्य रहे, परदल देखी ते गहगहे... ८७
रूधिरपूर रथ ताण्या जाय, सिर तूटइ धड धसमस थाय;
दोय पहुर इम हूवो संग्राम, पापबुध राय हार्यो ताम... ८८
भागुं कटक दहं दिसे जाय, जीवंतु ते साह्यो राय;
पाछइ करि बांध्यो ते वली, नाठो कटक दहुं दिस फली... ८९
पण जण कुमरि लगी आवीयो, तउ पापी राय बोलावीयो;
कुमर भणइ रे पापी राय, तइं कीधो मोटो अन्याय... ९०
कीया क्रम ते लागा आज, जय जीवंतइ गयुं तुझ राज;
सुणी वयण ते नासी गयुं, कुमर नगर मांहि आवीयुं... ९१
नगर लोक आणंद्या बहु, भेट लेइनइ आव्या सहु;
सासनदेवीअे हरख मन धरी, कुमरी वधावई आवी करी... ९२
बोलावी ते नारी च्यारि, हिव आव्यो छइ तुम्ह दुःख पार;
मास दीस तुम्ह आण्यो तुम्ह कंत, सुणी वयण ते मन हरखंति... ९३
पापी राजा एणें षय कीयो, गजसिंघ राजा मन हरखीयो,
तुम्ह भरतारें राज पामीयुं, पुनइं करी मेलावु कीधुं... ९४
पूछइ नारीतणो वृतंत, जे ऊपनीथी मन महि भ्रंति;
तउ नारी पभणइ श्रीस्वामि, सील अखंडित अम्हे छुं स्वामी... ९५
सासनदेवी कीधी सार, अम्हे आप्यो एकावलि हार;
जे नर कुदृष्टि जोवइ रही, ते नर अंधो थाअे सही... ९६

सुणी वयण सय हरखीउ कुमरि, नगर मांहि हूवो जयकार;
पुन्य करी अे पाम्यो राज, पुन्यें सीधा सघला काज... ९७
पुनें सुर-नर सानिध करइ, पुनें नर भवसायर तरइ;
दसरथ नयर हूवो उछाह, राज करइ तिहां गजसिंघ राय... ९८
सात नारि सिउं सुख भोगवइ, **नमिकुंजर** कवि अेम कहइ;
च्यारि खंड बुध वहु करीं, अेतलई नवनारि तिण वरी;
संघ तणी जउ अनुमति लहइ, कथा खिणंतर कवियण कहइ... ९९

॥ इति श्रीगजसिंघरास तृतीयखण्ड सम्पूर्ण ॥

॥ वस्तु छन्द ॥

राउ गजसिंघ राउ गजसिंघ मनह चिंतत,
विद्याधरी आवुं लई अवधि कहीनइ मेलीय,
राज भलाव्युं मंत्रनइं ताम कुमर बहु रंगि चालीया,
मास दीह मांहि आविसुं कह्यो प्रधाननइ भेउ,
गिर वैताढ विद्याधरी हूं लेई आवुं तेह... १

॥ चउपई ॥

राज भलाव्युं मंत्री पासि, चलिउ कुमर मनह उल्हास;
विद्यातणइ प्रभावें करी, गिर वइताढ भणी संचरी... २
गिर पासइ छइ प्रवर प्रसाद, सुरगिरशुं ते मांडइ वाद;
दंड कलस धजा लहलहइ, तोरण मंडप अति गहगहइ... ३
तिण भवने आव्युं कुमार, दीठो जष अनोपम सार;
धूतारा बईठा तेह मांहि, तिण बोलाव्युं कुमर उछाहि... ४
मान दीअे ते नर अति घणुं, आसण दीधुं तव आपणुं;
विण सगपण मुख जंपइ भाय, घणें दिवस अम्ह कीध पसाय... ५
च्यारि धूरत बइठा तेउ, कुमर न जाणइ तेहनुं भेउ;
कूड बुध तेह मन सहि धरइ, पापी मुखि माया बहु करिइं... ६

॥ दुहा ॥

मुख बोलत कोमलपणइ, वाणी सीतल होय;
हीयो धार करवत जिसुं, धूरति लखण जोय... ७

बोलंता बाहर भला, चंदन सरसी वाणि;
हीयो कठिण पाहण जिसुं, तेसूं प्रीति म याण... ८

॥ चउपई ॥

पूछइ कुमर तेहनी वात, तुम्ह च्यारें किम मिलुं संघात;
पूरव चरित्र कहो आपणो, सुणी वयण ते बोलइ घणो... ९
धूरत भणइ सुणो अम्ह चरी, जोया देसदेसंतर फिरी;
अेह वन मांहिं आव्या जाम, वात असंभम दीठी ताम... १०
गिर माहें छइ गुफा अनेक, तिहां वसि विद्याधर अेक;
तिहनइं घरि छइ बेटी च्यारि, नव जोवन वइ ते नारि... ११
अेक दिवस च्यारे कुंवरी, आवी अेणे भवने संचरी;
जष आराधुं तेणि अपार, वांछित वर मांगि ते सार... १२
जषदेव प्रसन्नुं थयुं, नारि प्रतिं ते इम बोलीयुं;
मास दिवस वर आणस सही, तेणी वार्तिं च्यारे गहगही... १३
असी वात अम्ह जाणी करी, जोवा रह्या अपूरव चरी;
मास दीस आज वउलो सही, कुमरी वर तउ आव्यो नही... १४
जष उपरि तिणि आण्यो कोप, वरनी वाचा अे थई फोक;
काष्टभखण ते च्यारइ करइ, आज सही ते कुमरी मरइ... १५
तूं नर उत्तम आव्यो इहां, मया करीनइं पुहचउ तिहां;
स्त्री बलिसें सही अग्नि मझारी, जाइ जीवंती राखो नारि... १६
गजसिंघ राउ वयण ते सुणी, ततखिण चाल्यो कुमरी भणी;
साथि नर कीधा ते च्यांरि, आवी लेई गुफानइं बारि... १७
दीठी नारि रूपिं रूवडी, नव जोवन रूपिं लहु वडी;
नारींइं नर तें दीठो जिसइ, कालमुही सिर धूणइ तिसइ... १८
गजसिंघ कुमर चिंतवइ असुं, कूड रच्यो छइ मुझनइं किसुं;
पासइ अग्निकुंड इक जलई, खयर अंगारें ते झलहलइ... १९
पासइ दीठा च्यारि तोखार, बाध्या अजावर करइ पोकार;
दीठा तिहां तिल जवनइं विरही, दीठा उडद घणां तिण सही... २०
देखइ गूगल गोली वली, देखी कणयरनी ते कली;
दीठा तेलतणां तिहां घडा, दीठा धूपतणां तिहां पुडा... २१

दीठा बाउल नइं घूघरी, वली दीठी तिहां लापसी करी;
दीठी पउली तिहां चउपडी, दीठो खीचपुडा घारडी... २२
पासइ दीठा कीधा वडा, दीठा माणसनां तिहां मडा;
दीठो जोगी करतुं ध्यान, कुमरिं वात जाणी अनुमान... २३
ऊठो जोगी धरी उल्हास, मुख जंपइ अम्ह पूगी आस;
वाट जोवंता थया घण दीह, तूं भल आव्यो माहरुं सीह... २४
परिणावुं च्यारे कुंवरी, राखुं घरि जमाइ करी;
आपसि अे च्यारे तोखार, आपों विद्या सोवन सार... २५
अम्हे पांचे जण करिसुं सेव, अेक वचन तुम्ह मानों हेव;
सार विद्या साधूं छुं अम्हे, उत्तरसाधक थावो तुम्हे... २६
जोगीतणा वचन इम सुणी, गजसिंघ कुमर हाय ज भणी;
बुध करीनइं बोलइ धीर, साधो विद्या थावो सवीर... २७
तिणी वातें जोगी हरखीयो, आगलि कुंवर वयसारीयो;
चिहुं दिसइ राखी ते नारि, चिहुं दिस नर बईसार्या चारि... २८
मांड्यो होम करइ दुरध्यान, बइठो कुमर थई सावधान;
पूठइं जोगी आहुत करइ, कुमर हीयइ कांइ नवि डरई... २९
पहिलूं होम्या जव नइ विरहि, उडाडइ बाकुला नइ घूघरी;
पछइ आंण्यां मदना घडा, वोलइ अजावर के वापुडा... ३०
ते देखी चिंतवइ कुमार, अंजन विद्या छइ अति सार;
तेहनी महिमा जोईस आज, जे आपी विद्याधर राज... ३१
नयण बेहू तिण अंजन करी, उठिओ ततखिण साहस धरी;
कुमर प्रतिं नवि पेखइ कोय, ते महिमा ऊखदनो जोय... ३२
पहिलूं तो जोगी साहीयो, पाछइ करी कुंवरि बांधीयो;
नाख्यो लेई अग्नि मझारि, ते देखी नर चिंतइ च्यारि... ३३
देव देवता रूठो कोय, जे उतपात अेवडो होय;
सुर रूपइ आव्यो अे आज, वणठा सवे अम्हारा काज... ३४
जीव लेईनइ हवि जाईयइ, नहीं तउ जोगी पर थाइ;
ते च्यारे नर नासी जाय, अे सीह प्रतिं अम्हे सुं थाय... ३५

जोगी वलीनइं पुरिसो थयो, तव गजसिंघ कुमर पेखीयो;
आलि माटि अम्ह विद्या फली, तउ ते नारि बोलावी वली... ३६
स्त्री जंपि निसुणो अम्ह चरी, अम्हे च्यारि आणी अपहरी;
पूछइ कुमर वलि वलि घणुं, कहो चरित्र तुम्हे आपणुं... ३७
नयर अम्हारू **हरिपुर** ठाम, राज करइ तिहां **सिवदे** राय;
तिहां वसइ विवहारीया च्यारि, तस बेटी अम्हे अछउ कुंमारि... ३८
विवहारीअे जात्र मन धरी, चाल्या संघ अेकठो करी;
समेतसिखर गिर जात्रा सहू, संघ मिल्यो तिण अवसरि बहू... ३९
अम्हे पिताइं सार्थि लीध, समेतशिखर जइं जात्रा कीध;
पूज्या जिनवर पूगी आस, मारग लागा दीह छमास... ४०
संघ उतरिउ महावन माहि, निसभरि सहु निद्रावसि थाय;
इणिं अवसरि धूरति आवीया, निद्रा मांहि अम्हनइं लेई गया... ४१
इणि वने पुरनी सुध, तिण रची अेवडी बुध;
अेह विद्या रुठी अेह मांहि, धूतारा सव नासी जाइ... ४२
मया करी अम्ह चिहुनइ वरो, पाणीग्रहण अम्हारो करो;
भवभव अम्हनइ तुम्ह भरतार, अेह वचन जाणो तुम्ह सार... ४३
कुमर वयण ते सुत वली, ततखिण च्यारि स्त्री वरी;
काढ्यो पुरिसो सोनुं तणो, तेहनुं महिमा छइ अति घणुं... ४४
दिन दिन कीजइ तेहनुं भंग, वली आवइ तसु नवला अंग;
देवनी रिध ते कुमरनइं हुई, पुरव पुन्य फलुं तिहां सही... ४५
लीधो पुरिसो नइं तोखार, नारि लेई चल्यो कुमार;
वन अटवी ते मूकी घणी, चाल्यो ते **हरिपुर** भणी... ४६
मारग नगर आवइ अति घणा, केता नाम कहुं तेह तणा;
अेक दिवस ते साहस धीर, पुहता पुर पाटण गंभीर... ४७
परिसर आव्या वाडी मांहि, लीइं वीसामुं आवी छाह;
गजसिंघ कुमर चिंतवइ असुं, जोवुं नगर अछइ किसुं... ४८
साथ संघात जोवुं सही, श्रीनइं पीहर जाउं सही;
वाडीमांहि बइसारी नारि, कुमर पुहूतो नयर मझारि... ४९

जोतूं हरपुर तणों सघात, पूछइ सदेसांतरी बात;
इसइ अवसर वनमांहि ठाम, नगरनायका आवी ताम... ५०
दीठी नारि रूपिं अतिसार, दीठो पुरिसो सोना तोखार;
लोभ लगइ तेहनी मति फिरी, कूडी माया मांडी खरी... ५१
तुम्हे माहरइ भउजाइ च्यारि, उठो आबो नगर मोझारि;
तुम्हे तेडवा आवी सही, भाई अम्ह घरि बइठो जई... ५२
अेहवी कूडी बुधि बहु करी, च्यारि श्री आणी अपहरी;
लेई आई घरि आपणइ, तउ ते नारि प्रति इम भणइ... ५३
रहो अम्ह घरि पुरुष छइ बहु, जे जोइअे ते देसूं सहू;
वयण सुणी श्री चिंति तेह, नगरनायकानुं घरि अेह... ५४
अेह घरि नटवर आवि घणा, निपर अचार अछइ अेह तणा;
अेम जाणी घरि महि जई, दीधा बार तिणें निहचल थई... ५५

॥ दूहा ॥

नगर जोईनइं आवीयो, कुंवर आंबा हेठ;
नारि तउ देखइ नही, जोवइ दह दिस द्रेठ... ५५
मन चिंतइ कारण किसुं, कुणइ हरीय ते बाल;
पग जोईस तेहना, धरीय बुध सुविसाल... ५६
तउ आखि अंजन करी, चाल्युं नयर मझारि;
पग जोतो नारी तणा, पहुतो वेस दुवार... ५७

॥ चउपई ॥

पग जोतुं वेस्या घरि गयुं, विद्या प्रभाव अदृष्टिउ थयु;
नारी तणी सुध लाधी खरी, सही अेणी वेस्या अपहरी... ५८
सुध जाणीनइं पाछुं वलुं, नारि विरह मन माहि टलुं;
गजसिंघ राई बुध मन धरी, विप्र वेस नव ततखिण करी... ५९
खंध जनोई कर टीपणुं, निमत्त वात मुख भाखइ घणुं;
विप्र थई तेहनि घरि गयुं, आवतउ वेस्या पेखीयुं... ६०
वेस्या आदर कीधुं बहुं, निमत्त बात ते पूछइ सहू;
लग्न मंडाव्यो तेणी वार, चिंता छइ अम्ह अेक अपार... ६१

लग्न जोई जोसी इम भणइ, श्री चिंता छइ मन तुम्ह तणइ;
ते परहुणी आवी वरी, ते तो सिध सिकोतरी... ६२
असी वात तिणि बांभण कही, वेस्या मन जाणि अे सही;
जिम कह्यो पूरव संकेत, तेणी वात ते थईय सचेत... ६३
जोसी जोइस तुम्ह जुवों खरो, अे दोषासर पाछो करो;
अम्ह परहुणी आवी च्यारि, रूपवंत नव जोबन नारि... ६४
कोई दोष विसेषे इही, बार देई घरि मांहि रही;
अे कारण तुम्ह टालो हेव, जे जोईअे ते लाव्युं देव... ६५
विप्र भणइ वेस्या अवधारि, विसम दोष छली अे नारि;
हुं अे दोष बोलावसि जई, तूं वेगली थइ रहिजे सही... ६६
ताम कुंमर पहुतो बारणइ, नारि चिहुं प्रति ते इम भणइ;
मन असमाधि म करिस्यो घणी, किसी सुणी वयण ते नारी हसी(?)... ६७
जाणी कंत उगाड्यो बार, स्त्री आवी भेट्यो भरतार;
कुमरे वात तासुं कही, तेतलइ रहो घरि मंहि जई... ६८
वेस्यानइं सीख देसुं जेतलइ, तुम्हे सासती थावो तेतलइ;
बुध करी दिवराव्या बारि, वेस्या बोलावी तिण वारी... ६९
अेह दौष मि जाणों सही, अेह उपाय करेसिउ सही;
वेस्या पूछइ मननी रली, सी सी विद्या जाणो वली... ७०
विप्र भणइ हुं जाणुं सहू, मुझ माहि विद्या छइ बहु;
जाणों कामण मोहण करी, जाणुं वलि(शि)करण बुध करी... ७१
नान्हा माणस गरढो करो, गरढा तणी जरा अपहरो;
वयण [सुणी] ते हरखी जाम, नगरनायका बोली ताम... ७२
माहरी जरा तुम्हे अपहरो, सोल वरसनी मुझनइं करो;
विप्र भणइ मुझनइ सि उदेस, जउ तुझनइं करुं नांन्ही वेस... ७३
तेणी वात वेस्या गहगही, लाख द्रव्य हुं आपसि सही;
भणइ विप्र विद्या हुं करुं, सिर मूंडी परहुं करुं ताहरुं... ७४
अे वेस सघलुं अपहरुं, नग्न वेस पण साचो करुं;
आंखि अंजन करिसिउ सही, तुंझनइं कोअे देखइ नही... ७५
नीमा बलतउ होइ जिहां, तेव सिंदर लेइ आवइ इहां;
तिण आहवान करेसि तु अम्हे, लघुवेसें सही थासो तुम्हे... ७६

ते विध सघली तेणइं करी, नगरथी वेस्या संचरी;
जिम नीमा ज मली ते गइ, तिण धूंवाडि आकुली थई... ७७
नयन अंजन गलीनइं गयुं, ते सरूप लोके पेखीयुं;
दीठी रूप नग्न ते तिहां, लोक चिउं दिस वींटी रह्या... ७८
अेक कहइ अे डाकणि होय, छल करवा आवीछइ लोय;
वेस्या साही बांधी तेउं, चाल्या राजभुवन ते लेउ... ७९
देखी लोक हसइ हडहडइं, अेक कउतिग जोवंता पडइ;
अेक जुवइ वलि ऊंचा चडी, अेक लोक पाडइं तूंबडी... ८०
अेक कूकूवा करइं अपार, अेक करइं तेहनों विचार;
चउपट चऊटइ आणी जिसइ, गजसिंघ कुमार ते दीठी तिसइ... ८१
सिर मुंडायुं अेहनुं आज, लोकोमाहि तां अणावी लाज;
वेस्या राजभुवन लेई गया, पूठइ लोक घणा अेक थया... ८२
स्वामी डाकणि साही अम्हे, अे वात सब जूवो तुम्हे;
नगरनारि नइ माथो मूंड, राइ भणइ अे भंडो रंड... ८३
नाखो कूप मांहि अे परी, सही अे डाकणइ लागी खरी;
राय आदेससुं सांभली, तउ ते नारी विगोवी वली... ८४
खर ऊपरी बइसारी ताम, कांइ न राखी तेहनी माम;
आगल काहल बाजइ तूर, मिल्या लोक विगोवा पूर... ८५
इसी बात गणिकाइ सांभली, छोडावि वाते वेस्या मिली;
पांच सात हूई अेकठी, चाली राजभुवन ऊलटी... ८६
मुख बुंबारव करइ अपार, स्वामी करो अम्हारा सार;
अे नारि डाकणि नही, कांइक कारणि ठइ सही... ८७
पाछी तेडी पूछउ वरी, सुणी वयण राजा बुध करी;
नगरनायका तेडी जाम, राय वात सब पूछइ ताम... ८८
खरी वात अम्ह आगली कहो, तउ जीवतव्य सही तुम्ह लहो;
अेणें अवसरि कुंवर आवीयो, राजा प्रति जुहार ज कीयो... ८९
पूरव वात तिणि सघली कही, नगरनायका फीकी थई;
वेस्या छोडावी तिणि वार, कुमरिं दीधी सीख अपार... ९०
कालमुही लाजी घरि गई, मास अेक मुंह ढांकी रही;
राइ कुवर मान्या बहू, पहिरावी ते च्यारि वहू... ९१

साथ संघाति चलाव्या तेय, हरिपुर नयर वउलाया लेय;
भेट्या नारीना माय तात, तिणें कही आपण पूरव वात... ९२
सार जमाइ पामी करी, विहवारीइं हरख मन धरी;
कीधा उछव तिणि अपार, अेक जमाई सुसरा च्यारि... ९३
गजसिंघ कुमर संतोष्यो घणो, पूरव चरित्र कह्यो आपणो;
गीर वइताढ भणी चालीया, विद्याधर थई सांखि लीया... ९४
आज अवधि पुहुती तिह तणी, हिव वाट जोसें ते घणी;
पीहर श्री मूकी आपणी, चाल्यो कुमर वइताढें भणी... ९५
विद्यातणइं प्रभावे करी, आव्यो कुमर तिहां संचरी;
तिहां भेट्यो विद्याधर राय, जई सुसरानइं लागो पाय... ९६
पूरव चरित्र कह्यो ते सहू, विद्याधर राय हरख्यो बहू;
आणो करावो मुझनइ तुम्हे, **दसरथ** पुर सही जास्यूं अम्हे... ९७
राज मूक्यां हूवा दीह घणा, जोस्ये वाट मंत्री आपणा;
सुणी वयण विद्याधर राय, सासुरवासुं करइं उछहि... ९८
दे *राजा सीखामण घणी, करजो सार वेगी अम्हतणी;*
आणो कराव्यो वेगो ताम, चाल्यो कुंवर करी प्रणाम... ९९
विमान बइसी चाल्यो तेउ, आव्यो **हरिपुर** नारी लेउ;
कुमर हरखुं मनह अपार, विवहारीया तेडाव्या च्यारि... १००
आणो करावो वहिला थई, दसरथ पुर अम्हे जास्यूं सहीं;
विवहारीया मन हरख अपार, सासुरवासुं कीधो सार... १०१
च्यारी सुनारि लेई करी, चाल्यो कुंवर साहस धरी;
क्रमिं क्रमिं पुर आवीया, तव प्रधान बहु उछव कीया... १०२
साम्हो आव्यो सघलो लोक, नगर मांहि हूवो निरघोष;
ठामि ठामि गूडी ऊछली, पोलइं तोरण बांध्या वली... १०३
जब पधारुं नगर नरिंद, घरि घरि ओछव बहु आणंद;
राज करइ गजसिंघ नरेस, सुखभरि हूवो सघलो देस... १०४
पुन्यें करी सुख संपत्ति होय, मनवांछित फल पामइ तोय;
अेक दिवस मन चिंतइ नरेस, हिव जाइसि **उजेणी** देस... १०५
जई पितानइं करुं जुहार, कटक सजाइ करुं अपार;
गयवर हयवर पायक बहू, चतुरंग सेन्या मेली सहू... १०६

जे नरनारी सार्थी लेय, नयर उजेणी चालुं तेय;
आवी भेट्यो **जयसिंघ** राय, मातपितानइ लागो पाय... १०७
रिधि देखी रंज्यो भूपाल, भाग्यवंत मोटो सुविसाल;
राजकुमरि अेणी परणी घणी, आण वरतावी जग आपणी... १०८
सारी विद्या पाम्या बहू, देस विदेसें जाणइ सहू;
राय पूछइं पहिलुं वृतंत, भंजइ कुमर मननी भ्रंत... १०९
मइ जे नगटी कीधी देव, तेह वात तं सुणो संषेव;
रिध विस्तरिउ कह्यो सरूप, हियडइ हरख्यो जयसिंघ भूप... ११०
तव तेड्यो आपणुं प्रधान, राइं तेहनइं दीधुं मान;
हुं अवचारी पाटो सही, सास्त्र वात कांई जोई नही... १११
दसरथपुरनुं पालइ राज, पुनें सीधा सघला काज;
पून करी सव टलीया अली, मनवांछित सुखसंपद मिली... ११२

॥ दूहा ॥

राज देई कुमारनइं, लीअे चारित्र उदार;
संजम पाली निरमलुं, गयुं स्वर्ग्यापुरि बार... ११३
गजसिंघ भूपतिनी चरीत, मइ कहुं संखेव,
भणइ गुणइ जे सांभलइ, सुख संपत्ति लहइ हेव... ११४

॥ चउपइ ॥

सहि गुरु तणा वयण मन धरी, बोल्युं गजसिंघनुं चरीत,
जे नर जग इम पुन्य करंति, सुंदर राज तेह नर पामंति... ११५

॥ इति श्रीगजसिंघकुमार चतुःखण्ड चतुष्पदी सम्पूर्ण ॥

लिखितं पूज्य ऋषिश्री सुभटाख्येनाऽनुचर मनहरऋषीणा लिपीकृता पठनार्थं श्री युगप्रधानजी पूज्य ऋषिश्री धनराजजी तस्य सेवक ऋषिश्री श्रीपति अभिधानेन लिखतं धाइठा नगर मध्ये संवत १७०८ वर्षे अश्वन विदि १३ भोम दिने सिधयोगे लिखितं परोपगाराय लेखकपाठकयोश्चिरं नंद्यात् । शुभं श्रीरस्तु कल्याणमस्तु ॥

* * *

रामसनेही सम्प्रदायना महन्त दिलसुखरामजीने (इन्द्रप्रस्थ) दिल्ही पधारवानुं निमन्त्रण आपतो विज्ञप्तिपत्र

– हस्तप्रत परथी वाचना : मुनि सुयशचन्द्रविजय गणि, सुजसचन्द्रविजय
भावानुवाद–अर्थघटन–संशोधन : निरंजन राज्यगुरु

विज्ञप्तिपत्र लेखननो प्रचार जैन सम्प्रदायनी आगवी देन छे. अन्य सम्प्रदायोमां आ जातना विज्ञप्तिपत्रो बहु जूज लखायेलां जोवा मळ्यां छे. जो के अेनी पाछळ मुक्य बे कारण छे : (१) जैन सम्प्रदायमां चातुर्मास व्यवस्था होवाथी चातुर्मासनी विनन्ती करवा माटे अथवा तो क्षमापन करावका माटे पत्रो लखाता, तेवुं कोई विशेष पत्रलेखननुं कारण जैनेतर सम्प्रदायमां प्रायः नथी. (२) जेटला प्रमाणमां जैन सम्प्रदायना हस्तलिखित ग्रन्थो आजे पण जैन सम्प्रदायना भण्डारो तथा ग्रन्थालयोमां सचवायेला मळे छे तेटला प्रमाणमां जैनेतर सम्प्रदायोना भण्डारोमां साहित्य सचवायेलुं जोवा नथी मळतुं. छतां भारतमां विधविध प्रान्तोमां विविध धर्म/पन्थ/सम्प्रदायोनां मन्दिरो, मठो, आश्रमो तथा सन्त/भक्त/कविओनी अनेक जग्याओ द्वारा प्रकाशित थयेलुं अने अप्रकाशित पडेलुं साहित्य हजु संशोधकोनी नजरे नथी चड्युं, घणी जग्याओमां सन्तोनुं अमूल्य साहित्यधन हस्तप्रतो रूपे आजे पण पेटी-पटाराओमां सचवाईने ऊधई तथा उन्दरोना मुखथी क्षीण थतुं आ लखनारे निहाळ्युं छे.. जेनो कशो ये उपयोग थतो नथी, अेनी उपयोगिता पण जग्याओना पदाधिकारी महन्तो नथी जाणता, अेवा अमूला साहित्यधनने प्रकाशमां लाववा, दरेक सन्त-कविना जीवन अने कवन विशे, अेनी परम्परा विशे तथा जग्या-सन्तस्थानना इतिहास विशे प्रमाणभूत सामग्री अेकत्र करवानी खास जरूर आ संशोधन, निरीक्षण अने परीक्षणना युगमां, अेक साहित्य-संशोधक तरीके मने लागे छे.

आपणे त्यांना अनें छेक विदेशी ग्रन्थालयोमांना हस्तप्रत भण्डारोमां सचवायेली तमाम जैनेतर हस्तप्रतोमां जळवायेली सामग्रीनी सम्पूर्ण प्रमाणभूत-सर्वाङ्ग सूचिओ पण प्राप्य नथी. अनेक हस्तप्रत-भण्डारोनी प्रकाशित सूचिओमां 'गूटको', 'पदसंग्रह', 'विविध कविओनां पदो-कीर्तनो' जेवां शीर्षकोथी हस्तप्रत-नोंधणी थई छे. पण अेमांनी सामग्री विशेनी जाणकारी नथी मळती. अेमांये जे हस्तप्रतोमां कशो ज समयनिर्देश प्राप्त नथी थतो अेवी तो सेंकडो हस्तप्रतोमां छूटक-गौण कविओ-

सन्तो-भक्तो द्वारा हजारोनी संख्यामां रचायेली गद्य/पद्यरचनाओ नोंधणी अने सूचि माटे कोईक अभ्यासुनी राह जोई रही छे.

प्रस्तुत पत्र जैनेतर रामानंदजीनी परम्पराना, रामसनेही सम्प्रदायना महन्त स्वामी श्री १०८ दिलसुद्धरामजी (अव. वि.सं. १९५३ / ई.स. १८९७)ने उद्देशीने माळवाना रतलाम शहेर (कडी ७४-७५)मां रामदुवारा नामना धर्मस्थानके मोकलायो छे. ज्यां (शाहपुरा-मेवाडनी मुख्य गुरुगादीना गादीपति) महन्त श्रीदिलसुद्धरामजी उपरांत ९० जेटला सन्तो/साधुजनो हाल निवास करी रह्या छे. पत्र अपूर्ण होवाथी कोणे, कई सालमां पत्र लखाव्यो छे ते स्पष्ट थई शकतुं नथी. पत्रनुं लेखन दिल्ही-कटला-इन्द्रप्रस्थ (पद्य ५७ अने १३२)थी कवि जगन्नाथ द्वारा थयुं छे. सात पद्यो (९, १०, १८, १९, २०, २१, २३)मां 'जगन्नाथ' नामाचरण मळे छे. लखनार जगन्नाथ साथे दिल्ही कटलाना सन्तस्थानमां रामप्रसाद, भगतराम, भागीरथीराम, नानो भजनांराम वगेरे चारेक साधुजनो निवास करे छे. अहीं (पद्य ११९) 'अमरावसिंहनी विनती' शब्दो द्वारा कदाच ते समयना राजवीनो निर्देश थयो होवानो सम्भव छे. प्राप्त अधूरी झेरोक्स नकलना पाछळना भागमां मात्र आटलुं वंचाय छे – ईति अरजी संपूरण, मिति श्रावण सुदी ५ बुधवारे शुभं भवतु ॥

विज्ञप्तिपत्र लखनारा जगन्नाथ सोनी ई.स. १८२४ सुधी हयात हता. जेमनी 'जथारथ बोध', 'फूलडोल समाधि', 'ब्रह्मसमाधि लीन जोग', 'गुरु लीला विलास', 'चौराशी बोल', 'बिनता बोल' जेवी रचनाओ रामसनेही सम्प्रदायमां खूब जाणीती छे.

पत्रनी शरुआतमां रामसनेही सम्प्रदायना स्थापक स्वामी रामचरण महाराजनी स्तवना कराई छे. त्यार पछी भुजंगी छन्दना पद्योमां रामचरण, रामजन, दूल्हैराम, चत्रदास, नारायणदास, हरिदास, हिंमतरामजीनी स्तुति कवि करे छे. महंत श्री १०८ दिलसुद्धरामनी वर्णनी पद्य ३८ थी १००मां कराई छे. त्यार पछीना पद्योमां सन्त श्रीदिलसुद्धरामजी साथे बिराजमान साधुजनोना गुणोना वर्णन साथे यादी दर्शावीने दिल्ही पधारवानी विनन्ति करवामां आवी छे, पत्रान्ते सहवर्ति साधुवृन्दनी पण वन्दनापूर्वक विनन्ती कविअे आलेखी छे. त्यार पछी गुरुमहिमाना पद्यो वर्णवतां पत्र अपूर्ण रहे छे.

अत्यारे प्राप्त पत्रमां १३३ कुल कडी छे, पण हस्तप्रतमां सळंग क्रम तो मात्र ११७ सुधीना ज अपाया छे, अे पछी (हजुर पधारणेको दोहा) पद्योमां १,२,३

मुजब क्रमांको अपाया छे. अे मुजब १२०मुं पद्य ''बतीसांमैं धुर अखिर, ता आगैं सत बीस, पांण सहत ईकबीसमैं, रखीयो बिसबाबीस...'' कदाच कडी संख्यानो निर्देश करतुं होवा छतां अे संकेतो मुजब गणतरी करी शकाती नथी. अे ज प्रमाणे ५३मां पद्यमां ''धुर अक्षर तुक सप्तकी तिन चरणनकी मैं सरनी...'' पण संकेतात्मक निर्देश थयो छे. धुर अखिर/धुर अक्षर ते दोहा अेटले के बे पंक्तिना पद्यो माटे वपरायो होवानी सम्भावना करी शकाय. अे मुजब सातमा क्रमना दुहामां सतगुरुनी वन्दना ''हरि सूं गुरु बसेषता, कैसै जाणी जाई, हरि बान्धे गुण तीनमैं, सतगुरु लेत छुडाई''. आ रीते थई छे. (तेनुं हुं शरण लउं छुं अेवो भाव जणाय छे). तो ११९मा पद्यमां आवता अंकनिर्देशक शब्दो ''दिसा आदि काली अन्त हु, चितवो परम-क्रिपाल, अमरावसिंहकी बीनती, पांवन करो दयाल...'' कदाच दश दिशा, आदि अेक, काळ त्रण, अन्त शून्य जेवां अर्थघटन तरफ दोरी जाय छे पण कशुं स्पष्ट करी शकातुं नथी. 'आनां जाद गुलाम/षानां जाद गुलाम/खानां जाद गुलाम' शब्द बे वखत (३/१२३, ६/१२६) वपरायो छे जेनो अर्थ 'जे मात्र खाधाखोराकी लईने सेवा करे छे तेवो सेवक के गुलाम' - अेम थई शके.

२६ चोपाई, ५१ दुहा, १० कवित, ४ सोरठा, १ निशाणी, १४ भुजंगी, ३ मनहर, ८ कुंडळिया, ५ पध्धरि, १ सवैया, २ झूलणा, २ वचनिका, ६ छन्द बेताल मळी कूल १३३ पद्यो थाय छे.

प्रस्तुत विज्ञप्तिपत्रमांथी जैनेतर अेवा रामसनेही सम्प्रदाय विशे जे ऐतिहासिक माहिती अने साधुजनोनी नामावलि मळे छे ते विशे सन्तसाहित्यना विविध ग्रन्थोमां संशोधन करतां नीचे मुजबनी माहिती प्राप्त थई छे. जेमां आचार्य परशुराम चतुर्वेदी द्वारा लखायेला ग्रन्थ 'उत्तरी भारत की सन्त परम्परा' (प्रका. भारती भण्डार, ईलाहाबाद, आ.३, ई.स. १९७२, पृ. ६६३ थी ६८६), उपरांत 'राजस्थानी साहित्यना इतिहासनी रूपरेखा' (हीरालाल माहेश्वरी, गुजराती अनुवाद - उपेन्द्र पण्ड्या, साहित्य अकादेमी, दिल्ही, आ. १, १९८४), 'राजस्थान की भक्तिपरम्परा अेवं संस्कृति' (दिनेशचन्द्र शुक्ल, ओंकारनारायणसिंह, प्रका. राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, १९९६), 'श्रीरामस्नेही सम्प्रदाय' (केवळस्वामी, बिकानेर, १९५९), 'रामस्नेहीसम्प्रदाय' (त्रिपाठी राधिकाप्रसाद, फैजाबाद, १९७३), 'रामस्नेही सम्प्रदाय की दार्शनिक पृष्ठभूमि' (शिवशंकर पाण्डे - दिल्ही.) जेवा ग्रन्थोमांथी सन्दर्भो लीधा छे.

रामसनेही सम्प्रदायनी मुख्य त्रण शाखाओ प्रवर्तमान छे. 'रैण शाखा', 'सिंहथल खडापा शाखा' अने 'शाहपुरा शाखा'. आ तमाम शाखाओना मुख्य धर्मस्थानको के जग्याओने 'राम दुवारा' नामथी ओळखवामां आवे छे. जेमां खेडापा अने रैण शाखाना स्थापक तरीके दरियावजी हरिरामदासजी तथा शाहपुरा शाखाना स्थापक तरीके रामचरणदासजीनुं नाम मळे छे. 'शाहपुरा' शाखाना प्रवर्तक श्रीरामचरणजीनो जन्म पोताना मोसाळमां जयपुर राज्यना ढुंढाण प्रदेशमां सूरसेन अथवा सोडो गामे वि.सं. १७७६ महा सुद १४ शनिवारना रोज वणिक परिवारमां थयो हतो. पितानुं नाम वखतरामजी अने मातानुं नाम देऊजी हतुं. तेओ मालपुरा नजीकना बनवाडी गामना वतनी हता. रामचरणदासजीनुं जन्मनाम 'रामकिशन' हतुं. युवावस्थामां जयपुर नरेशे अेमने प्रधान बनावेला. त्यारबाद अेमनी मुलाकात मेवाड प्रान्तना दांतडा गामना रामानन्द परम्पराना संतदासजीना शिष्य कृपारामजी साथे थई. वि.सं. १८०८ना भादरवा सुद ७ शुक्रवारे अेमणे 'गोदड पंथ'नी दीक्षा लई 'रामचरण' नाम धारण कर्युं. आ संतदासजीनो देहांत वि.सं. १८०६ना फागण सुद ७ शुक्रवारे थयेलो. स्वामी कृपारामजीअे वि.स. १८३२ भादरवा सुद ६ सोमवारे विदाय लीधी अे पहेलां ज रामचरणदासजीअे गोदड वेशनो त्याग करी पर्यटन आदर्युं अने वि.सं. १८२६मां शाहपुरा पहोंच्या. त्यांना राजाअे जग्या आपी अने रामसनेही आश्रमनी स्थापना थई. वि.सं. १८५५ना वैशाख वदी ५ गुरुवारे रामचरणदासजीअे ७९ वर्षनी वये आ जगतमांथी विदाय लीधी. अेमणे दीक्षित करेला शिष्योनी संख्या २२५नी हती. जेमां १२ प्रमुख शिष्यो हता. जेमांथी रामजनजी (वि.सं. १७९५-१८६७) तेमना उत्तराधिकारी तरीके शाहपुरानी गादीअे बिराज्या. (जेमणे रामचरणदासजीनी 'अनभेवाणी' नामक लगभग अठ्यावीश हजार पद्यरचनाओनुं संकलन करेलुं.) अेमना पछी दूल्हारामजी त्रीजा महन्त थया जे वि.सं. १८८१ सुधी रह्या. ई.स. १८१०मां शाहपुरानी गुरुगादीअे आवेला दुल्हेराम के दुल्हईरामे (ई.स. १७४९-१८२४) १४००० जेटला श्लोक/साखी/अंगोमां 'वाणी' नामे रचना आपी. अेमना पछी गादीअे आव्या चतुरदासजी के चत्रदासजी जे मात्र छ वरस गादीअे १८८७ सुधी रह्या. त्यारबाद अनुक्रमे नारायणदासजी (अव.सं. १९०५), हरिदासजी (अव.सं. १९२१), हिम्मतरामजी (अव.सं. १९४७), दिलशुद्धरामजी (अव.सं. १९५३), धर्मदासजी (अव.सं. १९५४), दयारामजी (अव.सं. १९६२), जयरामदासजी (अव.सं. १९६७), निर्भयरामजी (अव.सं. २०१२), दर्शनरामजी (जन्म सं. १९५४-वि.सं. २००७ / ई.स. १९५१मां हयात) सुधी गादीपतिओ आवता रह्या छे.

भीलवाडाना नवलराम मन्त्रीअे रामचरणजी पासे ई.स. १७६० पछी

सहकुटुम्ब दीक्षा लीधेल, अने गुरु रामचरणजीनी वाणीनुं प्रथम संकलन कर्युं. तथा पोताना काव्योनो संग्रह 'नवलसागर'ना नामे तैयार करेल, आ उपरान्त 'सर्वांगसार'नामे ८५ जेटला सन्तो-(जेमां गोरख, नामदेव, कबीर, अग्रदास, नरसी, पीपा, रैदास, दादु, मीरां, मतिसुन्दर, मलुक, काजीमहेमूद, सम्मन, काळु, घाटमदास, द्वारकादास, वैणी, प्रेमदास, बोहिथदास, बालकराम, मुरलीराम, माधौदास, पृथ्वीनाथ, चेतन, जईरामदास, जईमल, भींव, मांडण, मोतीराम, मुकुन्द, सोम वगेरे ख्यात, अल्पख्यात अने अज्ञात कविओ)नी रचनाओनो संचय करेलो.

रामसनेही सम्प्रदाय निर्गुण रामनी उपासना करे छे. सम्प्रदायना मूळ पुरुष श्रीरामचरणजी वणिक परिवारमांथी आवता होईने जैन धर्मना घणा सिद्धान्तो आ सम्प्रदाय साथे संकळायेला जोवा मळे छे. प्रतिदिन पांच वखत प्रार्थना-उपासना करे छे. काष्टना कमंडळमां पाणी अने माटीना वासणोमां भोजन करे छे. दीवो प्रकटावे पण कोई जीवजन्तु बळी न जाय माटे ढांकी राखे छे. चातुर्मासमां अनिवार्य कारण होय तो ज बहार नीकळे छे. रात्रे भोजन के पाणी लेता नथी. वैरागीओमां अधिकतर 'विदेही', 'अवधूत' के 'मौनी' दशामां रहे छे. केटलाक साधु वस्त्रो धारण करता नथी. महंत सदाये 'शाहपुरा'मां वसे छे. पांच मुख्य साधुओना पंच के पंचायत द्वारा आश्रमनो वहीवट चाले छे. रामसनेही सम्प्रदायना मठोने रामदुवारा तरीके ओळखवामां आवे छे, जेमां नागौर, मूंडवा, लाडनू, खजवाणा के कुचेरा, पोकरण, बीकानेरना रामदुवारा मुख्य गणाय छे.

प्रस्तुत पत्रनी रचनामां प्रादेशिक सधुक्कडी हिन्दी भाषानो ज महत्तम उपयोग थयो छे. मारी क्षमता मुजब आ पत्रनुं सम्पादन कर्युं होई केटलाक स्थाने पंक्तिओ स्पष्ट थई नथी. त्यां अन्डरलाईन करी छे अने अर्थघटनमां टपकां करी खाली जग्या राखी छे, ते अंगे जाणकारोने मार्गदर्शन आपवा विनन्ति छे. सम्पादनार्थे प्रतनी झेरोक्ष आपवा बदल श्रीकैलाससागरसूरिजी ज्ञानभण्डार (कोबा)ना व्यवस्थापकश्रीनो तथा हस्तप्रतनी झेरोक्स परथी वाचना करी आपवा बदल मुनिश्री सुयशचन्द्रविजयजी गणि तथा सुजसचन्द्रविजयजीनो खूब खूब आभार. अने परम पूज्य आचार्यश्री विजयशीलचन्द्रसूरिजी महाराज साहेबे आ कार्य माटे मने लायक गण्यो अे बदल मारी जातने भाग्यशाळी गणुं छुं.

*

स्वामीजी श्री १०८ श्री रामचरणजी महाराज सदा सहाई,
स्वामीजी श्री १०८ श्री हरिदासजी महाराज सदा सहाई...
'अथ अरजी लिख्यते''

दोहा –

सिध श्री सरव ओपमा, लायक हो महाराज,
अरजी लिखूं उच्छाव सूं, अे मालम होई है आज. १
आप सदा सुखदांन हो, निति निरंजन रूप,
परम संत आनन्दमय, उपमां ताहि अनूंप. २

(सिद्धश्री सर्वे उपमालायक महाराजश्रीने मालुम थाय के मनना अति उमंगथी आ अरजी लखी रह्यो छुं. आप तो सदा सुखना दाता छो, नित्य निरंजनरूप छो, आनंदमय परम संत छो, अनुपम अेवा आपने कई उपमा आपी शकाय ?)

कबित –

श्रीरामानंद ज्युं प्रगट, संत ही दास उजागर,
ररंकार की छांय बडे, जन सुख के सागर,
वा गादी पर रहै, क्रिपालं परम-दयालं
जिनके चरणां परत सबै, जीव होत निहालं
जिनके सिष समरथ भये, जनम सुधारण राज,
कलि जीवन हिति प्रगटे, श्रीरामचरण महाराज. ३

(परम गुरु श्रीरामानंदजी महाराज जेवा ज प्रगट संत, जे दास्यभक्तिने उजागर करनारा, ररंकारना जापनी छायामां वसनारा, सुखना सागर अेवा मोटा महापुरुषनी गादी पर बेसीने परम दयाळु-कृपाळु के जेना चरणे-शरणे आव्याथी तमाम जीवो न्याल थई जाय छे, जेना अनेक समर्थ शिष्यो छे अेवा रामचरण महाराज आ कळियुगना जीवोना हित माटे प्रगट थया.)

सोरठा –

श्रीरामचरण महाराज, नांम तुमारो अगम है,
निगम न पावै पार, अेके मुखि में काहा कहूं. ४

(श्रीरामचरण महाराज! आपनुं नाम अगम्य छे, जेनो पार निगम अेटले के शास्त्रो पण न पामी शके एने हुं मारा अेक मुखथी कई रीते कही शकुं ?)

कबित –

श्रीरामचरण महाराज, भलां अवतार ज लीनों,
गुरु मुख सबद उचार, धरम आद बहू झीनो,
राम मंत्र को जाप छाप, धरि रामसनेही
सब जीवन रिछपाल, व्रत सुख सिंध जु अेही,
बीतराज मन जीति प्रीत, हरिसूं बहो भारी
आठूं पहर अखण्ड, भजनसूं लागी तारी
करणीका नही पार, काहां लगि बरणि सुणाउं,
उ लखी न जावे कोई, बुधियाडी कया गाउ,
'अधम-उधारण' रामजी, बिडद नभांवन आप,
अेसे सतगुरुकी सरन, मिटि जाई तोसों ताप. ५

(श्रीरामचरण महाराजे कृपा करीने अवतार लीधो छे. सतगुरुना मुखेथी आदि धर्मनो अत्यंत सूक्ष्म शब्द राममंत्रनो जाप झीलीने अने रामसनेही सम्प्रदायनी छाप धरीने तमाम जीवोना रक्षण अर्थे सुखना सागर जेवुं वर्तन करनारा, वितरागी मनने जीतनारा अने जेनी परमात्माथी अत्यंत प्रीति छे, आठे प्रहर अखण्ड भजनथी जेनी ताळी लागी छे, जेनी करणीनो कोई पार नथी अेने कई रीते वर्णवी शकुं ? जेने कोई लखी के वर्णवी शके नहीं अेने मारी मर्यादित बुद्धिथी केम गाउं ? अधमओधारण रामनुं बिरुद निभावनारा आप जेवा सतगुरुने शरणे जतां तमाम-त्रिविधिना ताप मटी जाय छे.)

दोहा –

रामचरण गुरु साहि निति, ओर न रिछक कोई,
बेद साध सुमरति कहै, भवजल त्यारण दोई. ६
हरि सूं गरु बसेषता, कैसे जाणी जाई,
हरि बांधे गुण तीनमैं, सतगुरु लेत छुडाई. ७
आप तिरै त्यारै जगत, जमसूं लेह बचाई,
अैसे सदगुर संबल है, रामचरण गुण गाई. ८

सतगुरु गुण अगम है, निगम न पावै पार,
जगंनाथ आणा उकति, सब कोई करै विचार. ९

(रामचरण गुरुने नित्य पकडी राखे अने अन्य कोई ईच्छा न दाखवे अे बे वस्तु वेद, साधुजनो अने स्मृतिग्रन्थो कहे छे तेम भवजळमांथी तारी देनारी छे. परमात्माथी पण गुरुनी विशेषता अे छे कें परमात्मा त्रण गुणोमां बांधे छे, ज्यारे सतगुरु त्रणे गुणोना बंधनमांथी छोडावनारा छे. पोते तो तरे छे पण जगतने पण तारे छे, यमना पंजामांथी छोडावे छे अेवा बळवान मारा सतगुरु रामचरणना हुं गुण गाउं छुं. सतगुरुना गुणो अगम छे, जेनो शास्त्रो पण पार पामी शकता नथी अेवां जगन्नाथनां (मारां) वेणनो बधा विचार करजो).

छंद - निसाणी –

रामचरण गुरु ब्रह्म मिलि बोले जन बाणी
साच जूठी नरणै कीयो कहै बचन प्रमांणी,
कीरत निज सतगुर तणी मुखि आप बखांणी,
राम भजन प्रतापथी जग सारै जाणी,
भरती बर बैराग ले कुल चाढयो पांणी,
प्रीया येक सत येक हो निज सुक्ति बसांणी,
साध लछि सारै लीयां निरमल निरबांणी,
निरसंसै निरवासनां जन येह सह नाणी,
भोजन ले निज व्रतसुं नही आस बिरांणी,
जगत सकल पावां पडे कया राजा राणी,
नाना सुख हाजर खडा नहीं देख फुलांणी,
जगतर कुं धीजे नहीं अैसी मन आंणी,
तिरलोकी धन पाई कैं त्रसनां जध टांणी,
ईम कलिजुग घोर अंधारमैं हरि भगति चलांणी,
भजन करै आठूं पहर नहीतु रतअ धांणी,
रांम सुधा पावै पीवै जन बडे रसांणी,
देस देस परगट भये ब्रिंद बहो प्राणी,
तोल माफ आवे नही ये अकत काहांणी,

जगत हजारा ब्रिंद मिलि धनिं धनिं करांणी,
गरवा सतगुरु परसतां सब सूंझ मिलांणी,
जाका संग परतापसूं टली हे जमदांणी,
जगंनाथ देखी कहै अेह सति निसांणी... १०

(रामचरण गुरुने ब्रह्मसाक्षात्कार थयो छे अेम अनेक लोको कही रह्या छे. ए साचुं के जूठुं अेनो निर्णय वचनना प्रमाणथी थई शके. पोताना सतगुरुनी कीर्ति पोताना मुखथी सौ वखाणे, पण रामभजनना प्रतापथी आखुं जगत जाणे छे. तीव्र वैराग्य लईने .... जेम प्रिया अेक ज होय अेम सत अेक ज होय अेवी अेमनी निर्मळ, निर्वाणी, निःसंशय, निर्वासना भरी साधुताने लोकसमुदाये परखी छे अने बिरदावी छे. पोताना व्रत मुजब भोजन लेनारा, बीजा कोईनी आशा नहीं करनारा, राजा राणी सहित सकळ जगत जेने पाय पडे छे, तमाम प्रकारनां सुखो हाजर होवा छतां जे फूलाता नथी, जगमां तरनारानी कदी धीज (कसोटी/परीक्षा) करवी नहीं अेवो मनमां संकल्प करनारा, त्रणे लोकनी संपत्ति पाम्या होवा छतां जेमणे तृष्णाने टाळी छे अने आवा कळियुगना घोर अंधकारमां हरिभक्ति चलावी छे, आठो प्रहर जे भक्तिमां नहीं तो ध्यानमां लीन रहे छे, रामसुधारस जे पीवे छे अने सौने पाय छे अेवा रसिक सदगुरु, देश देशमां प्रगट बहोळा प्राणी वृन्दोना तोलमापमां आवता नथी अे अकथ कहाणी छे. जगतना हजारो वृन्द मळी धन्य धन्य अेम उच्चारे छे अेवा गरवा सतगुरुनो स्पर्श थतां तमाम सूझ/जाणकारी/ज्ञान मळी जाय छे, जेनी संगतना प्रतापे यमराजाना दाण/कर टळी जाय छे अेवी सत निशानी जगन्नाथे जोई छे अने अेटले ज कहे छे.)

छंद - भुजंगी –

बडी बुधि भारी दयाबंत पूरा, माहा सीलधारी इंद्रीजीत सूरा,
सदा सुखदाई सकल ताप हरणं, नमो रामचरणं नमो रामचरणं. ११
कहै जगंनाथ कहा लगि गांउं, सबै लच्छि धार्या नही पार पांउ,
नही तोर महैमा जथा सकति चरणं, नमो रामचरणं नमो रामचरणं. १२
काहा भोमदानं तुला हेम दीज्ये, करी धेन अखन री दांन कीज्ये,
पटू पाट बसतर करै दान नाजं, बिना रामचरणं कही काज साजं... १३

फिरो च्यार खूंट पुरी श्रष धामं, धरो मुनि बोलो करो जिग नामं,
खणो ताल वापी खाती समाजं, बिनां रामचरणं कही काज साजं... १४
गुरे द्वारि जोधा किते भूप ठाठे, सुता सुत बंधु त्रया रुप चाढे,
सुखपाल संन्या रथां बाजिराजं, बिना रामचरणं कही काज साजं... १५

(जेमनी बुद्धि विशाळ छे, पूर्ण दयावंत छे, महांशीलधारी इन्द्रियजीत शूरवीर छे, सदाये सुख देनारा छे, सकळ तापोनुं हरण करनारा छे, अेवा रामचरण गुरुने हुं वंदन करुं छुं. जगन्नाथ कहे छे के हुं क्यां लगी गाउं ? तमाम लक्षणोथी युक्त धारुं छतां अेमनो पार पामी शकुं तेम नथी, आपनो महिमा यथाशक्ति गावा माटे आपनुं शरण लईने उच्चारुं छुं के मारा रामचरण गुरुने हुं वारंवार वन्दन करुं छुं. गमे तेटलां भूमिदान, सुवर्णदान, खूटे नहीं अेटली गायो भेळी करीने गौदान आपीअे, रेशमी पटोळां-वस्त्रो सहित राजपाटनुं दान करीअे पण रामचरण कह्या विना, सतगुरुनुं शरण लीधा विना कोई काम सरतुं नथी. सप्त पुरी चार धामनी यात्रा करीअे, मौन धारण करीअे के सतत नामस्मरण बोल्या करीअे, लोक समाज खातर तळाव के कूवा खोदावीअे पण सतगुरु रामचरणजीनुं शरण लीधा विना कोई काम सरतुं नथी. गुरुजीना द्वारे केटला ये योद्धा, केटला ये राजा महाराजा दीकरा, दीकरीओ, भाईओ, राणीओ साथे रथो हाथी घोडा सुखपाल सेना धरवा आवे छे, कारण के सतगुरु रामचरणजीनुं शरण लीधा विना कोई काम सरतुं नथी.)

दोहा –

कलिजोगमें ओतारि धरि, श्रीरांमचरण माहाराज,
ग्यांन भगत वैराग दे, बांधी भगतसुं पाज... १६

(श्रीरामचरण महाराजे कळियुगमां अवतार धारण करीने ज्ञान, भक्ति, वैराग्य आपी आपीने आ जगतमां भक्तोना समुदायनी पाळ बांधी दीधी छे.)

कवित –

श्रीरामचरणि माहाराजि कलि मही भअे उजागर,
रिव जैसे उदोत माहा परकासी आगर,
भरम तिमर कूं मेटि माहा परकास जु कीन्हो,
हुते दुःखी जग जीव तिनाकूं सद सुख दीन्हो,

दुःख हरन कीन्हो सही मेट्या दीरघ रोग,
सो अब निश्चे करत है ब्रह्म बिलासी भोग... १७

(कळियुगमां श्रीरामचरण महाराज उजागर थया, रवि/सूर्य समान प्रकाशी भ्रमणाओना अंधकारने मिटावी ज्ञानरूपी प्रकाशनां किरणो रेलाव्यां छे, जगतना जे जीवो दुःखी हता अेमने सदैव सुख प्रदान कर्युं, दीर्घ रोग मटाडी दुःख हर्यां तेओ हवे निश्चे ब्रह्मविलास भोगवी रह्या छे.)

छंद - मनहर –

नांमदेव कबीर भये उजागर अनेक संत
अैसे संतदास प्रगट दयाल जू
जाकी गादी जन क्रिपाल यूं हवाल रीत मांनों
जांनों नीर पंकज कबीर कै कमाल जू,
ताके सिख रामचरण उदे आदीत जैसे सरणि
जीव त्यारे किते दई भगति चाल जू,
जगंनाथ वांके सिष रामजन वाही रीत नीतिं
धरम लीयां सारी गति गरु हाल जू.... १८

(अनेक उजागर संतोमां नामदेव, कबीर जेवा स्वामी संतदास दयाळु प्रगट थया, जेवी रीते कमळमांथी प्रकट थयेला कबीरनी परम्परामां कमाल थया, तेम तेमनी गादीअे जनक्रिपाल/कृपारामजी आव्या, अेमना शिष्य सूर्य समान रामचरणजीनुं प्राकट्य थयुं अने शरणे आवेला अनेक जीवोने भक्तिनुं रहस्य समजावीने तारी दीधा. जगन्नाथ कहे छे के अेमना शिष्य थया रामजंनजी, जेमणे गुरुजी पासेथी नीति धर्मनी शीख प्राप्त करी.)

कुंडल्या –

रांमचरण माहाराज की गादी रांम ही जंन
सतगुरुका चील्हा चलै बास कीयो रन बंन,
बासि कीयो रन बंन पंथ सिर महंत कहीजे,
महापुरस मन जीत तास के सरण रहीजे,
सिख सिधां सिर सेहरो सिर पर रांम चरन
जगंनाथ जग जीवकूं राम नाम दे धंन... १९

(रामचरण महाराजनी गादीओ बेसीने रामजन महाराजे पण गुरुना चीले चालीने रणमां-वनोमां वास कर्यो, सम्प्रदायना श्रीमहंत तरीके महापुरुषनुं मन जीतीने अेमना शरणमां रहीने, रामचरण गुरुनी कृपाअे मस्तक पर सिद्धिनो सेहरो धारण करीने जगतना जीवोने रामनाम रूपी धननी ल्हाणी करे छे अेम जगन्नाथ कहे छे.)

कबित –

रांमचरन पद लींन तींन गुन मांहि समाया
रहे सजीवन सबद अमर भई जिसकी काया,
पाछैं सिख बहु बूंद दिपै केता रवि जैंसे,
ओर अधिक ईक कहूं रांमजन मुखीया ऐसे,
ज्युं नारद हरि गोड हनूं रघुंनाथजी की,
उधव क्रष्ण समीप प्रगट गति अैसी दीखी
पंथनार आखर लीयां सब मुरजाद निधांन
जगंनाथ मैं कहा कहूं करणी तणों बखांण... २०

(रामचरण गुरुना चरणकमळमां लीन थयेला, जेमनामां त्रणे गुणो समाविष्ट छे, जेमनी काया अमर थई छे अने शब्दो सजीवन थया छे जेमना पछी सूर्य समान अनेक शिष्यो दीपी रह्या छे अेवा मुखी रामजन केवा छे? जेम श्रीहरि विष्णुना सेवक नारदजी, श्रीरामचन्द्रजीना सेवक हनुमानजी, श्रीकृष्णनी समीप रहेनारा उद्धवजी जेवी गति धरावनारा मर्यादाना सागर समान श्रीरामजनजीनी करणीना वखाण हुं जगन्नाथ कई रीते करी शकुं ?)

कूंडल्या –

रांमचरण अरु रांमजन अेक अंग तन दोई,
खीर नीर ज्युं अेक रसि भेदाभेद न कोई,
भेदाभेद न कोई उभै अेकां धरि बासा,
रांमचरण के ध्यांई रांमजन करै प्रकासा,
जगंनाथ हरिजन मलां, गुरु सिष जांनो कोई
रांमचरण अरु रांमजन अेक अंग तन दोई.... २१

(गुरु रामचरण महाराज अने रामजनजी बे शरीरमां अेक ज अंग होय, दूध अने पाणी जेम मळी गयां होय, कोई भेदाभेद नजरे चडे नहीं अेम उभय बन्ने *अेक ज स्थानमां वास करता हता, रामचरणनुं ध्यान करीअे अने रामजन* प्रकाशित थाय, जगन्नाथ कहे छे के मने हरिनां जन अेवा गुरु-शिष्य प्राप्त थाय छे.)

दोहा –

रांम गुरु अरु रांमजन, तीनूं अेक सरूप
ईनमें भेद न जांनीअे, त्यारण तिरण अनूंप... २२
तींन बहुणी नां मिटै, चोरासी की मार,
जगंनाथ साची कहै, या में फेर न सार... २३

(राम, गुरु तथा रामजन अे त्रणेनुं अेक ज स्वरूप छे, तारण तरण अनुपम अेवा आ संतोमां भेद करशो नहीं. आ त्रणनी कृपा विना चोराशीना फेरानो मार मटशे नहीं, अेमां कोई सन्देह नथी अेम जगन्नाथ साची वात कहे छे.)

कबित्त –

कलिजुगमै अवतार लें भगति पाट बैठे सही,
..... (छन्दनी दृष्टिअे अहीं १ पद खूटे छे.)
श्रीरांमचरण महाराज आप भगती बिसतारा
रांमजनजी पाट जीव बहोते निसतारा,
दुल्हैरांम माहाराजजी नामथि भगती साजा,
चत्रदास माहाराज तास के पाट बिराजा,
नरांणदासजी राज ही भगति रूप जाणे मेही
तास पाट हरिदासजी राम रूप राजै येही.... २४

(कळियुगमां अवतार लई भक्तिनी पाट पर बिराजी श्रीरामचरण महाराजे भक्तिनो विस्तार कर्यो, अने रामजनजीअे अनेक जीवोनो उद्धार कर्यो, तो दुल्हेरामजी, चत्रदासजी महाराज, नारायणदासजी अने तेमनी पाटे हरिदासजी राम रूपमां ज बिराजमान हता.)

छंद - भुजंगी –

नमो आप उदोत आनंदकारी, तुम्है चरण सें पांमि लैसौ मुरारी,
अेसो धरम धार्यो तिहूं लोक सारं, लीयो राम नामं भअे जगपारं,
लीयां बुधि भारी दयावंत पूरा, माहा सीलधारी इन्द्रीजीत सूरा,
सदा सुख दाई सकल पाप हरणं, नमो रांमचरणं नमो रांमचरणं... २५

(आनंदकारी रीते ऊगेलां, प्रकट थयेलां आपना चरणनी वंदनाथी सौ परमात्मानी प्राप्ति करी शके छे अेवा त्रणे लोकमां धर्मने प्रसरावनारा, रामनाम लईने जगत पार करनारा, विशाळ बुद्धि धरावनारा अने पूर्ण दयावंत महा शीलधारी, ईन्द्रियजीत शूरवीर, सदाये सुखना दाता अने सकळ पापोनुं हरण करनारा अेवा रामचरणजीने हुं वंदन करुं छुं.)

नमो संत स्वामी ईसा अेह धारी, जिसी आप भाखी गिरा सो उचारी,
महंत पदी पाई तोही मन नेही, धर्या ध्यान नीको जिवको सनेही,
अेह ब्रह्मग्यांनं अचाही निर्मोही, माहां स्वामि धीरा सदा त्याग वोही,
नही दुद जाकै जगत जीव तरनं, नमो रांमजंनं नमो रांमजंनं... २६

(स्वामी/गुरुदेवनी ईच्छा होय ते ज धारण करनारा, गुरुदेवे जे भाख्युं होय ते ज उच्चारनारा, महंतपद मळ्युं होवा छतां जेमणे मनमां नथी राख्युं अने ध्यान धरीने तमाम जीवोने स्नेह आप्यो छे अेवा ब्रह्मज्ञानी निर्मोही, महा त्यागी, धीरजवान, संसारना जीवोने तारवा जेमना चित्तमां कशाये द्वन्द्व नथी अेवा रामजन स्वामीने हुं वन्दन करुं छुं.)

नमो आप रूपं लीयं क्रान्ति भारी, दिपै ज्युं दिनेसं सबै सुखकारी,
हदै रांम नांमं मुखां नूर झलकै, सबै तुष्ट पुष्टकं भू तांहि झलकै,
अेह संत सु धांमी सबै अेक जानैं, तज्यां राग दोषं नहीं मनं आंनै,
नही स्वाद खादं भजै रांम नांमं, नमो दूल्हैरांमं नमो दूल्हैरांम... २७

(आपनुं उजासभर्युं कान्तिवान रूप जे सूर्यनी माफक तमामने सुख आपतुं झळहळी रह्युं छे, हृदयमां रामनाम अने मुख पर तेज झळके छे, तमाम-ने तुष्टि अने पुष्टि प्राप्त थई रहे छे अेवा संत जे तमाम धामने अेक माने छे, जेमणे राग दोष तज्या छे अने कदीये मनमां आणता नथी, भोजनना स्वादनो

त्याग करीने जे नित्य रामनाम भजी रह्या छे अेवा दूल्हेरामजीने हुं वन्दन करुं छुं.)

नमो गगंनदा तास पोता बरेष्टं, भजै रांम नींको सदा मुख श्रेष्ठं,
भया जनम जोगी तज्यां भोग रोगं, सज्यां सील संतोष समता सजोगं,
तज्यां काम क्रोधं सदा जोगधामं, करै ब्रह्म चरचा भजै रांमनामं,
नित नित गावै भज्यां आस बासं, नमो चत्रदासं नमो चत्रदासं.... २८

(गगनदासजीना वरिष्ट पौत्र अने सदाये श्रेष्ठ मुखथी रामनुं भजन करनारा, जनम जोगी, जेमणे भोग रोग तजीने शील, समता, संतोष अने योग धारण कर्यां छे, काम, क्रोध तजीने कायम योगधाममां वसवाट करनारा अने रामनाम भजतां ब्रह्मचर्चा करनारा, नित्य भजन गानारा अेवा चत्रदासजी/ चतुरदासजीने हुं वंदन करुं छुं.)

उदै अरक ग्यांनं सभानं वखानं, हरै तिमिर अग्यं स ग्यांनं प्रमानं,
माहा तेज नूरं प्रकासं करेही, गरु मोर ब्रह्मं बखानं बिदेही,
दिपै दांत क्रांती हरै भ्रम भ्रांती, उदै धरम सारं असारं प्रहांती,
करी साहि मोरी हरी सरबे भासं, नमो नरांनदासं नमो नरांनदासं... २९

(ज्ञान रूंपी सूर्यनो उदय थतां सकळ सभा जेमना वखाण करे छे, जे अज्ञान रूपी अंधकारनो ज्ञानना प्रमाणो आपी नाश करे छे अने महातेज प्रकटावे छे, एवा मारा ब्रह्मने वखाणनारा विदेही गुरुजननी दंतकान्ति तमाम भ्रम अने भ्रान्तिनुं हरण करनारी छे, असार रूपी अंधारामां धर्मना सार रूपी सूर्यनो अजवास रेलावनारा, मने सहाय करीने मारा सर्वे भास-आभास दूर करनारा एवा नारायणदासजीने हुं वंदन करुं छुं.)

नमो हरिदांसं गुरु मोर स्वांमी, निजानंद रूपं लहै अंत्रजामी,
जिते जीव उपरि क्रिंपा-द्रिष्ट हेरै, तिते भवपारै गई तजि फेरै,
रटै रांम नांमं तजै क्रोध कामं, सबै धर्म पुज्यं भलै प्रजा धामं,
अैसे आप आपै भअे बंस तासं, नमो हरिदासं नमो हरिदासं... ३०

(मारा स्वामी अने गुरु एवा हरिदासजी के जेओ अंतर्यामी निजानंद रूप लईने तमाम जीवो उपर कृपादृष्टि करे छे त्यारे जन्म मरणना फेरा टळी

जाय छे अने भवपार ऊतरी जवाय छे. काम क्रोध तजीने रामनाम रटनारा, तमाम धर्मोमां पूज्य, अेवा पोते पोतानाथी ज वश थया छे अेवा हरिदासजीने हुं वंदन करुं छुं.)

दोहा –

अैसे है हरिदासजी, निरबिकार नहैं कांम,
जीव अनंतन पार करि, आप गअे सुरधांम... ३१

(अेवा निर्विकारी संत हरिदासजी अनेक जीवोने पार करी सूरधाम गया छे.)

मनहर –

सुधाही को सार मांनूं अखर उदार जामैं प्रेमरस भरे सब आनंद रली लहै, भगति बर दाता सुसाता सब जीवन को अभै पद दाता सह कलके मली दहै, बरसै आनंदघन सरसै सभा के मधि सहसक्रत प्राक्रत के सबही कली कहै, स्वांमी हरिदासजी के बांणी के मिठास आगे दाख सुकचांनी मुख मिश्री हुं सली गहै. ३२

(चन्द्रना प्रकाश सम शीतळ, अक्षर, उदार अने जेमां प्रेमरसथी सभर तमाम प्रकारना आनंद समाया छे, भक्तिनुं वरदान आपनारा, तमाम जीवोने सुखसाता अने अभयपद आपनारा, कळियुगना मेलने हटावनारा, सभा मध्ये आनंदनी वर्षा वरसावनारा, संस्कृत प्राकृतना जाणकार स्वामी हरिदासजीनी वाणीनी मिठाश आगळ द्राक्ष मों संताडी संकोच पामे छे अने साकर प्रशंसा करे छे.)

छंद - भुजंगी –

माहा भगति कारी कल्पब्रक्ष रूपा, अध्यात्म बाचा अगाधं अनूंपा,
धन ग्यांन भारी दया तंन धारी, कीअे मुक्त रूपा हयों दुःख भारी,
भव सिंध मांही बडे ही जिहाजं, सबै कांम सारे बंधी धरम पाजं,
गुणे पार विचरो भलै गुण स्वामं, नमो हिंमतरांमं नमो हिंमतरांमं.... ३३

(कल्पवृक्ष समान महा भक्तिने धारण करनारा, जेमनी अध्यात्मवाणी अगाध अनुपम छे, अपार ज्ञान अने शरीरमां दया धारण करनारा, भारे दुःखो

हरीने मुक्ति अर्पनारा, भवसिंधुमांथी तारणहार मोटा जहाज सम, तमाम कामनाओ पूर्ण करनार धर्मनो सेतुबंध बांधनारा, त्रणे गुणोथी पर विहार करनारा गुणोना स्वामी अेवा हिंमतरामजीने हुं वन्दन करुं छुं.)

कवित –

सुख ज्युं त्यागी जान तनक नही तनसूं नेहा,
रिष जैसे प्रेम हंस ज्युं जान बिदेहा,
दत्त डिगंबर जिसा असां जानो जन कोई,
भरथर ज्यूं बैराग राग त्याग्यो जन जोई,
ब्रह्मरूप माहाराज हो भव जल त्यारण जंन,
मूरति हिम्मतराजकी सदा बसो मो मंन... ३४

(जेमणे तमाम सुखोनो त्याग कर्यो छे, शरीर साथे तणखला जेटलो पण जेने स्नेह नथी, ऋषि जेवा प्रेमना हंस जाणे विदेही होय तेम, कोई कोई जेने दत्त दिगंबर जेवा गणावे छे, मनुष्योने जोई जेमणे रागनो त्याग करी राजा भर्तृहरि जेवो वैराग्य धारण कर्यो छे अेवा भवजळना तारणहार ब्रह्मरूप हिम्मतरामजीनी मूर्ति सदाये मारा मनमां वसो अेवी प्रार्थना करुं छुं.)

दोहा –

ज्युं बनमे ब्रछ बावनूं, सब चंदन कर भेह,
जन हिंमतरांम प्रगट, अनंत वधारन देह... ३५

अब गादी माहाराज की, ब्राजे आप सुचेत,
ग्यांन भगत चरचा करै, कर अचैतन चेत... ३६
चेतन सबकूं करत है, भजन करावै पूरि,
अैसे जन कलू कालमै, पाप करन सब दूरि... ३७

(जेम वनमां अेक ज बावना चंदननुं (अति किंमती गणाती चंदननी जातिनुं) वृक्ष होय तो अन्य तमाम चंदन वृक्षोनी किंमत वधी जाय छे अेम गुरु हिंमतरामजी महाराजनी गादीअे बिराजमान आप (सत्गुरुश्री दिलसुद्धरामजी) ज्ञान भक्तिनी चर्चा करीने, असावधान मनुष्योने चेतावीने भजन पूर्ण करावो छो, आवा कळियुगमां तमाम पाप दूर करो छो.)

अब अरज माहाराज सत गुराकी हजूर मै मांलम होई...

दोहा –

सिध श्री सरब ओपमा, हो दीननके नाथ,
ब्रह्मरूप गुरुदेवजी, आपही करो सुनाथ... ३८
अनंत ओपमां आपकूं, सतगुरुजी किरपाल,
अरजी लिखूं उच्छावसूं, सुनज्यो दीन दयाल... ३९

(सर्वे उपमाने लायक सिद्धश्री, दीनजनोना स्वामी, अनंत उपमाथी विभूषित कृपाळु ब्रह्मरूप गुरुदेव आपने उमंग अने उत्साहथी अरजी लखुं छुं ते दीनदयाळु थई सांभळजो.)

छंद - पर्धरी –

सिध श्री लिखूं पहलें प्रकास, सुभव है स्थान जांहा सतबास,
सिधि भअे संत श्रीपति पिछांनि, सरब उपमां लाईक वे है जांनि... ४०
वहै नगर धाम धन धरोजास, जांहां संत समागम निति प्रकास,
वहै दास धंनि नित चरणलीन, जिहि प्रेम अधिक ज्युं उदक मीन... ४१
संचित ही करम जिहिं दगध कींन, क्रियेमांन सुभा सुभ कीअे है लीन,
प्रारबधर हत है राग दोष, अेह कुं गूंथत ति भअे मोख... ४२

(हे सिद्ध गुरुदेव, पहेलां भूमिकामां आपने अरज करुं छुं के ज्यां सन्तोनो वास छे अेवा सुन्दर स्थानमां अनेक सन्त सिद्ध श्रीपति वसी रह्या छे, जे तमाम उपमाओने लायक छे. आ नगरनुं धाम ज्यां नित्य संत समागमनो प्रकाश रेलाई रह्यो होवाथी उजासमय छे, नित्य परमात्माना चरणोमां लीन रहेवाने कारणे दास-भक्तो धन्य बन्या छे अने एमनो प्रेम पाणी अने मीननी माफक कायम वृद्धि पामे छे. जेमणे संचित कर्मो दग्ध करेलां छे तेओ पण हाल शुभ कर्मोना क्रियमाणमां लीन छे, प्रारब्धवशात् रागदोष मळेला होवा छतां अेने गूंथीने मोक्ष पामे छे.)

कुंडल्या –

सतगुरु मेरै रांमजन सदा रहो उरि मांहि,
तव प्रसाद येह है जीव के भरम करम मिटि जाई.

भरम करम मिटि जाई हिरदा मै होत उजासा,
ज्युं रिव कै उदोत होत हे तिमको नासा,
कर जोड तिनहै बंदन करुं चरण कवल सिर नाई,
सतगुरु मेरे रांमजी सदा रहो उरि मांहि... ४३

(मारा सतगुरु रामजनजी सदा ये मारा अंतरमां वास करजो, जेथी आपना प्रसादथी आ जीवना भरम करम मटी जाय. जेम सूर्यना आगमनथी तिमिरनो नाश थाय छे अेम मारा हृदयमां उजास पथराय, कर जोडीने, आपना चरणोमां शिश नमावीने हुं अरज करुं छुं के मारा सतगुरु मारा अंतरमां सदैव वास करजो.)

सिध श्री सिध कारणै सत पुरसांके जोग,
जिन त्याग्यो संसार सुख वांम दांम रस भोग,
वांम दांम रस भोग रोग सब दूरि निवारै,
समा सील संतोष धारि समद्रिष्ट निहारै,
अैसे पुरस भूलोंक मै जगत मिटावण सोग,
सिधश्री सिध कारणै सत पुरसों के जोग... ४४

(सिद्ध पुरुषो सिद्धि, अने सत्पुरुषो योग शा माटे प्राप्त करे छे ? जेमणे संसारनां स्त्री, धन, सुखो अने रसभोगनो त्याग कर्यो छे अने तमाम भवरोगनुं निवारण कर्युं छे, जे क्षमा, शील, संतोष धारण करीने समद्रष्टिथी सौने निहाळे छे अेवा महापुरुषो जगतना तमाम शोक मिटाववा आ धरती पर आवे छे.)

दोहा –

साहिपुरो सुंदर माहा, मेवाड देस विख्यात,
जेहां बिराजत श्री महंत गुरु, संत अनंतन साथ... ४५

(ज्यां अनेक संतोनी साथमां श्री महंत सतगुरु कायम बिराजमान रहे छे अेनी साक्षी सुन्दर सोहामणो अेवो विख्यात मेवाड देश (अने गुरुस्थान शाहपुरानो रामदुवारो) पूरे छे.)

कुंडल्या –

साहिपुरो सुंदर माहा, जाहां साहि जीवकी होय,
राव रंक दुजि सुद्र जो, सरणैं आवे कोई,
सरणै आवै कोई सबद, गुरुको उरि धारै,
नौका नाव चढाई सिध, भव पार उतारै,
उभै लोक आनंद लीयां, धूपद प्रापति सोई,
साहि पुरो सुंदर माहा, जाहां साहि जीवकी होय... ४६

(महा सुन्दर रळियामणी धरती ज्यां साक्षी पूरे छे, ज्यांना तमाम जीवो पण साक्षी पूरे छे के राय, रंक, द्विज, शुद्र कोईपण शरणे आवनारनो शब्द गुरुजी पोताना हैयामां धारण करे छे अने सिद्ध नौकामां चडावी भवसागर पार उतारे छे, बन्ने लोकमां आनंद पमाडी अन्ते ध्रुवपदनी प्राप्ति करावे छे.)

माहा सुभ स्थान जो है बैकुठ समांन,
अैसो रांम निवास है दूजो भिस्त निधांन,
दूजो भिस्त निधांन जांहां निज ब्रह्म बिराजै,
सतगुरु ब्रह्म सरुप ओपमां ईनकुं छाजै,
उभै अंग नहो भिन है ज्युं सरि सरता नीर,
पैंगा बंद सू भी अधिक है सबके सिर गुर पीर... ४७

(वैकुंठ समान अेवुं महा शुभ स्थान जाणे बीजा स्वर्ग समान सागे छे ज्यां ब्रह्मस्वरूप सतगुरु कायम निवास करे छे, जेम तळाव अने नदीना नीरमां तफावत न होय अेम सतगुरु अने पूर्ण ब्रह्ममां बन्ने अंग भिन्न जणातां नथी, पयगंबरथी पण तमामना शिर पर रहेला गुरु परमात्मा अधिक छे.)

दोहा –

अनंत ओपमा पुज्य पुरुष, बिराजमांन सुखधांम,
अनेक ओपमा अनंत सुख, लाइक वडे ब्रीयांम*... ४८

मुख सरोज वांणी बिमल, ब्रह्म ग्यांन-विस्तार,
आप रूप ओतारि धरि, बरन्यो सार असार... ४९

*ब्रीयाम-बिरुद

माहाराज पदी तुमकूं फलै, हरि गुरुकी बगसीस,
यामैं नही सनेहता, मानो विसवावीस... ५०

(अनंत उपमा लायक सुखधाममां बिराजमान पूज्य पुरुष, जेमनुं मुख सरोजसमुं छे अने ब्रह्मज्ञानरूपी विमळ वाणी उच्चारे छे, आप स्वरूपे अवतार धारण करी सार असारने वर्णवे छे, श्री हरि गुरुनी कृपा बक्षीसना कारणे महाराज पद फळी रह्युं छे, आ वात मात्र अमारा स्नेहनी ज नथी पण पूर्ण विश्वासनी छे.)

छंद - बुजंगी –

गुरु मोर स्वामी दिलसुधरामं, कटै ताहि दरसं नरकादि ग्रांमं,
दिपै ज्युं दनेसं सहि खांतिकारी, सदा ग्यांनरूपं प्रकासो ज भारी...
..... (अहिं १ चरण ओछुं लागे छे.)
ईन्द्री जीति सूरा जपै रांम नांमं, नमो दिलसुद्धरांमं नमो दिलसुद्धरांमं ५१

नमो दिल सुधं सबै धरम मंडे, नमो ब्रह्म रुपा सकल कांम खंडे,
मनो बाचपार जिनहैं बेद गावै, आदि अंति अेक सबै संत ध्यावै,
अखंडं अनभं ब्रह्म स्वरूपा, निराकार स्वामी भक्तादि भूपा,
मेटो नरकज्वाल देवो रांम नांमं, नमो दिलसुधरांमं नमो दिलसुधरांमं... ५२

(मारा गुरु स्वामी दिलसुद्धरामजीना दर्शन करतां नर्कवासनी यातना टळी जाय छे, जेवी रीते दिनेश/सूर्य पोतानी कान्तिथी शोभे छे तेम सदाये ज्ञानरूपी प्रकाश तेमनामां झळहळे छे, ईन्द्रियजीत शूरा अेवा रामनाम जपनारा श्रीदिलसुद्धरामजीने हुं वन्दन करुं छुं.)

कवित्त –

दिलके वडे दयाल असे नही तीनो पुरमैं,
लगे करण प्रतिपाल आप सतगुरुजी उरमैं,
सुमरों रांम अखण्ड पलक लय थकै न जाकी,
धरम ध्वजा फरराई धरम मई मूरति ताकी,
राखे आप ले सरन काल के भये सब हारे,
मरम बतायो सार धार भव जल की त्यारे,

जीव उधारन कलि मही तुम प्रगटे त्यारन तिरनी,
धुर अक्षर तुक सप्तकी तिन चरणनकी मैं सरनी... ५३

(त्रणे लोकमां अेमना जेवा दिलना दयाळु क्यांय नथी, जे सतगुरुना हैयांनी सतत संभाळ राखी रह्या छे, अखण्ड पलकथी जे राम स्मरण करतां जेनी ले थाकती नथी, जेमनी धर्ममय मूर्तिअे धरमध्वजा लहेरावी छे, जे पोताना शरणमां राखे तेने काळनो भय सतावतो नथी, जेमणे भवजळमां तारवा अने तरवानो मर्मसार बताव्यो छे, अने कळियुगमां अनेक जीवोनो उद्धार करवा जे प्रगट थया छे, (जेना नामनो संकेत दुहानी सातमी टूंकमां/सातमा दुहानी तूकमां थयो छे!)..... तेमना चरणोमां हुं शरण लउं छुं.)

छंद - पधरी –

पार करन नछ काज जांन, परमाथ ज्युं भूंगमांन,
अडिग मेर ज्यूं जांनि आप, हिमकर ज्युं सीतलं हरन ताप,
बिरखा ज ग्यांन घन करो पूर, ततकाल भरम भांगै ज दूर,
गिरा ग्यांन अनभो सरूप, बां रसाल अति सै अनूंप,
त्रिगुणपार भजि तीन ताप, पंच कोसके परै आप,
परम हंस मोती ज बीन, खीर नीर निरणै ज कीन... ५४

(..... मेरु पर्वत समान अडग आपने जाण्या छे, त्रिविध तापनुं शमन करवा आप हिमकण जेवी शीतलता आपनारा छो, ज्ञानरूपी घनवर्षाथी आप तमामनां भ्रमणाओ तत्काळ दूर करनारा छो, ज्ञानवाणीना साकार रूप जेवा तथा अतिशय अनुपम रसिकता दाखवनारा, त्रणे गुणथी पर अेवा आपनाथी त्रिविध ताप पांच कोश दूर रहे छे, साचां मोतीनो चारो चरनारा परमहंस अेवा आप नीर क्षीरनो निर्णय करनारा छो.)

दोहा –

अष्टादस षट च्यार मैं, जे जे गुण अधिकार,
सरब सुखांकी धांम हो - सतर जनम के पार... (सत रज नम के पार...?) ५५

(अढार पुराण, खट दर्शन अने चार वेदमां जे जे गुणो अने अधिकारनुं वर्णन मळे छे ते सर्वे सुखोना धाम अेवा आप सतर जनमथी पारनी

वातो जाणनारा छो.)

म्हाराजि धिराज महाराज श्री, श्री आठ सत अेक,
स्वामी दल सुधरांमजी, पावन कीये अनेक... ५६

(महाराजाधिराज महाराजश्रीश्री १०८ स्वामी दलसुद्धरामजीअे अनेक जीवोने पावन कर्या छे.)

सरब सुखाकी धांम तु सम, यांहां तव पदके दास,
दिली लीलकटलासै लिखी, रांम दुवारे खास... ५७

(सर्वे सुखोना धाम अेवा आपना पद-चरणकमळनो दास दिल्ही लीलकटलाथी राम दुवारे आ अरजी लखी रह्यो छे.)

अरजी लिखुं हुलास सै, करि करि आरत बैन,
भव जल निधि मै बूडतां, आप मिले सुख दैन. ५८

(अधिक उल्लासथी-उमंगथी विनवणी करी करीने भवजळनिधिमां बूडी रहेला मने आपनो संयोग सुख आपनारो थई पडशे.)

यांहां कुसल तुमरी दया, तुम निति आनंद कंद,
महैमा किसि बिधि वरणीअे, पूरण परमानंद... ५९

(अहीं आपनी दयाथी कुशळ छीअे, आप तो नित्य आनंदकंद छो, पूर्ण परमानंद अेवा आपनो महिमा केम करीने हुं वर्णवी शकुं ?)

हंस दसा निरगुण दसा, सकल सिष्ट सिरताज,
राव-रंक सरभर गिणै, असे गरीबनवाज... ६०

(राव रंकने तमामने अेकसरखा गणनारा अेवा गरीबनिवाज आपनी हंस दशा अने निर्गुण दशाने कारणे सकळ सृष्टिना सरताज छो.)

सवईया –

जगतके जीव उधारन कारन आप लीयो कलि मैं अवतारा,
जो कोई जो आई मिलै ताहि देत है रांम को नाम अपारा,
ग्यांन भगति बैराग दिढावत मेटत हो सब घोर अंधारा,
रांमको रूप सही हम जांनत वंदन बारुं ही बार हजारा... ६१

(जगतना जीवोना उद्धारने कारणे आपे कळियुगमां अवतार धारण कर्यो छे, आपने जे कोई आवी मळे तेने आप अपार अेवुं रामनांम आपो छो, ज्ञान, भक्ति अने वैराग्यने दृढ करावी अेना अज्ञान अंधारां मिटावी दो छो, आपने ज रामनुं साकार स्वरूप जाणीने हजारो वार वंदन करुं छुं.)

सोरठा –

उरि फाटक खुलि जाई, बादी नादी ना टकी,
चित्त माही तुल जाई, चरचा सुण माहाराजकी... ६२

(महाराजश्रीनी चर्चा सांभळतां ज हैयानां कमाड खूली जाय छे, वाद विवाद टकी शकता नथी, चित्तमां साच खोटनो जे तोल चाली रह्यो हतो ते शमी जाय छे.)

सूरज ज्युं उदोत दिपै, क्रांति गुरुदेवकी,
उरि सीतलता होत, दरस कीया पातग कटे... ६३

(जेमनां दर्शन करतां ज कायानां तमाम पापो नाश पामे छे, उरमां शीतळता व्यापे छे अेवा गुरुदेवनी कांति ऊगता सूरज जेवी दीपी रही छे.)

चोपाई –

दत्तात्रय ग्यांनी अवधूता, राजा जई पारकीय पूता,
कवलदत* मतवाला जोगी, मां ग्यांन दीयो रसभोगी... ६४

(ज्ञानी अवधूत अेवा गुरु दत्तात्रेय..... मतवाला जोगी छतां रसभोगी अेवा आप मने ज्ञान आपो.)

जटभराथ उनमत रहावै, राजा रघू पार कहावै,
नारद नांम निरंतर गायो, षट तलीय छिनमै पहुचायो... ६५

(जडभरत पोतानी अवधूत दशामां उन्मत्त रहेता, छतां अेमणे रघु राजाने ज्ञान आपेलुं, नारदजी निरंतर नाम गाया करता छतां षट्पद भ्रमरने अेक क्षणमां पार पहोंचाडी दीधेल.)

नव जोगेसुर रांम रस माता, जनक बिदेही कीयो विख्याता,
सुखदेव जोगे सुर गांही, परीछत पार कीयो पल मांही... ६६

*केवलाद्वैत

(नवा योगेश्वर रामजीअे जनक विदेहीने विख्यात कर्या, तो शुकदेवजीअे परिक्षित राजाने अेक पळमां पार पहोंचाड्यो.)

सात दिवस लगि कथा कराई, कलि जीवन हिति काज सवाई,
अेह सब संत भई परमांनै, सतजुग त्रेता द्वापुर जांनै... ६७

(सात दिवसनी अे कथा कळियुगना जीवोना हित काजे करवामां आवी, अे तमाम संत तो सतजुग, त्रेता अने द्वापरना हता.)

अब कलिजुगमै आप सहाई, रांम रटण करो सुखदाई,
बोहो जीवन कीनो साता, तुमरी महैमां को विख्याता... ६८

(अनेक जीवने शाता आपनारा, सुखदायक अेवुं रामरटण करनारा, जेनो महिमा विख्यात छे अेवा आप मात्र हवे कळियुगमां सहाय करनारा छो.)

कबित्त –

बालमीक ज्युं बुधसें संसे ध्यान निरंतर,
सनकादीक सी दसा रांम को नांम जु अंतर,
टेक जांन प्रहलाद परम आनंद सरुपा,
ध्रू(व)सें ध्यांन सदीव रांमको नांम अनूपा,
बासिष्ट मुनीसे सांत गी बसुधा धीर समांन,
अैसे गुण गुर देवजी करुणां सागर जांन... ६९

(वाल्मिकनी जेम निरन्तर ध्यान धरनारा, सनकादिक जेवी दशामां रामनाम अन्तरमां धारण करनारा, प्रहलाद सम टेकीला अने परम आनंदस्वरूपा, ध्रुवजीनी माफक सदैव रामना अनुपम नामनुं ध्यान करनारा, वशिष्ट मुनिथी पण शांत अने जेमनी धीरज धरती समान छे अेवा करुणासागर गुरुदेवमां अनेक गुणो व्याप्त छे.)

गोरखसे जितेंद्रिये कांम दल गिगन चढाया,
भरम रसो* बैराग त्याग सो सदा सवाया,
गोपीचंद ज्यूं जांनें ग्यांनकै मांहि वखांनूं,
नाम कबीरा जिसा उजागर भअे प्रमांनूं,

* ब्रह्मरस

ऐसे हो गुरुदेवजी महैमा कही म जाई,
चरण-सरण मैं निति रहूं आप ही सदा सहाय... ७०

(जेमणे कामनाना दळ गगने चडावी दीधां छे अेवा गोरखनाथ जेवा जितेन्द्रिय, त्याग अने वैराग्यमां कायम सवाया, गोपीचंद जेवुं ज्ञान जेमां छे अने कबीर जेटला प्रख्यात थया छे अेवा गुरुजीनो महिमा कथी शकाय अेवो नथी, हुं आपना चरणमां अने शरणमां नित्य रहुं अने आप सहाय करो अेवी अरज करुं छुं.)

मेरु अडग ज्युं जांन पवन ज्यूं लिखै न लोई,
सूरज तेज समान चंद्र ज्यूं सीतल सोई,
गहरां ग्यांन गंभीर कलपतरु कांम ज हरि हैं,
बसुधा क्षमावंत सुख सबहिनकूं करि है,
गहरे जांन समुद्रसे है रतन को खान,
अैसे ही रतन जु आप मैं तिन्है करुं बाखान... ७१

(मेरु पर्वत सम अडग, लोको लखी के पकडी न शके अेवा पवन जेवा, सूरज समान तेजस्वी, चन्द्र समान शीतळ, ऊंडा ज्ञानथी गम्भीर, कल्पतरु समान, धरती सम क्षमावंत, तमामने सुख आपनारा, समुंद्रथी पण ऊंडेरा, रत्नोनी खाणमां होय अेनाथी पण वधु रत्नो आपनामां समयां छे अेटले वखाण करुं छुं.)

झूलणां –

गुरु महैमां माहा अगाध भाई, काहा जीव बुधी परमांनहै जी,
कोई गाई कहै कोई पाई कहै, कोई आपणा भाव जणाईहै जी,
काहा आदि रू अंतर मध नहि, सब गुरुकुं भेट चढाईहै जी,
दासानुदास करजोड कहै, भव बूडत आप सहाईहै जी... ७२

(गुरु महिमा तो अगाध छे, भाई, जीव बुद्धि शुं प्रमाण आपी शके? कोई गाईने कहे, कोई मेळवीने कहे, कोई पोतानो भाव व्यक्त करे, क्यांय आदि, मध्य अने अंत थी बधुं ज गुरुने भेट रूपे चडावी दीधुं छे, दासानुदास हाथ जोडीने कहे छे के भवसागरमां बूडतांने सहाय करनारा आप ज छो.)

दोहा -

धन देस धन नगर सुभ, धन परजा धन राज,
धनि जा भोमि महावरां, जांहा दिलसुधरांम महाराज... ७३

(धन्य देश, धन्य शुभ एवुं नगर, धन्य प्रजा अने धन्य राजा, धन्य ए भूमिने के ज्यां दिलसुधरामजी महाराज बिराजमान छे.)

धन रतलाम जुं जानीए, धनि सेवक धनि संत,
श्रीदिलसुद्धराम महाराज को, निति प्रति दरस करंत... ७४

(धन्य रतलाम गामने जाणीअे, धन्य छे ए सेवक अने संतोने के जे नित्य दिलसुद्धरामजी महाराजनां दर्शन करी रह्यां छे.)

झूलणा –

श्रीदिलसुधराम बिराजत है, जग जीव जो पार उतारिहे जी,
मालवो देस कीयो अत पावन, ओरा केते नर नारी है जी,
आप सुभ द्रष्ट निहारी देखो, तब दासको आनंद होत है जी,
रतलाम ज सुभ ग्राम तहां, दसू देसके दरसन पाई है जी... ७५

(हमणां रतलाम जेवा शुभ गाममां श्रीदिलसुद्धरामजी बिराजे छे, जगतना जीवोने पार उतारे छे, माळवा देशने अति पावन कर्यो छे, अने केटलाये नरनारीओने आप शुभ दृष्टिथी निहाळो छो त्यारे दर्शन करतां दासने आनंद थाय छे.)

कूंडल्या –

गुर महिमां तो अगम है निगम न पारै पार,
रिष तपसी मूंनी जनां कहै सब अवतार,
कहै सरबै अवतार संत जन कहै ज सबही,
नारद सनकादिक कहै ब्रह्मादिक तबही,
श्री मुख सै श्रींपति कहै वामैं फेर न सार,
गुर महैमा तो अगम है निगम न पावै पार... ७६

(गुरुमहिमा तो अेवो अपार छे के अेनो शास्त्रो पण पार न पामी

शके. ऋषिओ, तपस्वीओ, मुनिजनो अने तमाम अवतारो तथा तमाम संतो, नारद, सनकादिक, ब्रह्मादिक तथा श्रीमुखथी लक्ष्मीपति जेमां क्यांये तफावत नथी अेवी एक ज वात कहे छे के गुरुमहिमानो पार शास्त्रो पुराणो पण पामी शकता नथी.)

क्षमावंत गुरुदेवजी भवजल करि हैं पार,
दधीच मुंनी सें देखलो इंद्र देव उपगार,
इंद्र देव उपगार जीवकी संकट टारी,
माहाकाल की खास तोडि जग जाल उबारी,
व्रत्रा सुरसे देख ल्यो आप ही गयो ज हार,
क्षमावंत गुरुदेवजी भवजल करि हैं पार... ७७

(इन्द्रना जीवनुं संकट दधिचि मुनिअे उपकार करीने टाळ्युं, अने वृत्रासुरनो नाश थयो, महाकाळना पाशमांथी जगतने उगारी लीधुं, आम क्षमावंत अेवा गुरु ज भवजळ पार उतारे छे.)

दोहा –

च्यार बेद षट सासतर, ओर अढारै पुरांन,
याको पाठ ज निति करै, पें गुर बिन भलो न जान... ७८

(चार वेद, छ शास्त्र, अढारे पुराणना नित्य पाठ करनार पण जो नूगरो होय- गुरु विनानो होय तो तेने भलो के सारो कहेवामां आवतो नथी.)

गुरु ग्यांन दातार हैं, गुरु रांम अवतार,
महा मूढ जे जीवकूं, भव जल करिहैं पार... ७९

(गुरु ज्ञानना दाता छे, गुरु ज भगवान रामना साक्षात् अवतार सम छे, जे महामूठ अेवा जीवने पण भवजळ पार उतारनारा छे.)

महा सील के पुंजको, भरया तोष भंडार,
नव जोगेसुर ज्यूं जथा, तुम रो वार न पार... ८०

(*जेमनामां अमूल्य अेवां* रत्नो समा महा शीलना पुंज अेटले के ढगलाना अेटला भण्डारो भर्या छे के नव नव योगेश्वरो-योगीओ पण जेनो ताग लई शकता नथी.)

तुम तो दीनदयालजी, चितानंद गुर देव,
धनिदास जिग्या वसो, करै तुमारी सेव... ८१

(जग्या पर वसेला चिदानंद दीनदयाळ गुरुदेवनी अहर्निश सेवा धनीदासजी करी रह्या छे.)

ब्रह्मरूप गुरदेव हो, श्री महाराज धिराज,
भगति बधावन बिपु धर्यो, बोहै जीवन के काज... ८२

(ब्रह्मरूप अेवा श्री महाराजाधिराज गुरुअे आ जगतमां भक्तिने वधारवा माटे, अन्योना जीवनने माटे ज देह धारण कर्यो छे.)

पुज्यनीक हो पहोमी* पर, दयावंत हो तात, (भोमी) पहोंचेला.
ब्रह्मानंद उरमें लीया, बाणी सबद विख्यात... ८३
द्वै द्वै रसनां रोम ईक, जो पैजनकै होई,
महैमां गुरु गोविंदकी, तोउ न बरनैं कोई... ८४
सफरी जीवन नीर है, संतां जीवन रांम,
मों जीवन महाराज हो, सारो सबही कांम... ८५

(आ धरती पर पूजनीय अेवा दयावंत पिता, जेनी वाणी-शब्दो अत्यंत प्रख्यात छे अेमणे पोताना उरमां ब्रह्मानंद धारण कर्यो छे. जो कोई मनुष्यना शरीरना एक एक रोम उपर बब्बे जीभ होय तो पण गोविंद समान मारा सद्गुरुना महात्म्यने वर्णी शके तेम नथी, जळनुं जीवन वहतुं रहेवामां होय, संतोनुं जीवन राममय होय, एम मारुं जीवन आप गुरु महाराज छो, मारा तमाम कार्यो आप सफळ करजो.)

छंद - बचनका —

परमधीर मत गंभीर, परम भगवन इंद्री दवन,
परमग्यांन अगम ध्यांन, परम भगत अगम सकत,
परम दास अति विलास, तज्यां कांम भजै रांम,
तज्यां लोभ अगम सोभ, तज्यां आस निति प्रकास
ग्रह्यां सार निर विकार, निति अखंड धरम मंड... ८६

* भोमी

(आप परम धीरजने धरनारा, जेनी मति गंभीर छे, इंद्रियोनुं दमन करनारा परम ज्ञानी, अगम्य ध्यानी, परम भक्तजन, दासभावे रहेनारा, जेमणे कामनाओ तजीने रामनुं नित्य भजन कर्युं छे, लोभ-लालच, क्षोभनो त्याग कर्यो छे, तमाम प्रकारनी आशा त्यागीने नित्य प्रकाशमान बनेला, निर्विकारी, सार ग्रहण करनारा, नित्य अखंड धर्मनुं मंडाण करनारा छो.)

दोहा –

धरम मंड महाराज हो, पा धरि उपरि आप§,
कलि विषि ईरि निवारणैं, सरण हरण त्रये ताप... ८७

(आ धरती उपर कळियुगना तमाम झेरना निवारण तथा शरणे आवेलानां त्रिविध तापोना हरण माटे ज आप धर्ममंडन माटे अवतर्या छो.)

परम उजागर परम गत, सत चित आनंद आप,
करणांसिंध क्रपाल हो, हरण जीव जगताप... ८८

(जीवमात्रना तापो-कलेषोनुं हरण करवा सच्चिदानंद परम उजागर परम गतिने मेळवनारा कृपाळु करुणासिंधु समा आप आव्या छो.)

भगति उजागर ग्यांन, चिदानंद चिरंजीव,
पावन-पतति दयालजी, अधम उधारण सीव... ८९

(आप पतितपावन, दयाळु, अधम जीवोनो उद्धार करनारा कल्याणकारी, चिदानंद, चिरंजीव, भक्ति प्रकटावनारा ज्ञानस्वरूप छो.)

गुर महैमां ब्रह्मा करै, सिव नारद अवतार,
तिन हू पार न पाईयो, तो दूजो किसो विचार... ९०

(ब्रह्मा, शिव, नारद अने तमाम अवतारो गुरुमहिमानुं गान करता रह्या छे छतां पार पाम्या नथी तो बीजी वात तो हुं कई रीते करी शकुं ?)

लख धड लख लख सीस होई, सीस सीस मुख लख,
मुख मुख रसनां लख होई, तोहु गुर महैमां काहा अख... ९१

(अेक लाख शरीरनां धड होय, दरेक धडने लाख मस्तक होय,

§ पा- पग, धरि-धरती

दरेक मस्तकमां लाख लाख मोढां होय अने दरेक मोढामां लाख लाख जीभ होय तो पण गुरुमहिमानुं गान करवा पूरता नथी.)

गुणां रहित अलपत सदा, जनक विदेही जांण,
अेकैं मुखमै कहा कहूं, बेद करत बाखान... ९२

(सदैव निर्गुण, वर्णवी शकाय नहीं अेवा जनक विदेही सम महापुरुष जेना वेदो पण वखाण कर्या करे छे अेने मारा अेक मुखथी केम वर्णवी शकुं ?)

बेद साध सुमरति कहै, गुर गतको नही भेव,
म्हैमां किस बधि कीजीअे, नमो नमो गुरदेव... ९३

(चार वेद, स्मृतिग्रंथो अने साधुजनो कहे छे के गुरुमतिनो भेद वर्णवी शकाय नहीं, तो आपनो महिमा हुं केवी रीते गाउं ? हुं तो मात्र नमन करुं छुं.)

ध्यांन अमूरति को करण, सब जीवन हितकार,
भगति काज भव उपरै, आई लीयो अवतार... ९४

(अमूर्तनुं ध्यान धरवा, भक्तिनो फेलावो करवा तथा तमाम जीवोना हित माटे आपे अवतार लीधो छे.)

छंद - मनहर –

सकल गुण निधांन अति बुद्धिमांन स्वांमी पतित आप धरम के मंडाण हो, जनमके सुधारण क्रिपा सिंधू क्रपानिधांन गरीबनवाज अधरम के खंडण हो, अदभूत सूरति ताकी महैमां कही न जात सरब गुन खांन दीनबंधू ही कहाअे हो, माहाराजाधिराज श्री अेक सत आठ पुन अनेक असंख श्री कही नही जाई हो... ९५

(आप सकळ गुणोना भंडार, अति बुद्धिशाळी, पतितोना स्वामी, धर्मनुं मंडाण करनारा, जनम सुधारक कृपासिंधु, कृपानिधान, गरीबनिवाज, अधर्मनो नाश करनारा, जेमनी सूरता स्थिर छे अेवा सर्वे गुणोनी खाण समा महाराजाधिराज श्री १०८ जेनी पाछळ अनेक-असंख्य श्री लागी शके अेवा समर्थ छो.)

दोहा –

महाराज क्रपालजी, सतगुर धरम जिहांज,
श्री अेकसो आठ पुन, श्री दिलसुधरांम माहाराज... ९६

सोरठा –

उपमां अनंत अपार, श्री अेक सत आठ पुन,
सेस न पावै पार, महैंमां सतगुर महंतकी... ९७

(धर्मना जहाज अेवा सतगुरु कृपाळु श्री १०८ श्रीदिलसुद्धराम महाराजने अनंत अपार उपमाओथी संबोधीअे तो पण जेनो शेषनाग पण पार पामी शक्या नथी अेवो सतगुरु महंतनो महिमा छे.)

वचनका –

सो महाराज सेस जीभी दोई हजार रसनां सैं गावहै तो भी पार न पावहै,
सो गरीबनवाजजी हम सारखे जीवोकी काहा तागत अरु काहा पूती है,
सौ महैमा गावै ओर गरीबनवाजजी आप सबके पूज्य हो
अरु ब्रह्मा विष्णु अरु शिव केवल गुरानैं पूजनेके वास्तै अवतार धार है.. ९८

(शेषनागने बे जीभ छे ते हजार हजार जीभोथी गुरुमहिमानुं गान करवा चाहे तो पण पार पामी शके नहीं, तो हे गरीबनिवाज गुरुजी, अमारा सरखा पामर जीव पासे अेवी पहोंच के ताकात क्यां छे ? के आपनो महिमा समजावी शके ? आप तो तमामने माटे पूजनीय छो, अने ब्रह्मा, विष्णु के शिवजीअे मात्र गुरुपूजन माटे ज अवतार धारण करेलो.)

दोहा –

अब हजूर मैं साध है, तिनसूं बिनती होई,
क्रिपा हम पर राखज्यो, मति छिट काज्यो मोई... ९९

(तो हवे आपनी हजुरमां हुं साधु छुं जेनी विनंति सांभळी कृपा करशो, मने तरछोडशो नहीं.)

सब संतनसूं अरज अेह, सब जन क्रिपा कीन,
हम सब है सरणि, तुम सबमै परवीण... १००

(आप दरेक बाबतमां प्रवीण छो, अमे आपने शरणे आव्यां छीअे,

अने तमाम संतोनी अरज अेक ज छे के समग्र सृष्टिना दरेक जनो उपर कृपा दाखवशो.)

(आपनी निश्रामां रहेनारा सो संतोने मारा वंदन - जेमां :)

प्रथम मुनिवर धरम मूरति नाम खिम्यांरांम है,
संतोषदासजी पंच कहीअे मुखिन मांही नांम है,
निरसै सैरामजी साध पूरेस सैस सबकी हरंत जू,
कबिन मांही बगसीरांमजुं जान बसतर रहित जू... १०१

बैरागबांन है मगनीरांमजु रांम रांम जु रहत है,
पुनि वैद्य रामविलासजी सब रोगकूं वै हरत है,
स्याहा बसन सदाराम है लेखक लज्यारांम जू,
दिढि चिति कहैं धर्मदासजु पंडितोमें नाम जू... १०२

हेतमदासजु हेत करकैं देत है सबकू असंन,
चरचा प्रवीन रामकुस्यालसु करत है सबकूं प्रसंन,
भगतरांम सुसील साधू रामनिवासजु गान कर,
कारजरांम प्रवीण कहीअे करत अदभुत बात वर... १०३

गोविंदरामजु तीन है पुनि अेक तिनमे अधिक है,
सहंसक्रत* प्राकृत को जिनकै हिरदै बिबेक है,
उगतरांमजु दोई है पुनि खेमदास सु रंग करै,
मेवारांम भजनीक है, अरु रामलाल मन हरै... १०४

सिवरांमदास बहु चतुर है पुनि पाठ बांणीको करै,
हेमदासजु श्रम करकैं पडत केडबा करै,
भलारांम बिदेही जैसें फोज मैं अगवांन जू,
बसन जिननैं त्यागी अे बहै• सांवतरांम सुजांन जू... १०५

दूतीअे गोबिंदरांम हैं सो बात अछी करत हैं,
अब जांन रांमप्रसादजी वें न्याइ मुखसूं कहत हैं,

*संस्कत • बडे

मोहोब्बतरांम बहो गुणी है दल लिखत अमृतरांमजू,
रांमदयाल सु ग्यांन हैं कर चतुर सेवारांमजू... १०६

(प्रथम धर्ममूर्ति अेवा मुनिवर खिम्यारामजी छे, पंच मुखीमां नाम धरावता संतोषदासजी, साधु पुरुषोना संशय हरनारा निःसंशयरामजी, वस्त्र रहित अेवा कवि बगशीरामजी, राम राममां रत रहेनारा वैराग्यवान अेवा मगनीरामजी, दरेकना रोग हरनारा वैद्य रामविलासजी, श्याम वस्त्रोमां सदारामजी, लेखक अेवा लज्यारामजी, जेनुं पंडितोमां नाम छे अेवा दृढ चित्तवाळा धर्मदासजी, दरेकने हेत करीने निर्दोष करनारा हेतमदासजी, चर्चामां प्रवीण अने तमामने प्रसन्न करनारा अेवा रामकृस्यालजी, सुशीलसाधु रामनिवासजी, अद्भुत वातो करवामां प्रवीण अेवा कारजरामजी, त्रण गोविंदराममांना अेक संस्कृत अने प्राकृत प्रत्ये जेना हृदयमां विवेक छे, बेउ उगतरामजी, खेमदासजी, भजनिक मेवारामजी, मन हरनारा रामलालजी, वाणीनो पाठ करनारा चतुर शिवरामदासजी, श्रण करनारा हेमदासजी, फोजमां आगेवान जेवा विदेही भलारामजी, जेमणे वस्त्रोनो त्याग कर्यो छे अेवा सुजान सावंतरामजी, बीजा सारी वातो करनारा गोविंदरामजी, मुखेथी न्याय कहेनारा (जेमने समग्र न्यायग्रंथो कंठाग्रे छे) अेवा रामप्रसादजी, बहु गुणो धरावनारा महोब्बतरामजी, साधुदळ लखनारा अमृतरामजी, ज्ञानी अेवा रामदयालजी अने चतुर अेवा सेवारामजी.)

छंद – पधरी –

हाजर निवेसज ग्रांमदास, निति हजूर के रहत पास,
पुनि अती अे जांन गोबिंदरांम, परमेश्वरदास बिनि सरै न कांम,
नोनिधिरांम नो निधि जांन, अेह हजूर्ये कहे हैं मान... १०७

(स्थानमां हाजर अेवा ग्रामदासजी जे नित्य गुरुनी पासे ज रहे छे, अे सिवाय गोविंदराम, जेना विना कोई काम सरे नहीं अेवा परमेश्वरदास, नव निधि समान नोनिधिरामनुं पण गुरुजी पासे मान छे.)

चोपाई –

करणांरांम पुनि कनीरांमजू, गंगारांम घण रांमनांमजू,
तिरपतरांम सरूप प्रकासा, कोमलरांम राम ही दासा... १०८

रांमप्रसादजु सीतल ताई, गरकरांम भंडार कराई,
दयालदास पुनि उमगहीरांम, भगतरांम तिरसैं सैनांम... १०९

मौनी कहीअे मनसुधरांमां, सदारांम पुनि लज्यारांमा,
शिवरांमदास अरु पूरणदास, रांमरतनजी रांमप्रकास... ११०

सुखरांमजी गिरधरदासा, फिर त्रनीअे शिवरांम उजासा,
गंगाराम जगरांमदासजू, आरत नैनुंरांम पास जू... १११

शिवरांम बेद पुनि मुक्त ही रांम, सिंधूरांम धनुरांम सुनांम,
लछरांम भावनां दासा, नोनिधिरांम पुनि चरणही दासा... ११२

चोकसरांमजी तीन वखानुं, रतीरामजी अेक ही जानूं,
सजनरांम अरु झगमगरांम, निर्मलरांम सूधै हैं नांम... ११३

गुरमुख दयारांमजी मांनो, राजारांमजी उभय कहानों,
जोगीराम पुनि परसणरांमा, बिबेकीरांमजू खिम्या नांमा... ११४
रांमकल्यांण भांगीरथरांम, दोई कहे है हरसुख नांम,
सुखरांमजी मोहन प्यारा, दुर्लभ रांम पुनि रांमकवारा... ११५
पुनि हेअे कहीअे मनसुधरांम, बालकरांम रटत है नाम,
अे संतनके नांमसु गांनां, वाहां अधिक होई तो माफ करांनां... ११६

(करणांराम, कनीरामजी, गंगाराम, घनरामनामजी, तिरपतराम, कोमलराम, रामप्रसादजी, भंडार करनारा गरकराम, दयालदास, उमगहीराम, भगतराम, निरसंशयराम, मौनी मनसुधराम, सदाराम, लज्याराम, शिवरामदास, पूरणदास, रामरतनजी, रामप्रकाश, सुखरामजी, गिरधरदास, त्रणे शिवरामदास, गंगाराम, जगरामदासजी, पीडाथी दुःखी नेनूरामजी, शिवराम वैद, मुक्तराम, सिंधुराम, धूनराम, भावना दास अेवा लछीराम, चरणना दास अेवा नोनिधराम, त्रण चोकसराम, रतिरामजी, सजनराम, झगमगराम, निर्मलराम, गुरुमुखी दयारामजी, बंने राजारामजी, जोगीराम, परसणराम, विवेकीराम, खीमाराम, रामकल्याण, भागीरथीराम, बेउ हरसुखराम, सुखरामजी, मोहनराम, दुर्लभराम, रामकुंवरराम, मनसुधराम, बालकराम... अे संतोना नाम जणाव्या छे, त्यां वधु होय तो मने माफ करशो.)

दोहा –

नेत्र सुन्य पुनि रुपजू, श्री गुरु दरस करै,
चरचा सुनि माहाराजकी, भव दुख दूर हरै... ११७

(सूरदास अेवा रूपजी श्री गुरुना दर्शन करीने, महाराजनी चर्चा सांभळीने भवदुःख दूर करनारा छे.)

श्री हजूर के पधारणे को दोहा

दासनकी अरदास मुनि, करि हो क्रिपा-महर,
स्वांमी श्री गुरुदेवजी, पांवन करो सहर... १/११८

(आ दासनी अरज सांभळीने कृपा करशो, अने स्वामी श्री गुरुदेवजी अमारा शहेरने पावन करशो.)

दिसा आदि काली अंत हु, चितवो परम-क्रिपाल,
अमरावसिंहकी बीनती, पांवन करो दयाल... २/११९

(दश दिशा, आदि अेक, काळ त्रण, अंत शून्य, (आ अंकोनुं रहस्य ?) परम कृपाळुनुं चिंतन करीने अमरावसिंह विनंति करे छे के अमने पावन करशो.)

बतीसांमैं धुर अखिर, ता आगैं सत बीस,
पांण सहत ईकबीसमौं, रखीयो बिसबाबीस... ३/१२०

(आरंभमां बत्रीश, अे पछी सत्यावीश, एकवीशमो पाण साथे, ...)

साधांकी अरज - दोहा –

साध बसत है आपके, राम द्वारै तांहि,
तिनकैं निति प्रति रहत है, ध्यान आपको मांहि... १/१२१

(साधुओनी अरज - आपना रामद्वारे वसनारा साधुजनो जेमनुं ध्यान नित्य आपना प्रत्ये ज रहे छे.)

चोपाई –

रामप्रसाद दासनको दासा, तुम दरसण की करि है आसा,
क्रिपा करकें दरसण देवो, बार बार बिनती मुनि-लेवो... २/१२२

(दासानुदास रामप्रसाद आपना दर्शननी आशा करे छे, वारंवारनी विनंति मन पर लईने कृपा करीने अमने दर्शन आपशो.)

दुतीअे षांनां जाद गुलांमां, भगति करत है भगतही रांमां,
त्रतीअे दास भागरथरांमा, गुंरसूं करिहै बोहो परनांमां... ३/१२३

(बीजा खानाजाद गुलाम एटले पेटवराडे सेवा करनारा (मात्र उदरपूर्ति थाय एटलुं ज अनाज स्वीकारीने), भक्ति करनारा अेवा भगतराम तथा त्रीजा भागीरथीराम गुरुने प्रणाम कहावे छे.)

फिर किंकर है दास तुमारा, क्रिपा करके करो संभारा,
दास लघु है भजनारांम, क्रोडि बार तिसको परनांम... ४/१२४

(त्यारबाद आ आपना दासने कृपा करीने संभारशो, नानो भजनांराम आपने करोड वखत प्रणाम पाठवे छे.)

चरण भाग कर करत है, कोडि बार परनांम,
रांम-रांम प्रभु मानीयो, प्रक्रमां अभिरांम... ५/१२५

(करोडो वखत दंडवत करीने आपने प्रणाम करीअे छीअे, हे राम प्रभु अेने अमारी परिक्रमा मानी लेशो.)

आंना जाद गुलांम है, गुन्हैंगार जख बेर, जग
दरसण दीज्यो बापजी, मैं भाषतहूं टेर... ६/१२६

(हे बापजी ! हुं खानाजाद गुलाम (एटले पेटवराडे सेवा करनारो, मात्र उदरपूर्ति थाय एटलुं ज अनाज स्वीकारनारो) जगतने जेनी सामे वेर छे एवो गुनेगार छुं, हुं दर्शननो तलबगार छुं, अेटले ज चीस पाडीने पोकारुं छुं.)

ओर सहारो हे नाहीं, तुम ही जगमे मित्त,
अधम उधारण हो गुरु, त्यारे जीव अनित... ७/१२७

(मने आपना विना कोईनो सहारो नथी, आप ज आ जगतमां मारा हितेच्छु मित्र छो. आ जीवन क्षणभंगुर छे आप अधम ओधारण छो.)

दया महिर मुझि उपरैं, रखीअे परम दयाल,
मैं कूडा अरु क्रितघण, तुमहो बडे क्रिपाल... ८/१२८

(हे परम दयाळु ! मारा पर दया महेर राखजो, हुं तो कूड कपटथी भरेलो कृतघ्नी छुं, अने आप कृपाळु छो.)

गुरु महैमा गुरुरांमकी, कही कूंण षैं जाई,
हाथ जोड बिनती करुं, दास रहै सरणाई... ९/१२९

(गुरु रामनो महिमा केम कही के वर्णवी शकाय ? हुं तो मात्र शरणे आवीने हाथ जोडीने करबद्ध प्रार्थना ज करुं छुं.)

जेती जगमैं ओपमां, बरण गअे सब संत,
तेती तुमंही जोगि हो, हम कर जोड कहंत... १०/१३०

(आ जगतमां जेटली उपमाओ छे ते सर्वे आगळना संतो वर्णवी गया छे. अे तमाम उपमाओने लायक आप योगीराज छो अेम हुं हाथ जोडीने कहुं छुं.)

सतगुरु सिरजणहारकी, महैंमा कही न जात,
बुधि माफिक वरणी कछू, मणमैं कण दरसात... ११/१३१

(सर्जनहारा सतगुरुनो महिमा कही शकाय तेम नथी, मारी अल्प बुद्धि मुजब थोडुंक वर्णन करी शक्यो छुं ते तो अेक मणमां मात्र अेकाद कण जेटलुं ज छे.)

अरज लिखणकी बापजी, मों मैं कहा सहूर,
दया देख इंद्रप्रस्थकी, पावन करो जरूर... १२/१३२

(आपने अरज करवानी ताकात मारामां क्यां छे ? पण इन्द्रप्रस्थ उपर दयानी नजरे जोईने पावन करशो.)

अरजी मालम होवसी, श्री महाराज हजूर,
हम तुछ-बुधी जीव है, कीज्यो अरज मंजूर... १३/१३३

(आ अरजीथी आपने मालुम पडी ज जशे के अमे तो तुच्छबुद्धि जीव छीअे, छतां श्री हजुर महाराज अमारी अरज मंजूर करशो अेवी विनंती छे.)

बाल बुधी अेह..... (अहींथी अधूरुं छे.)

* * *

C\o. आनन्द आश्रम
घोघावदर (गोंडल), जि. राजकोट - ३६०३११

श्रीपंचपरमेष्ठिनमस्क्वरार्थः

सं. मुनि धर्मकीर्तिविजय गणि

'पंचपरमेष्ठिनमस्कारार्थः' नामनी आ कृतिनी रचना सं. १६१५ना वर्षमां गणधारिश्री जिनचंद्रसूरिजीना शिष्य श्रीसमयराज मुनिए करी छे. ३ पानामां समायेली आ कृति जूनी मारवाडी भाषामां छे.

कृतिमां अरिहंतादि पांचे परमेष्ठिने नमस्कार करवा साथे तेमना गुणोनुं विशद वर्णन करेल छे.

प्रथम अरिहंतना १८ दोष जणाव्या. ते पछी अरिहंतनुं विशेष स्वरूप तेमज वर्तमानकाले महाविदेहक्षेत्रमां विचरता २० विहरमान भगवंतोना नाम साथे वर्णन करवामां आवेल छे.

बीजा सिद्धभगवंतनुं वर्णन करता जणावे छे के ८ कर्मनी १५८ प्रकृतिनो जे क्षय करे ते सिद्ध थाय. त्यारबाद सौधर्मादिदेवोना विमानना आकारोनुं वर्णन करीने चौद रोजलोकनी उपर वर्तती सिद्धशिलानुं वर्णन करवामां आव्युं छे. त्यारबाद ५ श्लोक द्वारा सिद्धना जीवोनुं ८ गुणोनुं तेमज तेमना सुखनुं सुंदर वर्णन करेल छे.

त्रीजा आचार्यभगवंतनुं वर्णन ७ श्लोकथी करेल छे. प्रथम ४ गाथामां आचार्यभगवंतना जुदा जुदा गुणो जणावीने ५मी गाथामां प्रतिरूपादि-१४, क्षमादि-१०, भावना-१२ - आ रीते ३६ गुणोनुं वर्णन करेल छे. ६-७मी गाथामां पांच इन्द्रियोनुं दमन करनारा - इत्यादि ३६ गुणोनुं वर्णन करेल छे.

आचार्यने स्तंभनी उपमा आपी छे. जेम मेडीने टकाववा स्तम्भ तेम गच्छने टकाववा स्तम्भसम आचार्यभगवन्त छे.

आचाराङ्गादि १२ अङ्गोना नामोल्लेख करीने जणाव्युं के आ १२ अङ्ग स्वरूप द्वादशाङ्गीने जे भणे अने बीजाने भणावे ते उपाध्यायभगवन्त कहेवाय छे. छेल्ले २ श्लोक द्वारा तेमना गुणोनुं वर्णन करेल छे.

अन्ते अढीद्वीपमां विचरता साधुभगवन्तोने नमस्कार करीने तेमना गुणोनुं बहुज सुन्दर वर्णन करेल छे. साधु केवो आहार ग्रहण करे, साधुनुं शरीर केवुं होई, तेमज अनेक उपमा आपवा द्वारा विशिष्ट गुणोनुं वर्णन करवामां आव्युं छे.

*

॥ ६० ॥ श्रीजिनाय नमः ॥

नमो अरिहंताणं – माहरउ नमस्कार श्रीअरिहंत भगवंतनइ हुओ ।

किसा छइ ते अरिहंतजी ? ए अरिहंते राग-द्वेषरूपिया अरिवइरी जीता । अनइ अढारे दोषे रहित ।

किसा छइ ते अढारह दोष ?

अन्नाण १ कोह २ मय ३ माण ४ लोभ ५ माया ६ रई य ९ अरई य ८ । निद्दा ९ सोग १० अलियवयण ११ चोरिया १२ मच्छर १३ भया १४ य ॥१॥
पाणिवह १५ पेमकीला १६ पसंग १७ हासाइ १८ जस्स ए दोसा ।
अट्ठारस वियणट्ठा नमामि देवाहिदेवं तं ॥२॥

ए अढारह दोषरहित अरिहंत भगवंत ज्ञानस्वरूप, केवलवरदर्शन, शांत, दांत, कृपासागर, त्रैलोक्यनाथ, जगत्त्रयगुरु, जगत्त्रयना पीहर, धर्मवर चक्रवर्ति, सांप्रतकालि महाविदेहक्षेत्रि, चउरासीपूर्वलक्षआयु, पांचसइ धनुषप्रमाण देह, वज्रऋषभनाराच संघयण, समचतुरस्र संस्थान, अष्टसहस्रलक्षणोपेत, सुरूप, सुंदराकार, चउत्रीसअतिशय विराजमान, पइत्रीस वचनातिशयसहित, अष्टमहाप्रातिहार्ये करी शोभायमान सिंहासन छत्रत्रय श्वेतचामर धर्मध्वजा पादपीठ धर्मचक्र देवदुंदुभी सहित, चउसट्ठि इंद्रमहित, सांप्रतकालि जंबूद्वीपि महाविदेहक्षेत्रि, श्रीसीमंधर स्वामि १ श्रीयुगमंधर २ श्रीभद्रबाहुस्वामि ३ श्रीसुबाहुस्वामि ४ ए च्यारि तीर्थंकर जंबूद्वीपे सुदर्शनमेरुनइ ए चिहुं पासे नमस्कार ।

श्रीसुजातस्वामि श्रीस्वयंप्रभस्वामि श्रीऋषभस्वामि श्रीअनंतवीर्यस्वामि ए च्यारि तीर्थंकर पूर्वधातकीखंडि विजयमेरुनइ चिहुं पासे नमस्कारुं ।

श्रीसूरप्रभस्वामि श्रीविमलस्वामि श्रीवज्रधरस्वामि श्रीचंद्राननस्वामि ए च्यारि तीर्थंकर पश्चिमधातकीखंडि अचलमेरुनइ चिहुं पासे नमस्करुं ।

श्रीचंद्रबाहु श्रीभुजगस्वामि श्रीईश्वरस्वामि श्रीनेमिप्रभस्वामि ए च्यारि तीर्थंकर पुष्करार्द्धि मंदरमेरुनइ चिहुं पासे नमस्करुं ।

श्रीवज्रसेनस्वामि श्रीमहाभद्रस्वामि श्रीदेवयशःस्वामि श्रीअजितवीर्यस्वामि ए च्यारि तीर्थंकर पश्चिमपुष्करार्द्धि विद्युन्मालीमेरुनइ चिहुं पासे नमस्करुं ।

ए वीस विहरमाण अरिहंत भगवंत केवली प्रमुखनइ आपणइ परिवार परिवस्या हुंता । हिवडानइ कालि जयवंता वर्तइ । ते श्रीअरिहंत प्रतइ माहरउ नमस्कार, पंचमांग प्रणाम त्रिकालवंदणा सदा हुं ॥१॥

नमो सिद्धाणं – माहरउ नमस्कार श्रीसिद्धभगवंत प्रतइ हुओ । पुणि किसा ते सिद्धजी ? ए सिद्ध आठकर्म क्षय करी मोक्ष पहुता । ते आठ कर्म किसा क्षय कीधा ? ज्ञानावरणी १ दर्शनावरणी २ वेदनीय ३ मोहनीय ४ आयुष ५ नाम ६ गोत्र ७ अंतराय ८ ए आठकर्म अट्ठावनसउ प्रकृति क्षय करी सिद्धि पहुता ।

किहां छइ ते सिद्ध ? उर्द्धलोकि ज्योतिश्चक्र ऊपरि असंख्याता कोडाकोडि योजननी सौधर्मा देवलोक, ते आदि देईनइ बारह देवलोक ऊपरि बहेडानइ आकारि नव ग्रीवेयक, नव ग्रीवेयक ऊपरि पंच पंचोत्तर विमान विजय १ वैजयंत २ जयंत ३ अपराजित ४ ए च्यारि विमान चिहुं पासे अर्द्धचंद्रमानइ आकारि, पांचमउ विमान पूर्णचंद्रमानइ आकारि तेहनउ नाम सर्वार्थसिद्धि महाविमान । तेहनी ध्वजा पताका ऊपरि बारह योजन अधिकेरी ईषत्प्राग्भारा नाम पृथ्वी चउदरज्जुलोक ऊपरि त्रसनाडिनइ मस्तकि जिसउ बीजनउ चंद्रमानइ आकारि महा उज्ज्वल

निर्मला गोक्षीर हारसंभारपंडुरा ।
निर्मलशोभायमान ऊताण छत्रसंठाणसंठिया भणिया जिणवरेहिं ॥

अट्ठजोयण बाहल्ला, सा मज्झंमि वियाहिया, परियायतंति चरमी, मच्छी पक्खोव्व तणुययरी, ईसीपभारानाम जोजनरइ चउवीसमइ अग्रभागि, अलोक नीचइ, चउदराजलोक ऊपरि जिके सिद्ध छइ ।

कहं पडिहया सिद्धा कहं सिद्धा पयट्ठिया ।
कहिं बोंदि चइत्ताणं कहिं गंतूण सिज्झई ॥२॥
अलोए पडिहया सिद्धा लोगग्गंमि पइट्ठिया ।
इहं बोंदि चइत्ताणं तत्थ गंतूण सिज्झई ॥३॥
असरीरजीवघणा उवउत्ता दंसणेण नाणेण ।
सागारमणागारं लक्खणमेयं तु सिद्धाणं ॥४॥

समत्तनाणदंसण-वीरियमुहमंतहेव अवगहणं ।
अगुरुलहुमव्वाबाहं अट्ठगुणा हुंति सिद्धाणं ॥५॥
नवि अत्थि माणुसाणं तं सुखं नत्थि सव्वदेवाणं ।
जं सिद्धाणं सुखं अव्वाबाहं उवगयाणं ॥६॥

पनरे भेदे जिके छइ । सिद्ध अनंतानंतज्ञानदर्शनमयशाश्वते सुखे लीणा छइ । ते सिद्ध भगवंत प्रतइ माहरउ नमस्कार पंचांग प्रणाम त्रिकालवंदना हउ।

नमो आयरियाणं – माहरउ नमस्कार श्रीआचार्यप्रतइ । किसा छइ ते आचार्य ? पंचविध आचार प्रतिपालइ । किसा ते पंचविध आचार ? ज्ञानाचार - १ दर्शनाचार - २ चारित्राचार - ३ तपाचार - ४ वीर्याचार - ५ ए पंचविध आचार प्रतिपालइ ।

गीयत्थे संविग्गे अणआलसू दढव्वए ।
अक्खलियचरित्तेसु रागद्दोसविवज्जए ॥१॥
णिद्दवियमयट्ठाणे समिईकसाय जिइंदिए ।
विहरिज्जा तेण सिद्धं तु छउमत्थेण वि केवली ॥२॥
पडिरूवो तेयस्सी जुगप्पहाणागमो महुरवक्कंतो ।
गंभीरो धिइमंतो उवएसपरो य आयरिओ ॥३॥
अपरिस्सावी सोमो संगहसीलो अभिग्गहमई च ।
अविकत्थणो अचवलो पसंतहियओ गुरू होइ ॥४॥
पडिरूवाइ चउद्दस खंतीमाईहिं दसविहो धम्मो ।
बारस य भावणाओ सूरिगुणा हुंति छत्तीसं ॥५॥
पंचिंदियसंवरणो नवविहबंभचेरगुत्तिधरो ।
चउविहकसायमुक्को ए अट्ठारसगुणो सगुरू ॥६॥
पंचमहव्वयजुत्तो पंचविहायारपालणसमत्थो ।
पंचसमिओ तिगुत्तो छत्तीसगुणो गुरू मज्झ ॥७॥

एहवा छत्रीस गुणे करी विराजमान गणगच्छमाहे मेढीसमान ।

मेढी आलंबणखंभं दिट्ठा जीवस्स उत्तमा ।
सूरी जं होइ गच्छस्स तम्हा तं तं परिक्खए ॥१॥

इसा छइ श्रीआचार्य प्रतइ माहरउ नमस्कार त्रिकाल वंदणा सदा हवउ।

नमो उवज्झायाणं – माहरउ नमस्कार श्रीउपाध्याय प्रतइ हुं ।

किसा ते उपाध्याय ? जे उपाध्याय द्वादशांगीसूत्र भणइ भणावइ ।

किसा ते द्वादशांगीसूत्र ? श्रीआचारांग १, सूयगडांग २, ठाणांग ३, समवायांग ४, विवाहपन्नत्ती ५, ज्ञाताधर्मकथा ६, उपासकदशांग ७, अंतगडदशांग ८, अणुत्तरोववाईदशांग ९, प्रश्नव्याकरण १०, श्रीविपाकसूत्र ११, श्रीदृष्टिवाद १२,

ए द्वादशांगीसूत्र भणइ भणावइ । एहना साचा सूत्र-अर्थविचार कहइ। वीतरागनउ मार्ग प्रकट करइ । आपणपइ धर्मनी स्थितइं रहइ, अनेरानइ धर्मनी स्थितइं राखइ ।

ससरीरे वि निरीहा बज्झब्भितरपरिग्गहविमुक्का ।
धम्मोवगरणनिमित्तं चरंति चारित्तरक्खट्ठा ॥९॥
पंचिंदियदमणपरा जिणुत्तसिद्धंतगहियपरमत्था ।
पंचसमिया तिगुत्ता सरणं महपरिसा गुरुणो ॥२॥

इसा जे उपाध्याय द्वादशांगीसूत्रना भणणहार । श्रुतधर श्रीउपाध्याय प्रतइ माहरउ नमस्कार पंचांगप्रणाम त्रिकालवंदणा सदा हउ ।

नमो लोए सव्वसाहूणं – सर्वलोकमाहि जे छइ साधु प्रतइ माहरउ नमस्कार हउ ।

किसा छइ ते लोके ? अढाईद्वीप पनरहकर्मभूमि, पांच भरतक्षेत्र, पांच मेरुनइ दक्षिणनइ पासइ, पांच ऐरवतक्षेत्र, पांच मेरुनइ उत्तरनइ पासइ, पांच माहाविदेहक्षेत्रि, पांच मेरुनइ उभयपक्षि पनरह कर्मभूमि । पंचतालीस लक्षयोजन प्रमाण मानुष्यक्षेत्र, तेहमाहि एकसत्तरि आर्यक्षेत्र, तेमाहि जिके छइ साधु रत्नत्रय साधइ ।

किसा छइ ते रत्नत्रय ? सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन, सम्यग्चारित्र ए रत्नत्रय साधइ ।

पंच महाव्रतधर, छट्ठउ रात्रीभोजन वरजइ, सात भय टालइ, आठ मद

वर्जक, नव कल्पइ विहार करइ, दसभेद संयम धर्म आदरइ, बारह भेदे तप तपइ, सतरह आश्रवद्वार रुंधइ, अढार सहस सीलांगरथ धरइ, बावीस परीसह सहइ, तेत्रीस आशातन टालइ, बइतालीस दोष विशुद्ध मधुकरवृत्तिइ आहार ल्यइ, पंचदोष रहित मंडलि भुंजइ । जे समशत्रुमित्र, समलेट्ठुकंचण । पंच समिया, तिगुत्ता, अममा, अकिंचणा, अमच्छरा, जिइंदिया, जियकसाया, निम्मलबंभचेरवासा, सज्झाणझाणजुग्गा, दुक्करतवचरणरया, अरसाहारा, विरसाहारा, अंताहारा, पंताहारा, अरसजीवी, विरसजीवी, अंतजीवी, पंतजीवी, तुच्छाहारा, लूहाहारा, सुक्का, भुक्खा, निम्मंसा, निःसोणिया, किसिअंगा, निरागसरणा, कुक्खीसंबला, अज्ञातकुले भिक्षावर्त्तिनो मुनयो भवंति ।

कालीपव्वंगसंकासे किसे धमणिसंतए ।
माइन्ने असणपाणस्स अदीणमणसो चरे ॥१॥

इसा छइ सर्वज्ञपुत्र साधु । संसार भय थकी ऊभगा ।

किसउ ते संसार ? नही जिहनउ पार । आदि-अंतरहित । जन्म-जरा-मरण-व्याधि-भयकरीनइ भरित-पूरित । कषाय करीनइ सहित । आसा संपत्तिना पास । मोहजालबंधन । रागद्वेससंपत्ती । उद्दंडलोलवेला । मिथ्यात्व-रूपी उत्तम अंधकार । आठमद संप[त्ति]ना पर्वत । पंच विषय अभिलाष रूपिया चोर । असंयतीना हिंसामय आवर्त समान । उन्मार्ग भयंकर संसारसमुद्र । जीवरुलि वा नउ थानक ।

ते माहि जे भविक जीव आसन्नसिद्धिगामी जिनमत सांभली जागरूक हूया । संवरतणइ वेगइ जिनोपदिष्टमार्ग सांभली निरतउ जाणी संसारसमुद्र तरिवा भणी पांच महाव्रतरूपीउ वाहण सज्ज करइ । ते वाहण सीलसंपन्ने बंधणे दृढ सुबंध बाधइ । ते वाहणमाहि समकित संपन्नउ अचल अणढोवतउ निरतीचार कूया थंभो थापइ । ज्ञान दर्शन चारित्र रतने करी भरइ । आत्मा रूप नाकुओ । ज्ञानसंपन्नलोचन । समता रूपिणी दृष्टि । शुभध्यान रूप वाउ । जिनोपदेश जीवदया मोक्षमार्गरूप द्वीप संमुख । पंचसमितितणे आउले । त्रिहुं गुप्तितणे नगरे । गामे एगराइयं । नगरे पंचराइयं । वासीचंदणसमाणकप्पे । मेरुनइ परइ अकंप । आकासनी परइ निरालंब । वायुनी परइ अप्रतिबद्ध । भारंड पांखीयानी परइ अप्रमत्त । सूर्य जिम तेजोलेश्यावंत । चंद्र जिम सोमलेश्यावंत ।

सागरना पाणी जिम शुद्धहृदय । समुद्र जिम गंभीर । कुंजर जिम सोंडीर । वृषभ जिम जातथाम । सिंह जिम दुर्द्धर । संख जिम निरंजन । गइडाना सींग जिम एकाकी । जाल जिम सव्वफासे । अश्व जिम तेज कूर्म जिम गुप्तेंन्द्रिय । पृथ्वी जिम सर्वंसहा । कमलपत्र जिम निर्लेप ।

इसा जे छइ साधु भगवंत दयातणा प्रतिपालक । भगवती अहिंसा सर्वभूतनइ क्षेमंकरी । सत्पुरुषासेवी । कातरजीव परिहरी । तेहना प्रतिपालक । *अनाथजीवना नाथ । अपीहरना पीहर । अशरणना शरण । सर्वज्ञपुत्र साधु* निःकिंचण, निरहंकारी, निःपरिग्रही, निरारंभी, शांत, दांत, रत्नत्रय साधक अढाई द्वीपमाहि जिके छइ साधु ते सविहुं प्रतइ माहरउ नमस्कार पंचांगप्रणाम त्रिकालवंदणा सदा हुओ ।

इति *श्रीपंचपरमेष्ठिनमस्कारार्थः संपूर्णः* ॥

संवत् १६३५ वर्षे अश्वयुग्मासे विजयदशम्यामलेखि
पं० नयकमलगणिवाचनार्थम् ॥ श्रीः ॥

* * *

श्रीनेमविजयजीकृत

भरुच-कावी-गंधारना 'छ'री पालित सङ्घ स्तवन

– सं. डो. शीतल मनीष शाह

भरुच तीर्थ ऐतिहासिक दृष्टिअे घणुं ज अगत्यनुं छे.

भरुच तीर्थथी कावी-गंधारमां छ'री पालन पूर्वक श्रीनेमविजयजी म.नी निश्रामां अेक सङ्घ नीकळेल, जे भरुच तीर्थना ते वखते मोभी श्री धर्मचन्द शेठे काढेल, जेना विषे श्री नेमविजयजी म.सा. अे अेक स्तवननी रचना करेल, जेमां समग्र सङ्घनुं आबेहूब वर्णन करेल छे. अहीं ते सङ्घनुं वर्णन जोईशुं.

प्रत-परिचय :

आ प्रत ३ पानामां लखायेल छे, जेमां १ पत्र उपर २० लीटीओ छे अने दरेक लाईनमां ४३ थी ४६ अक्षरो छे. आ प्रत विजयधर्मलक्ष्मी ज्ञानभण्डारमांथी प्राप्त थयेल छे, जे हाल कोबा पुस्तकालयमां नं. ३०८७२ पर उपलब्ध छे. आ पत्र १९मी शताब्दीनी अनुमानित कराई छे.

कर्तानो परिचय :

प्रस्तुत कृतिना कर्ता श्रीभाणविजयजीना शिष्य श्रीनेमविजयजी म. छे.

आ सिवाय अन्य कोई माहिती प्रतमांथी उपलब्ध नथी.

कृतिना आधारे सङ्घनुं वर्णन :

कारतक वद - ७मे आ सङ्घे भरुच तीर्थथी प्रयाण कर्युं अने गन्धार-कावी-जम्बुसर आदि तीर्थोने जुहारीने मागशर सुद-९ना दिवसे सङ्घ भरुच पाछो आव्यो. आ दिवसोमां सङ्घपतिओअे शासनप्रभावना माटेनां अनेक कार्यो कर्यां अे सर्वनुं वर्णन आ प्रतमां आपेल छे.

गुरुचरणने नमस्कार करी अने पछी सरस्वती माताने याद करीने आ यादगार सङ्घनुं वर्णन सुन्दर रीते करेल छे. सङ्घपतिने सङ्घ काढवानो उल्लास कई रीते जाग्यो अने पछी अे सङ्घमां कोण-कोण जोडाया, त्यारबाद सङ्घ

क्यांथी क्यां गयो अने त्यां जईने केवी केवी रीते परमात्मानी द्रव्य पूजा, भावपूजा करी, सङ्घनी भक्ति केवी रीते कोणे कोणे करी आदि प्रसंगोने आवरी लीधा छे. १८मी सदीमां भरुचना मोभी गणाता अेवा धर्मचन्द के जेणे आ सङ्घ लई तीर्थयात्रा करावनो संकल्प कर्यो हतो. तेमना पितानुं नाम मोतीचन्दभाई तथा मातानुं नाम धोलीबाई हतुं.

पोसहशाला अर्थात् उपाश्रयमां अेकवार सद्गुरुना मुखे प्रभुपूजाना फलने सांभळता तेओने भवनिस्तार करवा जिनयात्राअे सङ्घ लई जवानो उल्लास प्रगट्यो. चित्तथी उदार भावनावाळा तेओ पोतानी शक्ति अनुसार धार्मिक कार्योमां पोतानी लक्ष्मीनो सद्व्यय करनारा तो हता ज, साथे साथे अे लक्ष्मीथी मात्र पोते अेकला ज प्रभुनी सेवा करे अे करतां अन्य गामवासीओ पण तेमां जोडाय तेवी भावनाथी तेओअे आ छ'री पालित सङ्घ लई जवानी भावना भावी अने भरुचथी कावी-गंधार मुकामे छ'री पालित सङ्घना सङ्घवी थवानो निर्णय कर्यो.

धर्मचन्दभाईना बीजा भाई न्यालचन्दभाई पण तेमां जोडाया. आ न्यालचन्दभाईना पुत्र झवेरचन्दभाई जेमने सङ्घनां कार्यो करवा खूब गमता ते, अने झवेरचन्दभाईनो पुत्र केशवजीभाई ते सहुकोई सङ्घमां जवा उल्लसित थया. अन्य घणा व्यक्तिओ आ सङ्घमां जोडाया ते तेमना काका-भत्रीजा आदि सगा-वहाला हता.

अभेचन्दभाई, खुशालचन्दभाई, दुलभ, जीवण, कल्याणकाका, मोतीनागर, विचरंद ठावली, रुपानागर, प्रेमचन्दभाई, नीहालभाई, धर्म्मनागर तेमनो पौत्र सोहचंदभाई वर्धमानभाई अने तेमना त्रणे पुत्रो अमरचन्दभाई, सोमचन्दभाई तथा कल्याणभाई, नथूभाई अने तेमना पुत्र चन्दरभाई, दीयाभाई, दुलाभाई, अभाभाई आदि अनेक श्रेष्ठीओ सङ्घमां जोडाया.

भरुच गामना तो श्रावको जोडाया पण अन्य गामना लोको पण आ सङ्घमां जोडाया हतां जेमके:-

* त्रोशाला गामथी गलालभाई अने विरचन्दभाई, गलालभाईना पुत्र विमलचन्दभाई, माणिकचन्दभाई तथा नाना वेलजीभाई, आ बधाअे पण त्रोशला गामथी सङ्घमां हाजरी आपी हती.

* रांदेरगामथी भगवानभाई तथा तेमना पुत्र नानाचन्दभाई, खुस्याल हरखचन्द झवेरीजी.
* अंकलेश्वर गामथी झवेरी देवचन्दभाईना पुत्र आव्या हता. प्रतमां अंकलेश्वर गाम माटे 'अकलेसर' शब्दनो प्रयोग कर्यो छे. १३मी शताब्दीमां 'अमलेसर' अेवुं नाम हतुं जे त्यारबाद आ १८मी शताब्दीमां 'अकलेसर' नाम थयुं हशे, जे हाल अंकलेश्वरना नामे ओळखाय छे.
* माटेड गामथी गुणन्यालजी, देतराल गामथी खुस्यालभाई, तथा मीठाभाईनो पुत्र रेवाभाई पण आ सङ्घमां यात्रा करवाने पधार्या हता.

आ लोकोअे भेगा थईने कारतक वद सातमने सोमवारे सङ्घे प्रयाण कर्युं.

प्रतमां कह्युं छे के, "माजिन सहु भेल्यो, मिल्ये साजिन लेई सङ्घात" - अर्थात् दरेक गामना साधर्मिकोने लई सङ्घे भरुच बन्दरथी प्रयाण कर्युं.

सङ्घनिश्रादाता :

कारतकवद सातमने सोमवारथी शरु थईने आ सङ्घ मागशर सुद-९ना दिवसे भरुच पाछो फर्यो. लगभग १६ दिवसनो नीकळेल आ छ'री पालित सङ्घमां पंन्यासश्री प्रेमविजयजी म. अे गुरु तरीकेनी निश्रा आपी हती. अने तेमनी साथे श्रीभाग्यविजयजी म., श्रीऋद्धिसागर म. आदि गुरु-भगवन्तोअे निश्रा आपी हती. स्तवनमां जणाव्या अनुसार २५ साधु-साध्वी भगवन्तोअे आ छ'री पालित सङ्घमां निश्रा आपी हती. आम, साधु-साध्वी, श्रावक, श्राविका आदिथी शोभतो चतुर्विध सङ्घ भरुचथी नीकळ्यो. आ सङ्घमां बत्रीश गाडाओ पण हता.

प्रथम दिवस सं. १८७४, कारतक वद ७ सोमवार ता. १/१२/१८१७ :

तेओनुं प्रथम प्रयाण थतां प्रथम मुकाम कर्मांड नगरनी बहार कर्यो.

कर्मांड गामना श्रावको सङ्घ आव्यानी जाण थतां खुश थई गया अने गामना श्रावको - हर्षनागरजी, तेमना पुत्र दुलभ सोमचंद तथा लक्ष्मी अने वनमाली, दुला, अम्रचन्द, मोतीलक्ष्मी अने तेमना पुत्र दयाल तिलकचंद, प्रेमलक्ष्मी तथा तेमना पुत्र देवचंदजी, गलालभाईना त्रण पुत्रो दुर्लभजीना पुत्र हीराचंद, मोती मूलजी, पानाचंदभाई आदि बधा साथे मळीने सङ्घदर्शन करवाने

गाम बहार गया.

संघवी धर्मचन्दजीअे तेओने पान-सोपारी आदि आपीने मानपूर्वक बेसाड्या अने छ'री पालित सङ्घमां पोतानी साथे आववा माटे विनन्ती करी. सङ्घपतिनी विनन्ती स्वीकारीअे अे कर्मांड गामना लोको पण सङ्घमां साथे जोडाया.

कर्मांडथी सङ्घ द्वितीय दिवस कारतक वद आठमने मंगळवार गंधार नगर पहोंच्यो. त्यां गंधारमां महावीरस्वामी प्रभु प्रतिष्ठित छे जेने सहु सङ्घे वांद्या.

अहीं उल्लेख छे के 'विर जिणेसर बंदीआ रे, सघले तिहां मलीने सङ्घ' जे दर्शावे छे के सं. १८७४ त्यां गंधारमां जे हाल मूळनायक महावीरस्वामी परमात्मा छे ते ज त्यारे त्यां प्रतिष्ठित हशे. अहीं गंधार नगरे आठम, नोम, दशम, अगियारस अेम चार दिवसनुं रोकाण कर्युं.

आठमे सर्व सङ्घे भेगा थईने अष्टप्रकारी पूजा करी, ज्यारे नवमीने दिवसे बधाअे भेगा मळी जिनवरने मुगुट चडाव्यो.

अे दिवसे सङ्घजमणमां साधर्मिकोनो लाडवानुं जमण करावेल तथा प्रभावनामां फोफ़ल, श्रीफळ, एलची, साकर, लविंग आदिना बीडा बनावी श्रावक-श्राविकाओनी भक्ति करी.

सत्तरभेदी पूजा भणावी. जिननी आगळ नवा नवा धूप, दीप, निवेद आदि धर्या हतां.

अहीं अेक कडीमां लख्युं छे के 'जीनजी गंधारना वंदीआ रे सर्व संख्याई बेतालीश'. अर्थात् गंधारमां ४२ जिनबिंबो हतां ते आनाथी नक्की थाय छे.

बारसना दिने धर्मचन्दजी सङ्घने लईने गाम कांठे अर्थात् गामना पादरे उतर्या. तेरशना दिवसे सङ्घ कावी बंदरे पहोंच्यो.

कावी-गंधारमां साहु-वहुना देरासर जे प्रसिद्ध छे. ज्यां सासुना देरासरमां आदीश्वर परमात्मा बिराजमान छे, ज्यां रायणवृक्ष पण छे. वहुना देरासरमां बावन देरा छे अने त्यां ५२ थांभला छे. तेनो रंगमण्डप खूब विशाल अने मनोहर छे. ज्यां बावीश गोखला छे अने मूळनायक तरीके धर्मनाथ बिराजमान छे. बंने

देरासरमां मळीने कुल ९६ प्रतिमाओ पाषाणनी त्यां छे अने मोटी धर्मशाळा छे, जेमां सङ्घने उतारो आपेल.

कारतक वद-१३ थी मागसर सुद सातम अर्थात् लगभग ९ दिवस कावी बन्दरे सङ्घे रोकाण कर्युं. चौदशना दिवसे कावी बन्दरे सर्व सङ्घे मळीने पूजा करी. जेम अत्यारे घीनी बोली बोलावीने पूजा थाय छे तेम त्यारे पण १ली-२जी अेम सात पूजा सुधीनी उछामणी थईने पूजा करावाई हती. जेमा १ली पूजा सङ्घपति धर्मचन्दजीअे, २जी पूजा धर्मचन्दजीना काकाना दीकरा अभेचन्दजीअे, ३जी पूजा कल्याणभाईना दीकरा दुर्लभभाईअे, ४थी पूजा कल्याणभाईना दीकरा नानाचन्द खुस्यालजीअे, ५मी पूजा प्रेमचन्दजी जे आगळना चार अने प्रेमचन्दजीअे मळीने करेल. ६ठ्ठी पूजा भगवानभाईअे करी, जेनी उछामणी साडा सातभाग अेवी थयेली. ७मी पूजानी उछामणी पाना नानाअे त्रण भागमां लीधेल.

धर्मचन्दजीअे चौदसना दिवसे सुन्दर खांडवाळा मोदक सङ्घनी भक्ति करवाने माटे बनावडाव्या. आ मोदकमां साल, दाल, घृत आदि पण भेळव्या हता. गुरुने पडीलाभ्या जेना पछी तेमने पहेरामणी करी बधा सङ्घवीओ अे साधुने पगे लाग्या अने त्यारबाद सङ्घनी भक्ति करी. बीजे दिवसे अर्थात् अमासने दिवसे धर्मचन्दजीना काकाना दीकरा अभेचन्दजीअे स्वामीवात्सल्यनो लाभ लीधो. अने तेओअे सङ्घमां श्रावक-श्राविकाओने कपडांनी पहेरामणी करी. अेकमे कल्याणकाकाना दीकरा दुल्लभजीअे आखा सङ्घने शीरो-पुरी करी जमाड्यो. बीजे नाना खुस्यालचन्दजीअे अने मोतीचन्दजीअे मळीने सङ्घजमण कर्युं तथा गुरुने यथाशक्ति दान पण कर्युं. कावी मुकामे पांचमे दिवसे गलालभाई तथा फतेहचंदभाईअे सङ्घ-स्वामीवात्सल्य कर्युं अने यथाशक्ति गुरुने पण दान दीधुं. भगवानभाईअे स्वामीवात्सल्य कीधुं. कावी मुकामे सातमा दिवसे पाना-नाना भाईअे स्वामीवात्सल्यनो लाभ लीधो हतो. ते दिवसे प्रभुनो रथयात्रानो वरघोडो तेमणे नीकाळ्यो हतो. आम गामगामना लोकोअे भेगा थई घणा ओच्छव कर्या.

१४मा दिवसे कावीथी भरुच तरफ जवा माटे सङ्घे प्रयाण कर्युं. सांजे अकोटा गामनी बहार पडाव नाख्यो.

आठमना दिवसे सङ्घ जम्बुसर पहोंच्यो. त्यां जम्बुसरमां प्रभुनी पूजा आदि करी ने सङ्घ फरी पाछो कर्मांड नगरमां आव्यो. अहीं कर्मांड गाममां मोतीलालजी श्रावके शीरो-पूरी करीने सङ्घजमणनो लाभ लीधो.

मागसर सुद-९ना दिवसे सङ्घ पाछो भरुच बन्दरे आव्यो, ज्यां आदीश्वर प्रभुना देरासरे सर्व सङ्घे आवी वांजित्रो साथे भावपूजा करी. केसर आदिनी अंगरचना करावी अने प्रभुनी पूजा पण करी. सङ्घवीश्री धर्मचन्दजीओ लाडवा आदिनुं जमण करी आखी नातने ते दिवसे जमाडी अने प्रभावनामां खांड (साकर)नी लाहणी करी.

भरुचनी बाजुमां वेजलपुर गाम छे त्यां पण तेमणे शासनप्रभावना करी घणा दीवाओ कर्या.

ऐतिहासिक अने साहित्यिक दृष्टिओ सङ्घस्तवननुं मूल्यांकन :

प्रस्तुत सङ्घस्तवन के संवत् १८७४ अर्थात् आशरे २०० वर्ष पहेलां श्रीभाणविजयजीना शिष्य श्रीनेमविजयजी म.सा. ओ रचेल आ स्तवननी भाषा घणी ज सरळ छे, पण क्यांक क्यांक गरिमा युक्त शब्दोनो प्रयोग पण थयेल छे.

* श्रीनेमविजयजी म.सा. ओ आ स्तवननी रचना पण सं. १८७४ द्वि ९ ने बुधवारे अर्थात् सङ्घनी पूर्णाहूतिना द्वितीय दिवसे ज करी होवाथी सङ्घनो अहेवाल आंखो देखेल जणाय छे.
* आखीय प्रत दूहा ढाल अने कलस थी रचायेल छे. जेमां शरुआतमां कया गामथी सङ्घ नीकळ्यो, कोण कोण सङ्घमां जोडायुं आदि वर्णन धरावती २७ गाथाओ मूकेल छे. त्यार पछी दूहो मूकी अने भरुच बन्दरथी सङ्घ नीकळ्यो तेनुं वर्णन १ली ढाळमां करेल छे जेमां २६ गाथाओ छे.
* कावी नगरे पहोंच्या ते पछीनुं वर्णन ३० गाथा वडे - २जी ढाळमां करवामां आवेल छे.
* अने त्यार पछी कलस द्वारा कृतिनी पूर्णाहूति करवामां आवेल छे.
* श्रीनेमविजयजी कृत प्रस्तुत सङ्घस्तवन द्वारा आपणने घणी माहितीनी प्राप्ति थाय छे. जेम के भरुच बन्दरे रहेनारा २०० वर्ष पूर्वेना घणा श्रेष्ठीओना

नाम आ स्तवनमांथी आपणने मळे छे. हाल भरुचमां जे पेढी चाले छे ते पण धर्मचन्दजी पछी लगभग २५ वर्षे थयेला शेठश्री अनुपचन्द मुलकचन्दजीना नामे छे. पण धर्मचन्दजीनो कोई उल्लेख मळतो नथी.

* सङ्घमां साधु-साध्वी २५ हतां तेवो उल्लेख मळे छे पण श्रावक-श्राविकानी संख्यानो कोई उल्लेख मळतो नथी.

* सङ्घयात्रानो जे विहारपथ दर्शावेल छे. ते प्रमाणे जोइअे तो अेक दिवसमां कर्माडथी गंधार - ४२ कि.मी., गंधारथी कावी - ६८ कि.मी., कावी थी आमोद - ५७ कि.मी. अने जंबुसरथी कर्माड - ४३ कि.मी. नो विहार पगपाळा करवो शक्य नथी अेटले प्रश्न थाय के सङ्घमां वाहनोनो उपयोग थयो हशे ? परंतु सङ्घस्तवनमां स्पष्ट उल्लेख छे के सङ्घमां साध्वी पण जोडाया छे तेथी सङ्घ छ'री पालित होवो जोईअे पण १-१ दिवसमां आटलुं अन्तर ओछां कापवुं अे अेक विचारणीय वात छे. अे समयना रस्ता अलग हता, जेथी अंतर होय. छतां आजनी तुलनामां तो लांबा विहारो ज होय.

* स्तवनमां 'अकलेसर गाम सुभावे रे झवेर देवचंद सतआवे रे' अे कडी द्वारा अनुमान करी शकाय के २०० वर्ष पहेलां हालनुं अंकलेश्वर अकलेसर हशे अने त्यारबाद हाल अंकलेश्वरना नामे ओळखाय छे.

* सङ्घनुं रोकाण पण अेक मुकामे १-१ दिवसनुं न थतां गंधार मुकामे ३ दिवस अने कावी मुकामे ७-७ दिवस अने स्वामीवात्सल्य-पहेरामणी आदि पण अलग-अलग श्रेष्ठीओ द्वारा थई.

* सङ्घ स्तवनमां दर्शाव्युं छे के कावी तीर्थमां प्रभुनी पूजा माटे सात-सात *बोली बोलावाई हती. हाल समयमां* पण शंखेश्वर तीर्थमां प्रभु पूजा माटे पांच बोली बोलवामां आवे छे. जेम अत्यारे आपणे 'रूपिया' के 'मण'मां बोली बोलीअे छीअे, तेम अे समये 'भाग'मां बोली बोलाती हशे केमके स्तवनमां लख्युं छे के...

"पूजा छठी भगवाननी रे लाल, सात भाग अर्ध लीध
पाना नाना पुजा सातमी रे लाल, त्रणभाग सहु सङ्घे दीध."

* कावी मुकामे पानाभाई अने नाना भाईओ प्रभुनी रथयात्रानो वरघोडो कर्यो हतो जे दर्शावे छे के पूर्वना काळमां छ'री पालित सङ्घ दरम्यान बधा ज कर्तव्य मात्र सङ्घपति करे तेवुं ज न हतुं, परन्तु सङ्घमां जोडायेल अन्य मोभीओने पण भाव जागे तो रथयात्रा आदि कर्तव्यो सङ्घ दरम्यान करता हशे.
* हालना छ'री पालित सङ्घमां ज्यांथी सङ्घ लई जवाय त्यांथी जे तीर्थमां जइओ त्यारे सङ्घनी पूर्णाहूति थई जाय छे. आ स्तवन ओ वातनी साक्षी पूरे छे के भरुच तीर्थथी नीकळी सङ्घ ज्यारे पाछो भरुच आव्यो त्यारे सङ्घनी पूर्णाहूति थई अर्थात् ज्यांथी नीकळ्यो त्यारबाद तीर्थोने जुहारीने सङ्घ पाछो पूर्वना मुकामे पाछो आवे त्यारे सङ्घ पूरो थतो.
* वळी भरुच मुकामे पाछा आव्या बाद पण सङ्घपतिनो उल्लास हजु अटकतो नथी. सङ्घ मुकामे पाछो आव्या बाद सङ्घमां जे जोडाया हतां ते सहुनी साथे जे सङ्घमां जोडाई शक्या न हतां, तेवा तेमनी आखी नातना श्रावक-श्राविकाओने जमाडीने सङ्घ पर कलश चढाव्यानुं कार्य कर्युं हतुं. वळी, खांड = साकरनी प्रभावना पण करी अने भरुच तीर्थमां रहेल आदीश्वर प्रभुनी भक्ति पण ओ दिवसे सविशेष करेल.
* सङ्घ पूर्ण थयाना दिवसे 'वेजलपुर' गाम अजुआलीओ रे आल - ओ कडी द्वारा अेम जाणी शकाय छे के वेजलपुर गाममां पण दीवा आदि करेल हशे.
* सङ्घ कावीथी अकोटा गयो अेवो उल्लेख स्तवनमां मळे छे. 'अकोटे सीरे रे डेरा कीया रे लाल, सांज सर्वे मिली शाथ' पण कावी नजीक अकोटा गाम हाल विद्यमान नथी पण ते समये होवुं जोइअे.

सङ्घ-स्तवन

श्री गुरुचरण नमी करी समरुं सरसती मात,
भाव द्रव्य मु(पु)जा तणी कहेस्यूं अथोचित वात... (१)
जंबुद्वीपना भरतमां देस लाडसुं ठाम,
कालिकानिम तिहा वली अतीउत्तम अभीराम... (२)

तिहां सुरीता सोभे भली, रेव नरबदा (नर्मदा) नाम,
तिण कठे भरुअल भ्रलों बेंदर अती हे उदाम... (३)
अभ्यवशे तिहा अतीअभला श्रीमाली सूभ ज्ञात
लाडली गामथी लाडूआ लोकमुखे कहेवात... (४)
दाने मांने दीपता करेज रुडा काम,
नीज शक्ति अनुसारथी वावरे चित सुभठाम... (५)
ईक दिन प्रोसहशालमां दीई सद्गुरु उपदेश,
पुजा प्रभु फल वर्णव्यो भवजल तरण विशेष... (६)
भविक जि(जी)व ते सांभली, उपनो भाव उल्लास,
जीवनयात्रा हवे जांयवो सङ्घ लेई सुविलाश... (७)
हित कारण आत्म(तम) भणी करी जिन भक्ती उदार,
विवरीने हुं वर्णवूं ते हुं सुणजो ईक तार... (८)

ढाल - वालजीनी वाटडी अमें जोतां रे अे देशी...

जिन शेवामां मन वशीया रे प्रभु देखण मन उलसीया रे
धर्मा मोती पेला थया रशीया रे हर्षे हृदय कमल जेहना हसीआ...
प्रभुजीनी शेवना ईहने प्यारी रे अेह तो दुरे करे दुख दारी प्र.
अेहथी नाशे कुमतनी दारी प्र. अंते आपे सीव सुख नारी प्र. आ.
धोलीबाई होय जनम्य विरो रे **न्याल धर्मचंद** कुलहीरा रे
सङ्घकाममां साहस धीर रे पुत्रन्यालना रत्नो **झवेर** प्र. २ ई.
झवेर सुत छे **केशवजी** भाई रे, पुत्र पौत्रो **मोतीना** शबाई रे
धर्मभीरु छे ईह अधीकाई रे करे गुरुदेव सेवा हित लाई रे प्र. ३ ई.
अभेचंद खुस्यालना जाणो रे बांधव नांनो भाई छे सूजाणो
मोतीन्याल भत्रुजो वखाणो रे रुडा अवशरे चूके न टांणो प्र. ४ ई.
सहु काममां ईह छे सुंजाणो प्र. देवगुरु शेवेई हीत आंण प्र. आ.
दुलभ जीवण छे देदारुं रे **कल्याणकाको** अेहनो वारुं रे
जीन धर्म अछे जेहने प्यारो रे **मोती रुप्यासोमं** कुल सारो प्र. ५ ई.
मोतीनागर जीनगुण रागी रे प्रभू पुजवानी जेने रढ लागी रे
अनूभव प्रीत अेहने जागी रे सङ्घे जावाने हुवो छे सरागी प्र. ६ ई.

रुपावधु मनमांहे चाले रे सहु साथमा हेते चाले रे
परीवारने लीई वली पाले रे हर्खे जीन गुण गावानें हाले प्र. ७ ई.
विरचंद जेठो वली शार रे पुजा उपर जेहनो छे प्यार रे
उपनों ईहने हरख अपार रे देख सुंजाणे जिनजी देदार प्र. ८ ई.
रुपानागर मननां मोजी रे, सहु साथ मांहे छे वोजी रे
करे मल्यानी हलफल झाझी रे, सहु साथ मांहे छे माझी
वेलडी लेई चाल्या छे ताजी प्र. ९ ई.
अभेदचंद हरीभाई मन हर्खे रे प्रभु भक्तिकरण चित तरसे रें
बंधव **मोतीने** नेहे नीर्खे रे सहु सजिन चाल्या छे सर्खे प्र. १० ई.
प्रेमचंद नीहाल सोभागी रे जीन शेवा उपर प्रीत जागी रे
बीजी ममता मेली वली त्यागी रे अेक प्रभु देखवानी मत लागी रे
प्र. ११ ई.
धर्मचंद प्रेमचंद छै पुरा रे मिथ्यामत मिल्यो छे दुर रे
सुभकाम मांहे छे सुरा रे धर्मकरणीमां नहीं छे अधुरा प्र. १२ ई.
वधु लखमीने प्रभू मन वाला रे खजमति जिने करवा ख्याल रे
प्रेमे जीनगुणना पीये प्य(प्या)ला रे नरभवमां हुवो अे नीहाल प्र. १३ ई.
हर्खा कल्याण कल्याणक कारी रे अेहवा अविनासी सेवा चितधारी रे
तेहथी नासे छे दुर्मिति नारी रें वली रुधें कुमतिनी अे बारी प्र. १४ ई.
धर्मानागरनो सुत साचो रे **देगर** नहीं मननो काचों रे
तेहनो सुत **फतेचंद** जायो रे ते तो जिनमत मांहे मांच्यो प्र. १५ ई.
वर्धमान कडूआ सुत कहीइं **अमरचंद** ने **सोमचंद** लहीइं रे
कल्याण त्रिजो सदहीई रे सङ्घे आववा तेह गहगहीइं प्र. १६ ई.
अभेचंद हरीभाई गुणे कीर रे, **नथू रत्नचंद** सधीर रे
दीयाभाई दोस सुगण सनूरें **दुला अभा** साहसधीर प्र. १७ ई.
गलाल विरचंदे सङ्घ सुणी गाल रे तेह तो त्रोशलाथी आव्या चाल्या रे
हेते यात्रा करणने हाल्या रे तेनां कर्मशत्रुने घणुं साल्या प्र. १८ ई.
माणीकचंद नाना वेलजीनो नीरख्यो रे सहु माजिनमांहि छे सरिखो रे
गलाल सुत **विमलचंद** परखो रे हतजीनगुण थूणवानें हरख्यो प्र. १९ ई.

भगवान रानेरनां वासी रे **नानचंद**नो सुत सुविलासी रे
यात्रा करवा लोक सर्वे जासी रे अेहवो सुणीनें आव्यो उलासी प्र. २० ई.
खुस्याल हरखचंद जोवेहेरी रे दीले दरीशण हुश घणेरी रे
सही साची मुगतिनी अे सेरी रे भजे भावस्यूं प्रीत भलेरी रे प्र. २१ ई.
अकलेसर गाम सुभावे रे **झवेरचंद देवचंद** सुत आवे रे
गुणन्याल मोरा प्रभु गावे रे गाम माटेडवासी सुख पावे प्र. २२ ई.
देतराल गाम रेहे छे वास रे **खुस्याल** कालो छे खाश रे
अंगे उपनो ईहनें उलाश रे आवें दरीशण देखवानी आस्य प्र. २३ ई.
रेवो सुत छे **मीठा**नो सार रे नीचे नेह उपनो नीरधार रे
कावीगंधारे जावा उदार रे उपनो भवी भाव अपार प्र. २४ ई.
जोई झवेर पुजानो हर्ख्यो रे मिल्यो साथ सर्वे मुझ सरीखो रे
समो सारो सर्वे तेणे परख्यो रे करुं यात्रा मने शुभ कर्यो प्र. २५ ई.
अेहवो आव्यो छे मनमां भाव रे थीर थाप सहु तिहां थावे रे
पछे नही छे अेहवो प्रस्ताव रे ईम सघलानो ईक सूभाव प्र. २६ ई.
काती वद सातिम सोमवारे रे चाल्यानो कर्यो छे विचार रे
आगल तेहनो कहु अधिकार रे सङ्घ गुण जपे **नेमविजय** सार प्र. २७ ई.

दुहा

माजिन सहु भेलो मिल्ये साजिन लेई सङ्घात
जीनजी पुंजण चालीआ जेहने जेहवी संगत १
श्रावक ने वली श्राविका साधु शबल सङ्घात
चतुर्विध सङ्घ भेलो हुवो तेहनी स्तवसू वात. २

ढाल १ली

शांति जिणेसर शाहिबा रे अे ढाल

सङ्घ मिल्यो सर्वे सामठो रे करवा यात्रा वली काज,
भेरुअअ बेंद्रईथी हालीया रे सर्वे लेई धरमनां साज भाविअण सुणज्यो भावसुं रे
मेलीने मननो रे मेल जिम तुम्हने सुख उपजे रे सुणतां सङ्घगुण वेल भ.२
पुर बाहिर जब आवीआ रे सगट मिल्यो छे बत्रीश
सङ्घवीजी सहु सङ्घ देखीने रे मने उपनो छे हर्ष विशेस भ. ३

सहगुरुने तिहां साथे लीया रे जेह **प्रेमविजय** रे पन्यास
भाग्यविजय बिजा वली रें साथे **रीधिसागरे** वली खाश भ. ४
साधु साधवी शर्व मंडली रे सङ्घमे थया पचवीश
जिनगुण थूणतां गोरडी रे शंप्रेड्य सङ्घ जगीश भ. ५
प्रथम प्रीआंणं जई उतर्या रे **कर्माड** नयरने रे बार
साजिन सहु आव्या सांभली रे माजिन मन हर्ष अपार भ. ६
कर्माड केरा श्रावक कहुं रे नवनिह करी नोनाम(नवनाम)
हर्षानागर सोहे दीपता रे कर धर्मकारण रुडां काम भ. ७
तश सुत छे तिहां सोभता रे **दुलभ** ने **सोमचंद**
लख्मीअभा सुत त्रीण वली रे **वनमाली दुला अग्रचन्द** भ. ८
मोतीलख्मी सूत सुंदरु रे वली **दयाल तिलकचंद**
प्रेमालख्मी सूत प्रीछज्यों रे अेनो नाम अछे **देवचंद** भ. ९
गलाल सूत तणां कहुं रे **दुलभ नियाल सोमचंद**
दुलभ लाल वली जाणीई रे तेहनां सुत छे रे **हीराचन्द** भ. १०
मोतीमूलजीने भेलो वली रे **पानचंद** छे **नीयाल**
अेह सर्वे साथ अव्यो अहीं रे मिलवा काजे उजमाल भ. ११
सङ्घवीअे मान दीधां घणा रे पान सोपारी देई सार
अम संगे आवोने साजिना रे जिन पुजा काजे उदार भ. १२
सङ्घपती वयण ते सांभली रें अती पुलकित हुवो तश अंग
करमाड सङ्घ साथे लीयो रें तिहां हुवो छे अती उछरंग भ. १३
सङ्घवीजी तिहाथी सीधावीया रे वस्या **गंधार** बिंदरे जाव्य
संवत अढार चमोतर रे काती वद आठीम भोमवार भ. १४
विर जिणेसर बंदीआ रे सघले तिंहा मलीने सङ्घ
दीपने धुप दीपावीयो रे पछे पुजा रुची नव अंग भ. १५
अष्टमी दिने अष्ट विधसु रे जीनने पुज्या सर्वे साथ
कर्म कठोर भवी कापीया रे दीठो दरीशण श्री जगनाथ भ. १६
नवमी दिने नव नेहसुं रे अरच्यो रे जिनवर अंग
मुगट चडाव्यो सिरे मोटको रे प्रभुने सुघट घाटसुं चंग भ. १७

सङ्घवी साजिन संतोषीया रे मोदीके करी मनूहार
भक्ती यूगती कीधी भली रे उपर पान फोफल देई सार भ. १८
जीनजीने अंगे आंगी रची रे मेली सुखड केसर घनसार
फुल चडाया अती फुटरो रे मांहे मेल्यो वली जरंतार भ. १९
सतर भेदी पुजा करे रे दसमी दिने सुची करी
अंग भाव पुजा भवभय हरु रे करे जिन आगे नव नव रंग भ. २०
दीप ने धूप नीविदनी रे करी विरजिन आगे सन्नात्र
पाप पडल दुरे परहर्या रे नमतां चोविशमां नाथ भ. २१
जीनजी गंधारनां वंदीआ रे सर्व शख्याई बेतालीश
पुजतां प्रभूना पायूलां रे सहु संघनी पुगी जगीश भ. २२
द्वादशीने दीने संचर्या रे **धर्मचंद मोती** लेई शंघ(सङ्घ)
गाम काठे जई रे जावा कावी जेहने छे उमंग भ. २३
सेवा गुरुनी नीत साचवे रे दीन दीन वधतरे वान
हर्षेस्यू त्यां हेजे करी रे पडीलाभे अन नें पांन भ. २४
तेरश दिने तिहां रस भले रे कावी बंदरमां सङ्घ जाय
भावेस्यूं भगवत भेटीआ रे आनंद सहु अंग न माय भ. २५
आगल ईहां होवे वातडी रे भवी सुणज्यो बाल गोपाल
भाणविजय कवीरायनो रें **नेम** कहे वचन रसाल... भ. २६

ढाल - २ जी

कोयलो रे परवत धुंधलो रे लाल अे (ढाल)

सासु वहुनां बिहु देहरा रे लाल कवी नगर मझार भवी प्राणी रे
वाद विवादे तिहां हुवो रे लाल बावन जिनलो अेकसार भ.सु. १
सासुजी रे देहरे रे लाल बेठा छे आदि जिणंद भ.
रायण रुख सोहें तिहां रे लाल दीठे उपजे आनंद. भ.सु. २
हवे वहुना देहरां तणा रे लाल सघलो कहु हु संबध भ.
बावन देहरीयें दीपतो रे लाल बावन तश खंभ भ.सु. ३
तिहां रंगमंडप रलीआमणो रे लाल तेहमां गोखल छे बावीश भ.
मुल मंडप माहे दीपतां रे लाल देखो धर्मनाथ जगदीश भ. ४ सु.

बिहु देहरे मली जिनवरा रे लाल पडिमां छनू परीमांण भ.
पाषाणमें छें परगडी रे लाल जिनघरनो अे मंडाण भ. ५ सु.
जिनजी मंदिरने पासे तिहां रे लाल नानी मोटी सोभे धर्मशाल भ.
सर्व सङ्घ तिहां उतर्यो रे लाल नीज नीज लेई परीवार भ. ६ सु.
असन पांन कीधा तिहां रे लाल सों जिन जुगते यनाय भ.
सङ्घवीई साधु संतोषीया रे लाल पडीलाभी मुनीराय भ. ७ सु.
चौदश दिने दिनानाथनां रे लाल सुपरे करे सुची अंग भ.
प्रेमेसुं प्रभु पुजा करें लाल सर्वे मलीने शंघ भ. ८ सु.
पेली पुजा **धर्मचंद**नी रे लाल बीजी पुजा **अभेचंद** भ.
त्रीजी पुजा **दुर्लभ**तणी रे लाल चोथी **नानचंद खुस्याल** भ. ९ सु.
पांचमी पुजा प्रेमसुं रे लाल चिहुं जिणे मलीने कीध भ.
पुजा छठ्ठी **भगवान**नी रे लाल सातभाग अर्धमां लीध भ. १० सु.
पानानाना पुजा सात्मी रे लाल त्रिण भाग सहु सङ्घे दीध भ.
देज रे गाम दीपावीयो रे लाल सहु सङ्घ में परसीध भ. ११ सु.
ईम पुज्या जिनदेवने लाल सज्जि जुज्जि उपाय भ.
सङ्घ पुजा हवे वर्णवू रें लाल विवूधें करी वनाय भ. १२ सु.
स्वामीनी भक्ति भली करे रे लाल सङ्घवीजी **धर्मचंद** ताम भ.
मोदीक नीपाय मोकला रे लाल मांहे मेली खांड अभीराम भ. १३ सु.
वली साल दाल घृत सालणां रे लाल, कहेतां न_ने तेनो नाम भ.
ईणविध रांध शेवो सही रे लाल पेला पडीलाभ्या गुरु धांम भ. १४ सु.
पेरामणी प्रेमे करी ले लाल सङ्घवीजी साधु पगे लाग भ.
देवगुरु जीणे पुजया रे लाल सही लहसे तेह सोभाग भ. १५ सु.
बीजो वछल **अभेचंद**नो रे लाल **खुस्याल** सूते सूभ कीध
कपडा दीया त्यां मोजे करी रे लाल नरभव लाहो तिणें लीध भ. १६ सु.
त्रीजे दीने त्रीजो वली रे लाल **साहदुभले** जमांड्यो सङ्घ भ.
सीरो पुरी परीघल करी रें लाल **मोतीरुपा** मली सङ्घ भ. १७ सु.
नानाखुस्याल मोती मली रे लाल चोंथे दीने वीतयांण भ.
श्वामीनी सेवा करी रे लाल यथोचीत दीयो गुरु दान भ. १८ सु.

पांचमे दीनें सङ्घ पोषीयो रे लाल **गलालवधुने दयाल** भ.
फतेचंद भेले थई रे लाल गुरुदान दीये उजमाल भ. १९ सु.
भगवानने नाना तणे रे लाल छठे दीने जस लींध भ.
पानांनाना दीन सातमे रे लाल स्वामी सेवा सुप्रसीध भ. २० सु.
रथयात्रा रुडी रची रे लाल मोटो करीनें मंडाण भ.
प्रेमे करी प्रभु पूखीयां रे लाल खरची द्रव्यनी खांण भ. २१ सु.
ईम महोच्छव किया घणा रे लाल माजिन मली मन रंग भ.
सुद मागसिर दिन सप्तमी रे लाल संचर्यो कावीथी शंघ भ. २२ सु.
अेकोटे सीरे रे डेरा कीया रे लाल सांज सर्वे मिली शाथ(साथ) भ.
पुजवा प्रेम प्रगटीयो रे लाल जंबूशरना जगनाथ भ. २३ सु.
अष्टमी दिने तिहां आवीया रे लाल भावे भज्या भगवंत भ.
जंबूसरथी सीधावीया रे लाल रहेवा **केरवाडे** मन खांत भ. २४ सु.
मोतीविलजी सङ्घ नूतर्यो रे लाल हर्षेस्यूं हुसीआर भ.
जुगत करीने जमाडीयो रे लाल सीरो करीने सार भ. २५ सु.
नांमी(नवमी) दिनें नव नेहस्यूं रे लाल आव्या **भरुअचे** सङ्घ भ.
हरखें मिल्या सहु साजिनो रे लाल आनंद उपनो अंग भ. २६ सु.
भावेंसू प्रभु भेटीआ रे लाल आवीने आद जिनराय भ.
भावपुजां तिहां भावे करे रे लाल ताल कंसाल बजाय भ. २७ सु.
अंगी बनाई अती रुयडी रे लाल केसर घनसार घसाय भ.
प्रभु पुजा करी प्रेमस्यू रे लाल तेणें पातीक दुर पलाय भ. २८ सु.
नीज नात जमाडी मोदिके रे लाल **धर्मचंद मोती** घरे आय भ.
नोकारसी में नेहसु रे लाल लेणी खांड तणी लाय भ. २९ सु.
वेजलपुर अजुआलीयो रे लाल पुन्यना करीने उपाय भ.
लहो लीअ लखमी तणो रे लाल अे जगो जगमें गवराय भ. ३० सु.

कलस

भरुअच बेदर सङ्घसुखकर संथुणो में सार अे
जे भवी भणसें अने सुणशें तेह लहे जयकार अे

भाणविजय पंडित तणे **नेमे** स्तवी लीला सार अे
भवी अेम करसे तेंह तरशे भवजल नीधी नीस्तार अे

संवत् अढार चमोतरा वर्षे (१८७४) अेकमतिथी बुधावार अे
मागसीर मासे अती उलासें सङ्गुणे कह्या सार अे
इती सङ्गुण गीत संपूर्णमीती

(सोनगढ मुकामे, महावीर जैन विद्यालय द्वारा योजित २३मा जैन साहित्य समारोहमां रजू करेल शोधपत्र)

C/o. १०, गिरिकुंज सोसायटी,
नवा शारदामंदिर रोड,
सुखीपुरा, अमदावाद-७

श्रीअनंतहंस गणि रचित

पावागिरि-चैत्यप्रवाडि

– सं. डिम्पल निरव शाह

प्रतपरिचय :

'पावागिरि-चैत्यप्रवाडि' नामनी प्रस्तुत कृतिनुं सम्पादन कार्य आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमन्दिर, श्री महावीर जैन आराधना केन्द्रनी अेकमात्र हस्तप्रतने आधारे करवामां आव्युं छे. आ प्रतनो क्रमांक ०७२२३७ छे. अक्षर महदंशे सुन्दर अने सुवाच्य छे. अमुक जग्याअे अक्षर झांखा पडी गया छे, अक्षरो पडिमात्रा अने अत्यारे प्रचलित मात्रानुं मिश्रण धरावे छे. स्वच्छ देवनागरी अक्षरोवाळी हस्तप्रतनी बंने बाजु हांसिया छे. जे पार्श्व-मध्य फुलिकाथी सुशोभित छे. लखाण पद्धतिना केन्द्रमां पंचरथ चोरसनी भात उपसावे छे. आ प्रत १७मी शताब्दीनी होय तेवुं लागे छे. साईड परथी पाना फाटी गया छे.

प्रतिलेखके तेमनो परिचय "महोपाध्याय श्रीजिनमाणिक्य गणि शिष्य अनंतहंस गणिकृता अनंतकीर्ति गणिना लिखिता" अे प्रकारें आप्यो छे. अपभ्रंश मिश्रित जूनी गुजरातीनी आ रचना छे.

रचनाकाळ :

आ प्रशस्तिमां रचनाकाळनो उल्लेख नथी. पण, जे अरिसिंघ राजानो उल्लेख छे ते १२मी सदीमां मळे छे, लक्ष्मीसागरसूरिनो उल्लेख छे ते १६मी सदीना छे, अने अनुमानतः आ प्रत १७मी सदीनी छे.

कृति-प्रणेता परिचय :

पुष्पिकामां जणाव्या प्रमाणे महोपाध्याय जिनमाणिक्य गणिना शिष्य अनन्तहंस गणिनी आ रचना छे. कर्ताअे अन्तिम कडीमां पोताना गुरु जिनमाणिक्यनुं अने ते पूर्वनी कडीमां लक्ष्मीसागरसूरिनो नामोल्लेख कर्यो छे. तेथी तपागच्छना आ. लक्ष्मीसागरसूरि (सं. १४६४-१५४७)नी शिष्य परम्परामां कर्ता थया छे तेम सिद्ध थाय छे. आ हिसाबे कर्तानो समय सत्तरमा शतकनो प्रारम्भकाळ होय ते शक्य छे.

कृति-परिचय :

कृतिनी शरुआतमां श्रीसरस्वती माताने पगे लागी प्रणाम करवा योग्य अने पूजन करवा योग्य, वन्दन, सत्कार अने अर्चाने योग्य अेवा सुगुरुने नमस्कार करी, पावागढना जाज्वल्यमान मन्दिरोनी यात्रानो मांगलिक शुभारम्भ करता श्रीलक्ष्मीसागरसूरीश्वरजीनी निश्रामां श्रीचतुर्विध सङ्घ जे रीते भावोल्लास वडे चढे छे ते चैत्यपरिपाटी क्रमसर तेओश्रीनी ज काव्यात्मक शैलीमां अहीं उपस्थित छे. अेवा सुगुरु महाराजनी सेवना करी आपणे पण श्रीसङ्घ साथे आजे ते ज पुनित पावागढना चैत्योने चालो सौ जुहारीअे. हवे पावागढ मन्दिरोनी यात्रानुं अनुसरण कराव्युं छे.

पहेली जग्या चंपकनेर नामनी छे.

- पौराणिक उल्लेखोमां चांपानेर चंपकनगर, चंपकदुर्ग तरीके नोंधायुं छे. चांपानेरनी भव्यता वर्णवती गाथाओ संस्कृतमां पण लखाई छे. पंदरमी सदीमां छेक कर्णाटकथी कवि गंगाधर अहीं आव्या हता अने चांपानेरनी अनुभूतिने तेमणे पोतानी कवितामां पण लखी हती. पावागढ अढी हजार फीट ऊंचो छे. चांपानेर तळेटीथी शरु करीने केटलेक ऊंचे सुधी बांधकामो धरावे छे. एटले चांपानेर आजे देखाय छे, तेनाथी घणुं मोटुं हशे अे वातमां कोई शङ्का नथी.
- वि.सं. १५३५मां चांपानेर पर मोगल शहेनशाह हुमायुअे कबजो जमाव्यो हतो. अे वखते चांपानेरमां टंकशाळ स्थपाई हती.
- अहींना अेकथी अेक चडियाता मिनारा, सात कमान, पाणीनी टांकीओ, दरवाजा, किल्लानी दिवाल तेनी कोतरणीकाम-कळा-कारीगरी माटे जगविख्यात थया छे.
- १६मी सदीमां चांपानेरना कोई गामे गरीब ब्राह्मणने त्यां बाळकनो जन्म थयो अने नाम पड्युं ब्रिजनाथ. ब्रिजनाथ मिश्राअे पाछळथी भारतीय संगीतमां नाम काढ्युं अने आजे तेओ बैजु बावरा नामे वधारे जाणीता छे.
- २००४मां युनेस्कोअे चांपानेरनुं महत्त्व पारखीने तेने 'वर्ल्ड हेरिटेज साईट' जाहेर कर्युं.

- सौथी महत्त्वनी वात अे छे के शिवजीनुं लकुलीशनुं अे मन्दिर चांपानेरनुं सौथी जुनुं बांधकाम छे. छेक दसमी सदीनुं अेटले के १००० वर्ष पुराणु. चांपानेर पोते भले ७मी-८मी सदीमां बंधायुं हतुं पण अे वखतना कोई बांधकामो रह्या नथी. आजनुं चांपानेर छे, अे तो पंदरमी सदीनुं छे. जैन मन्दिर सहितना बीजा बांधकामो पण अहीं छे. चांपानेर सङ्घे अेक बावन जिनालयवाळुं बंधावेलुं मन्दिर जेमां अभिनन्दन प्रभु अने जीरावाला पार्श्वनाथ भगवाननी प्रतिमाओ मुख्य हती. ते अभिनन्दनस्वामीनी अधिष्ठायिका देवी तरीके कालिकादेवीनी स्थापना थई छे, ते देवी ज गुजरातना लोकहृदयमां कोरायेला गरबामां प्रतिष्ठा पामी छे.

छेल्ला पांचसो वर्षथी शहेर समयांतरे खाली थतुं रह्युं छे. भारतना उत्तमोत्तम पुरातत्त्वीय बांधकामोमां स्थान पामतुं चांपानेर हवे तो साव खाली छे, मात्र खंडेरो ऊभा छे, ईतिहासनी कथा कहेवा माटे.

प्रतमां मळेल माहिती प्रमाणे जैनधर्म पण त्यां अे समये विकसित हतो. आ चंपकनेर जे नेमिनाथ स्वामीनी उत्तम नगरी छे त्यां अने बीजा शान्ति जिनेश्वर स्वामीने प्रणाम करीने चतुर्विध सङ्घ पोतानी काया सफळ करे छे. अे दिशामां गौरववंतो अेवो राजानो गढ छे. ज्यां अरिसिंघ राजा राज करे छे.

"ओ दीसई गिरुउ गिरिह राय,
जिहां राज करई अरिसिंघ राय"

(विक्रमनी १२मी सदीमां, "पावागढथी वडोदरामां प्रकट थयेला जीरावाला पार्श्वनाथ" पुस्तकने आधारे अरिसिंघ राजानो उल्लेख मळे छे. पृ. ९६. संभव छे के आ चैत्यपरिपाटी रचाई त्यारे त्यां अरिसिंघ राजानुं शासन होय.)

सारा पर्वतनी श्रेष्ठ श्रेणीना पगथिया जोईने हवे आनन्द पामतां तेओ पगथियां चढे छे. आ रीते विलम्ब विना महा महिनामां गिरिनां दर्शन करे छे. वसंतपंचमीना आ महा मासमां बधां वृक्षो मोटा अने रसाळ छे, पण हृदयमां आंबो वसे एवो छे. आगळ प्रथम पोळ आवी ज्यां राजाना भवननी पंक्ति जोवा मळे छे. मनोहर मढमन्दिरथी गिरि सुन्दर लागे छे. आसोपालवना पांदडानुं तोरण अने हरण जेवी सुंदर आंखोवाळुं आसक्त थई जवाय अेवो मजलो तेमने

जोवा मळे छे.

हवे, पछी आगळ विसामो आपे अेवुं भाताखातुं छे. त्यां बधी दिशामां विविध प्रकारनी वेलडीओ छे, अने खीलेलां फुलेलां पुष्ट करावे अेवा फळो अपार प्राप्त थाय छे. सन्तोष आपे अेवुं सरस सरोवर शोभे छे. धन, कण, कंचन, रत्नना कोठार मनोहर शोभे छे. कुदरतनो आ आह्लादक करिश्मा जे हृदयना चित्त मोही ले अेवा छे. मोह पामे अेवी आ रचनाने जोईने मनुष्य त्यां विचारतो जाय छे विचारमां ने विचारमां अनुक्रमे बीजी पोळ आवे छे. बंने बाजु अति ऊंडी खीण तेमने जोवा मळे छे. जाणे, खरेखर कळयुगनी उपेक्षा करतां देवमन्दिरनां शिखरो शोभे छे, विशेषमां गगननुं आंगणुं अेकदम निर्मळ छे. त्यारे, तेमने दण्ड, कळश अने धजा झळहळ जोवा मळे छे. आ उपरांत मन्दिर शिखरना कळश नीचेनो भाग पण सुन्दर देखाय छे. अेवा मनोभाव व्यक्त करतां सौ आगळ वधे छे.

ज्यारे जिनभवन द्वार पर पहोंचे छे त्यारे धर्म मनोरथी अेवा सर्वेनो हर्ष अपार जोवा मळे छे. त्रण जगतना नाथनी जे मूर्ति छे तेनी सतत पूजा करीश अने वारे-दिवसे मननो विकार दूर करीश अेवी भावना तेमनामां जागृत थाय छे. सेना माताना उदरमां जन्मेला सम्भवनाथस्वामी भवनी भावठ दूर करनारा छे. मळेलो आ जन्मारो जंजाळमांथी मुक्त थवा जेवो लागे छे. पोताना नयने निरखीने हैयामां अपार हर्ष थाय छे अने प्रभुनी प्रसन्नतानी पूजा करीश अेवा भाव साथे तेओ प्रभु भक्तिमां जोडाय छे. नारीओ मनना आनन्दथी दहेरासरनी मध्यमां जिनेश्वर भगवानने जोए छे, अने सारा विचार करीने बोले छे – 'आजे अमृतरूपी मेघ वरसतो होय अेवुं लागे छे. प्रवेशतां ज अमृत रसने अमे नयनमां धारण करीअे छीअे' आ रीते हृदयमां हर्ष धारण करी तेमनां नयन कृतार्थ थाय छे. धर्मनो परमार्थ जाणीने प्रभुना चरणमां पूजा रचावे छे.

ओरसिया उपर चन्दनना रसने घसे छे, अेमां केसर, कस्तूरी भेळवे छे. शिवसुखने आपनार, आत्मकल्याण करनार अेवा मूळनायकना अंगे लेप करी तेमनी पूजा करे छे. संभवनाथ जिनेश्वरना अंगे अर्चना करी हृदयमां कस्तूरी समान सोहामणुं सुख पामे छे. सकळ स्वामीने याद करता जे कोई

पाप छे ते दूर थाय छे. बोरसली, मोगरो जेवा रसपूर्ण परागवाळा पुष्पमधु तेमज करेण, पारधि (अेक फूलनुं नाम) जेवां सुन्दर फूल विशाळ मात्रामां त्यां जोवा मळे छे. चंपो, जासूद, सुगंधी वाळो, जूइ जेवी वनस्पतिनी पूरेपूरी सुगंध ते नगरनी दशे दिशाओमां व्यापे छे. मननी आशाने पूरी करीने जमणा हाथ नजीक पार्श्वनाथ जिनेश्वरनी विविध कुसुम वडे पूजा करे छे. सुन्दर, रसीलो, अलबेलो, इन्द्र महाराजा जेने नमेला छे, केसर, कपूर, कुसुमथी सुसज्ज अेवा मुक्ति अपावनार स्वामीने तेओ मस्तक नमावीने वन्दन करे छे अने परम आनन्दने पामे छे. बे हाथ जोडी प्रणाम करी जगतना नाथ जिनेश्वरनी प्रदक्षिणा करे छे. परमेश्वरनी पूजा करतां क्रोड कर्मो नाश पामे छे. आवा आन्तरिक हर्षोल्लास साथे तेओ प्रभुना रंगे रंगाय छे.

सहसाअे करावेल दक्षिणमां आदीश्वरनुं देवमंन्दिर छे, त्यां वन्दन करतां ते रत्नमूर्तिनो प्रभाव अद्भुत जणाय छे. कल्याणना मूळ, जगमां प्रकाश करनारा, सारा गुणोना अेक स्थानरूप अने मुनिओना इन्द्र श्री महावीर जिनेश्वरनी रत्नमय मूर्ति उत्तर दिशामां आवेला मन्दिरमां छे. ते प्रभुना अंगे भक्तिपूर्वक तेओ वंदन अने पूजा करे छे.

खीमसिंहे जे भवन कराव्युं छे त्यां नेमिनाथ स्वामीने नमन करे छे. आगळ जतां अम्बिकादेवीनी देरी आवे छे, ज्यां दर्शननो लाभ लई प्रणाम करी तेओ आगळ वधे छे.

[अणहिल्लवाड पाटण (गुजरात)मां प्राग्वाट बृहच्छाखा (वीसा पोरवाड)मां मुकुट जेवा छाडा शेठना वंशमां खीमसिंह अने सहसा नामना बे उदारचरित संघवी, विक्रमनी १६मी सदीना प्रारम्भमां थई गया. जेमणे चंपकनेर समीपना अत्युच्च शिखरवाळा पावकगिरि पर अर्हतनुं चैत्य अने त्यां आर्हत (जिननुं) अतिप्रौढ बिम्ब कराव्युं हतुं. जेनी उच्च प्रकारनी प्रतिष्ठा पण ते बन्नेअे हर्षोत्सवपूर्वक वि.सं. १५२७मा पोष वद ७ना सुदिने करावी हती.]

- 'जैन सत्यप्रकाश' वर्ष-११, अंक- १०-११, पृष्ठ-२७४, श्लोक-१४
- 'तेजपालनो विजय' वि.सं. १९९१ (श्रीजैनधर्माभ्युदय ग्रन्थमाला - ३, पृष्ठ-१९)

◆ 'पावागढथी वडोदरामां प्रकट थयेला जीरावला पार्श्वनाथ (पृष्ठ १९-२०)

अे बन्ने सदगृहस्थोअे तपागच्छना लक्ष्मीसागरसूरि, सोमजयसूरि वगेरे आचार्योना सदुपदेशथी वि.सं. १५३८मां चित्कोश (ज्ञानभण्डार)मां पोताना द्रव्य वडे समग्र जिनसिद्धान्त लखाव्यो हतो. ('तेजपालनो विजय' १६मी सदी पृष्ठ २०)

◆ 'जैन परम्परानो इतिहास' - ३, पृष्ठ-५४२

आम, स्तुति, स्तवन करीने श्रावक पोताना दुःखरूपी वन अने पापने पखाळी नाखे छे. तेमनुं अति चंचळ मन पावागिरि पर आपोआप धन्यता अनुभवे छे. हवे तेओ अंचलवसही तरफ जाय छे.

पर्वत पंथ पर पहोंचीने अंचल वसही भणी जई त्यां वीर जिनेश्वरने नमस्कार करीने बांधेला कर्म छोडीअे अेवो भाव व्यक्त करे छे. आगळ पनक वसही छे. ज्यां मोटा प्रमाणमां भगवानना समूहमां दर्शन करे छे. त्यां तलावडी छे तेनो स्पर्श करतां ठंडुं-ठंडु पाणी मळे छे. ज्यारे गिरिना शिखर पर आवे छे, त्यां शंभुविहार देखाय छे. गिरि विस्तारथी अत्यंत गाढ छे. तेनो पार केवी रीते पमाय ? त्यां पाछळ क्यांकथी भवनमां अंदर जाय छे, ज्यां जिनेश्वरनी घणी प्रतिमाओ पंक्तिमां हती जेना वन्दन करे छे. पार न पमाय अेवा संसार-समुद्रना पारने पामेला, देवोना समूहथी वंदायेला, कल्याणरुप वेलडीना विशाळ मूळ समान सर्व जिनेश्वरो सारी वस्तुओमां अेक सारभूत अेवा मोक्षने आपो अेवी प्रार्थना तेओ सौ करे छे. आ स्थळे बाळक जेम अवाज करे अने जगतमां जाणे जागता देव होय अेवो देवलोक आ संभवनाथ स्वामी देवनो देखाय छे. मूर्ति तेमने अति आनंद आपे अेवी आह्लादक छे. सौम्य कळाथी शोभता जोई नयनमां अमीरसने वरसावता सारा विचारपूर्वक भगवाननी पूजा करे छे. 'भवना फेरा दूर करनार, तुं शरणे आवेलानो रक्षण करनार छे, मारी पण तुं सार कर. तारी पासे हुं अनंत भवना तीरनो पार पामुं छुं!' अेवी उत्कट लागणी तेमनामां जागृत थाय छे.

भक्तिथी युक्त स्तुति करी प्रभुने नमस्कार करे छे. लक्ष्मीसागरसूरि भक्ति करी मनना मनोरथ पूरे छे.

- वि.सं. १५२५मां लक्ष्मीसागरसूरि जे तपागच्छना आचार्य छे तेमनो उल्लेख 'पावागढथी वडोदरामां प्रकट थयेला जीरावला पार्श्वनाथ' पुस्तकना पृष्ठ ६३मां जोवा मळे छे.
- लक्ष्मीसागरसूरिनो परिचय "जैन परम्परानो इतिहास" भाग-३, वि.सं. २०२०, त्रिपुटी महाराजना पुस्तकमां जोवा मळे छे. पृष्ठ ५४०-५४१.

मनुष्यना राजा अने भुवनमां सूर्य समान, भव्य जीवो वडे स्तवायेला, शिवसुखने आपनारा अेवा पावागिरि मंडण नेमिनाथ नरेश्वरनी आ स्तुति जिनमाणिक्य मुनिना शिष्य द्वारा रचायेल छे.

आ रीते, पावागिरि मन्दिरोनी यात्रा समाप्त थाय छे. महोपाध्याय श्रीजिनमाणिक्यगणिना शिष्य अनंतहंस गणि अेना कर्ता छे. अनंतकीर्ति गणि प्रतना लेखक छे. स्तंभतीर्थ (खम्भात) नगरमां तेओश्रीअे आनुं लेखन कर्युं छे.

- भ. लक्ष्मीसागसूरि अने आ. सोमजयसूरिना उपदेशथी अमदावादमां नवा ग्रन्थभण्डारो स्थपाया हता. ते भण्डारो उपा. जिनमन्दिर गणिनी देखरेख नीचे तैयार थया, अने महो. जिनमाणिक्य गणिवरे ते बधानुं संशोधन कर्युं.
- महो. अनंतहंस गणि ते ५५ मा भ. आ. हेमविमलसूरिनी आज्ञामां हता, आथी ते पोताने तेमना पण शिष्य बतावे छे.
- पं. अनंतकीर्ति गणिअे सं. १५२९मां मंत्री गदराज श्रीमालीनी पत्नी सं. सासूने भणवा माटे "शीलोपदेशमाळा" लखी. (प्रक. ४४, पृ. २११) (श्री प्रशस्ति संग्रह भाग-२, पृ. १४०)
- महो. अनंतहंस गणिअे "आनंद आदि श्रावक चरित्र" रच्युं. सम्भव छे के तेनुं बीजुं नाम "दृशदृष्टान्तचरित्र" पण होय (प्र. ५, पृ. ४५६), पट्टावलि समुच्य भाग-२, पुरवणी पृ. २५२, २५३) (जैन परम्परानो इतिहास, त्रिपुटी महाराज पुस्तकने आधारे पृष्ठ - ४६२)

कृतिना आधारे आ प्रमाणे पावागढनो इतिहास मळे छे. आ उपरांत पावागढनो अैतिहासिक उल्लेख अलग-अलग पुस्तकोने आधारे नीचे प्रमाणे छे.

पुस्तक-१ 'तेजपालनो विजय'

(गोधरा, पावागढ, चांपानेरना अप्रकट इतिहास साथे)

विक्रमनी १२मी सदी :

अंचलगच्छ-पट्टावलीमां उल्लेख मळे छे के आर्यरक्षिते पावागढमां महावीर-मन्दिरनां दर्शन कर्यां हतां.

विक्रमनी १३मी सदी :

श्वे. जैन मंत्रीश्वर तेजपाले पावागढमां 'सर्वतोभद्र प्रासाद' कराव्यानुं वि.सं. १४९७मां रचायेला वस्तुपाल-चरित्रना आधारे जणाव्युं छे. अन्यत्र अन्वेषण करतां जणाय छे के त्यां मूळनायक तरीके वीरनी प्रतिमा मुख्यतया हती.

विक्रमनी १५मी सदी :

आ सदीना छेल्ला भागमां जैन श्वे. तपागच्छना सुप्रसिद्ध सोमसुन्दरसूरिना महान विद्वान शिष्य भुवनसुन्दरसूरि थई गया. जेनुं स्मरण मुनिसुन्दरसूरिअे वि.सं. १४६६मां गुर्वावली (पद्य ४२३)मां कर्युं छे. ते विद्वाने यात्रादि प्रसंगे जिनेश्वरोनां-तीर्थोनां भक्तिभर्यां अनेक स्तोत्रो रच्यां हतां, तेमां पावक भूधर (पावागढ पर्वत) पर रहेला त्रीजा तीर्थंकर सम्भवनाथनुं ९ पद्यमय सं. स्तोत्र पण छे, जेनां ८ पद्योनुं छेल्लुं चरण आ प्रमाणे छे—

'स्तुवे पावके भूधरे शम्भवं तम् ।'

भावार्थ : पावक पर्वत पर रहेला ते संभवनाथनी हुं स्तुति करुं छुं.

चांपानेर पुरना मुकुट जेवा पवित्र पावकाद्रि पर रहेला संभवनाथ (श्वे. जिनमूर्ति) प्रत्ये भक्तिभाव प्रेरतुं 'भुवन' नाम गर्भित छेल्लुं पद्य, तेमां आ प्रमाणे छे —

''चांपानेरपुरावतंसविशदश्रीपावकाद्रौ स्थितं
सार्वं शम्भवनायकं त्रिभुवनालङ्कारहारोपमम् ।
इत्थं यो गुरुभक्तिभावकलितः संस्तौति तं वृण्वते
ताः सर्वा अपि मङ्गलोत्सवरमाभोगान्विताः सम्पदः ॥''

(जैनस्तोत्रसंदोह, भाग-२, पृ. १६६-१६७)

विक्रमनी १६मी सदी :

तपागच्छना सुमतिसुन्दर आचार्यनी मधुर वाणी सांभळीने मांडवगढनो विशिष्ट संघपति वेल्लाक, सुलताननुं फरमान मेळवी संघ लई यात्राअे चाल्यो हतो. ईडरगढ, जीरावला, आबू, राणकपुर वगेरेमां यात्रा करी पावकशैल (पावागढ) पर रहेला सम्भवनाथने प्रणाम कर्या पछी हृदयमां शान्ति पामता ते संघवीओ माळवा देशमां पोताने स्थाने पहोंच्या हता. (आ उल्लेख वि.सं. १५४१मां पं. सोमचारित्रगणिअे रचेला गुरुगुणरत्नाकर काव्यमां मळे छे.)

विक्रमनी १८मी सदी :

वि.सं. १७६४मां जैन मुनि शीलविजयजीअे तीर्थमालामां 'चंपानिरे नेमिजिणंद महाकाली देवी सुखकंद' कथन द्वारा सूचित कर्युं छे के – चांपानेरमां नेमिनाथ (मूळनायकवाळुं) जिनमन्दिर हतुं अने महाकाली देवीनुं स्थानक हतुं.

विधिपक्ष (अचलगच्छ)ना आचार्य विद्यासागरसूरिना पट्टधर उदयसागर सूरिअे पावागढनी महाकालिनी तथा साचा देवनी यात्रा वि.सं. १७९७मां करी हती – अेम नित्यलाभ कविअे वि.सं. १७९८मां रचेल विद्यासागरसूरिरास (अै. राससंग्रह भाग-३, य.वि.ग्र.) परथी जणाय छे.

विक्रमनी २०मी सदी :

वि.सं. १९४४मां महा सुद ८ चांपानेर गाममां जैनमन्दिर (दि.)नी स्थापना थई.

पावागढ चढता ६ठ्ठा दरवाजानी बहार भींतमां दि. जैन प्रतिमा पद्मासन (१.५') दोढफूट ऊंची सूचवी तेना परनो लेख ११३४ जणाव्यो छे.

छाशिया तळाव पासेना ३ मन्दिरो विना प्रतिबिंबनां जीर्ण पड्यां जणाय छे.

दूधिया तळाव उपर बे प्राचीन जीर्ण मन्दिर जणावी तेमांना अेकनो उद्धार सं. १९३७मां थयो जणावे छे.

आगळ सीडियोनी बंने तरफ ८ (दि.-?) जैन प्रतिमा जणावी पछी उपर कालिका देवीनुं मन्दिर जणाव्युं छे.

अे सीडियोथी अेक तरफ थोडुं चालतां पहाडनी टोच पर रामचन्द्रना सुपुत्र लव अने कुशनुं निर्वाण स्थान, तेने साक्षात् मोक्षमहल अने अे पहाड परथी ५ कोटि मुनि मुक्ति पधार्या !! जणावे छे.

"रामसुवा वेण्णि जणा लाडणरिंदाण पंच कोडीओ
पावागिरिवरसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥"

आ माहितीने आधारे लागे छे के केटलाक मन्दिरोने दिगम्बरोअे हाथ करी पोताना मन्दिरोमां परिवर्तित करी नाख्यां छे.

पुस्तक-२ 'जैन तीर्थ सर्व संग्रह'
भारतभरनां जैन तीर्थो अने नगरोनुं अैतिहासिक वर्णन,
भाग-१, पृष्ठ. १९-२०

दुष्काळना विकट वर्षमां शाह बिरुदनी शोभा वधारनार खेमाशाहना रासमां वि.सं. १७२१मां कवि लक्ष्मीरत्ने पावागढनुं वर्णन करतां जणाव्युं छे के –

"गुर्जर देश छे गुणनीलो,
पावा नामे गढ बेसणो
मोटा श्री जिन तणा प्रसाद,
सरग सरीशुं मांडेवाद
वसें सेहर तलेटी तास,
चांपानेर नामे सुविलास
गढ गढ मंदर पोल प्रकाश,
सप्त भूमिमां उत्तम आवास."

पावागढ उपर अगाउ श्वेतांबरीय १० जिनमन्दिरो हता अेवो उल्लेख मळे छे पण आजे तेमांनुं अेके हयात नथी. गढ उपर पडेलां अवशेषो अेनी खातरी करावे छे. आ मन्दिरो पैकी अेक मन्त्रीश्वर तेजपाले 'सर्वतोभद्र' नामनुं कळामय मन्दिर बन्धावी प्रतिष्ठा करावी हती. अेम 'वस्तुपालचरित्र' उल्लेखे छे. मांडवगढवासी वेल्लाके जे तीर्थोनी यात्रा करी तेमां पावागढना सम्भवनाथ भगवानने वांद्यानो (नमस्कार कर्यानो) उल्लेख मळे छे. शेठ मेघाअे आमां ८ देवकुलिकाओ बनावी हती.

श्रीविजयसेनसूरि सं. १६३२मां अहीं आव्या त्यारे जशवंत शेठे मोटो प्रतिष्ठा महोत्सव कर्यो हतो.

सं. १७६४मां पं. श्रीशीलविजयजीओ अहींना नेमिजिणंदनो उल्लेख कर्यो छे.

१९मी सदीना श्रीदीपविजयजीओ रचेला 'जीरावली पार्श्वनाथ स्तवन'मां अेक मन्दिरनुं वर्णन आ प्रकारे करेलुं छे –

"पावा उपर संघे कीधो,
देवल जग मनोहारी रे,
बावन जिनालय फरती देहरी,
जगजनने हितकारी रे,
ज्ञानरसीला रे अभिनंदन देव दयाल गान,
प्रभु जीरावली जगनाथ यान,
संवत इग्यारसेंहे बारा वरसे,
देव प्रतिष्ठा थावे रे,
अभिनंदन जीरावलि पारस,
अंजनशलाक सोहावे रे."

[१२मी सदीमां अभिनंदन स्वामी अने जीरावला पार्श्वनाथनी मुख्य प्रतिमाओ हती. जेनी प्रतिष्ठा आचार्य गुणसागरसूरिअे करावी हती. (पावागढथी वडोदरामां प्रकट थयेला जीरावला पार्श्वनाथ पुस्तकने आधारे) आ उल्लेख उपरथी अहीं श्वेतांबरीय मन्दिरो ओगणीसमा सैका सुधी हयात हता.]

सने १८९५मां अहीं आवेला विदेशी विद्वान डो. जे.बेर्जेसे नोंध करी छे के - "पावागढना शिखर पर रहेला कालिका माताना मन्दिर नीचेना भागमां अति प्राचीन जैन मन्दिरोनो जथ्थो छे के जेनो पुनरुद्धार, थोडा सुधारा-वधारा साथे हालमां ते मन्दिरोनो कब्जो जे जैनो करी रह्या छे, तेमना तरफथी थोडा वखत पहेलां ज करावामां आवेल छे." 'At the top the shrine of Kalika Mata'.

अहींनी अेक जुम्मा मस्जिदनो परिचय करावता अेक विद्वान कहे छे - "आ मस्जिदनी बारीओ अने घूम्मटोमां जे कोतरकाम अने शिल्पकळा

दर्शावी छे ते अजायबी पमाडे अेवी छे. आबुना पहाड पर आवेलां देलवाडानां जैन मन्दिरोमां जे प्रकारनी अष्टपांदडी वाळा कमळनी रचना कोतरवामां आवी छे, तेवा ज प्रकारनी आकृतिओ अहीं पण जोवामां आवे छे.'' संभवतः 'सर्वतोभद्र' नामनुं जैन मन्दिर आ होय अेम जणाय छे.

उपसंहार :

हज्जारो वर्ष पहेलां आ स्थळे महाधरतीकंप आवेलो, अेमांथी फाटेला ज्वाळामुखीमांथी आ पावागढना काळा पथ्थरोवाळो डुंगर अस्तित्वमां आव्यो. अेक लोकवायका अेवी पण छे के आ पर्वत जेटलो बहार देखाय छे तेनां करतां धरतीनी अंदर तरफ वधारे छे. अेटले के तेना पा जेटलो भाग दृष्टिगोचर थाय छे. तेथी ज ते पावागढ तरीके ओळखायो. आ डुंगर पुरातन काळथी खूब ज अैतिहासिक अने धार्मिक महत्त्व धरावे छे.

पावागढनी आ अैतिहासिक माहिती परथी लागे छे के शत्रुंजय, सम्मेतशिखर अने गिरनारनी जेम ज आ तीर्थ पण अत्यंत पूजनीय हतुं. पावागिरिना टोच सुधी निर्माण पामेला जिनचैत्यो आजे नामशेष छे. इतिहासने वागोळतां अेम लागे छे के जैन संस्कृति, जैन धर्म अने जैन मन्दिरोनो जोटो जगमां जडे तेम नथी.

आजनो युग जेम वैज्ञानिक छे तेम अैतिहासिक युग पण छे. आजे जेम दरेक वस्तुनुं परीक्षण वैज्ञानिक दृष्टिअे करवामां आवे छे तेज रीते आजनो युग अैतिहासिक दृष्टिप्रधान होई प्राचीन धर्मो, संस्कृति, संस्कृतिनां विविध साधनो जेवां के - आचार, विचार, व्यवहार, तत्त्वज्ञान, साहित्य, शिल्प, कळा आदिनुं पण अैतिहासिक दृष्टिअे अन्वेषण मांगे छे. अने अेनां कारणोने पण जाणवा इच्छे छे. आथी आजनो बुद्धिमान वर्ग पण प्रजानी जिज्ञासाने तृप्त करवा माटे ते दिशामां प्रयत्न करी रह्यो छे.

आ ज दृष्टिने लक्षमां राखीने मारा द्वारा लिप्यन्तर थयेल आ प्रत मारफते जे पावागढनी अैतिहासिक माहिती प्राप्त थई छे ते उपयोगी नीवडे ते आशा.

वस्तुतः तीर्थोना जीर्णोद्धार जेटलुं ज तीर्थोनो इतिहास प्रगट करवानुं कार्य महत्त्वनुं छे. अन्ते, जे तीर्थोअे लोकजीवनना संस्कारने सुवासित करवामां

महत्त्वनो भाग भजव्यो छे अेवी जैन संस्कृतिना अंगभूत आ तीर्थ संस्थानुं अैतिहासिक हार्द रजू करवामां मारो आ अल्प प्रयत्न कंई पण फाळो नोंधावी शकशे तो मारो श्रम सफळ थयो मानीश.

*

पावागिरि चैत्यप्रवाडि

सिरि सरसति सामिणि माय पाय, पणमेवीअ सेवीअ सुगुरु राय
पावागिरि चेत्रप्रवाडि हेव, संखेवि करी अणुसरिसु देव ॥१॥
पहिलउं धुरि **चंपकनेर** नामि, वर नयरि नमीजई **नेमि** सामि
अनइ सामीअ **संति** जिर्णिद पाय, पणमेवि करेवी सफल काय ॥२॥
ओ दीसइ गिरूउ गिरिह राय, जिहां राज करइ **अरिसिंघ** राय
पेखी तसु परबत पवर पाज, हवइं चडीइं रमलि करंत आज ॥३॥
ईणि गिरि विण माहव मास काल, सवि तरुअर गरुअ रहइं रसाल
हवइं आगलि आवी प्रथम पोलि, जिहां रायभवणनी अछई ओलि ॥४॥
मणहर मढ मन्दिर माली गिरिसुंदर, वंदर(?) वालि निहालीईअे
दीसंति सुरंगी नयणि कुरंगी, रंगि रमंती मालीइ ॥५॥
आगलि वलीअ विसमविसबल्ली, तिहां दीसई नानाविह वल्ली
फुल्लीअ फल्लीअ अपार तु जय जय, सुघृत सुभृत प्रापीअ वापीवर
सोहइं सरस सरोवर पीवर, पीवर भरिअ भंडार तु जय जय ॥६॥
धण कण कंचण रयण तमोहर, सोहइं बहु कोठार मनोहर
मोह रचइं जन चींति तु जय जय, अनुक्रमि आवी बीजी पोलि
बिहु पासे ऊंडी अति झोलि, ओलिइं देउल दीसंति तु जय जय ॥७॥
जाणे किरि कलियुग ऊवेखी, रही विहार शिखर सुविशेषी
पेखीजइ धजधार तु जय जय, गयणंगण संगत अति निरमल
दंड कलश झलहलइ झलामल, आमलसारउ सार तु जय जय ॥८॥
जव जिणभवण दुवारि पहूतउ, धरम मनोरथि रथि संजूतु
हुंतु हरिख अपार तु जय जय, त्रिभुवनपति जिन मूरति सारी
पेखीअ पूज करिसु अनिवारी, वारीअ वार विकार तु जय जय ॥९॥

भाषा

सेनाउरि-संभव सामिअ **संभव**, भव संभव भावठि हरइ अे
निअ नयणे निरखीअ हीअडउं हरखीअ, सखीअ पूजा करइं अे ॥१०॥
मानिनि मनरंगिइं मिलंति जिणभवण मझारीअ
जोईअ जिणवर तणउं रूप जंपइं सुविचारीअ
आज अमिअमय मेह एह अम्ह उवरि वरीसइ
आज सुधारस सरस धार अम्ह नयणि पईसइ
इण परि हरिख हीइ धरीअ करीअ नयण सुकयत्थ
हवइं प्रभु पय पूजा रचइं अे निरमालडीअे, मुणिअ धरम परमत्थ ॥११॥
ओरसि घसि घन घनसार केसर कसतूरीअ
कनक कचोली करि धरति चंदन संपूरीअ
सिवसुखदायक पाय मूलनायक चरचंतीअ
श्रीशंभव जिन अंगि रंगि अंगीअ रचंतीअ
हार हीई मृगनाभिनु सोहामणउ सुहाई
सकल सामि नितु समरतां निरमालडीअे, दूरि दुरित सवि जाइं ॥१२॥
वउलसिरी मुचकुंद कुंद मकरंद रसाल
करणीके कुसुम सार पारधि सुविशाल
चंपकनइ जासूल फूल वालउ वासंतीअ
पूरइं परिमल तणइं पूरि दह दिसी वासंतीअ
विविध कुसुमि पूजा करीअ पूरी मनची आस
जिमणइं पासइं पास जिण निरमालडीअे, पूजिसु महिमनिवास ॥१३॥

भाषा

अरचीअ अलवेसर पणय सुरेसर केसर कुसुम कपूरिवर
सामिअ सिवगामिअ हुं सिर नामीअ पामीअ परमाणंदभर ॥१४॥
हवइं जिन जगति जुहारीइ तु भमरुली, बे कर अंजलि जोडि
परमेसर पय पूजतां तु भमरुली, जांइं करमनी कोडि ॥१५॥
सहजपाल कराविउ तु भमरुली, दक्षिण भद्रविहार
आदीसर तिहां वंदीइ तु भमरुली, रयण मूरति अतिसार ॥१६॥
उत्तर दिसि जे **भद्र** अछई तु भमरुली, **गोइंद** कराविअ रंगि
तिहां रयणमय **वीर** जिण तु भमरुली, पूज करिसु प्रभु अंगि ॥१७॥

खीमसीह-कारिअ भवण, तिहां नमीइ नमिनाह
आगलि **अंबिक-देहरी** तु भमरुली, जोई लीजइ लाह ॥१८॥
इअ थुणीअ सुसावयदुहवण पावय, **पावय गिरिवर** सइं धणीअ
मझ मन अति चंचल जाण उं अविचल, **अंचलवर वसही** भणीअ ॥१९॥
हवइं **अंचलवसही** भणीअे महालंतडे, पुहचीइ परबतं पंथि
वीर जिणिंद जुहारतां अे महालंतडे, छोडीइ करमनी ग्रंथि ॥२०॥
आगलि **क्षपकवसहीइ** अे महालंतडे, जई जोई जिणरासि
सीतल **सीत-तलावली** अे महालंतडे, पेखीजइ तसु पासि ॥२१॥
जव आविउ गिरि-मोलीइ अे महालंतडे, दीठउ **शंभुविहार**
अे गिरिवर विस्तर घणउ अे महालंतडे, हउ किम पामउ पार ॥२२॥
तिहां हूतउ पाछउ वलिउ अे महालंतडे, भवण मझारि पहूत
ओलि मोलि जिनवर तणां अे महालंतडे, वंदीअ बिंब बहूत ॥२३॥
संभलि शंभव सामीआ अे निरेसूआ, राव करुं जिम बाल
तुंह जि इणि जगि जागतु अे निरेसूआ, दीसइ देव दयाल ॥२४॥
मूरति मूं अति रति करइ अे, सोम कला किरि सार
नयनि अमीरस वरसली अे निरेसूआ, सेवइं सविचार ॥२५॥
हुं भागउ भवफेरडी अे निरेसूआ, तुं शरणागत धीर
सार करउ हिव माहरीअे निरेसूआ, आपिन भवतणउं तीर ॥२६॥
भगति भणी मइं संथविउ अे निरेसूआ, पाय तुझ--- नितु नमइं अे
लक्ष्मीसागरसूरि भगति भणी मइ संथविउ अे निरेसूआ, मनह मनोरथ पूरि ॥२७॥
इअ नमिअ नरेसर भुवणदिणेसर, तविअ भविअ सिवसुखकर
पावागिरिमंडण दुरिअविहंडण, **जिनमाणिक्क** मुणिंदवर ॥२८॥

॥ इतिश्री पावागिरि चेत्रप्रवाडिः समाप्ता ॥

॥ महोपाध्याय श्रीश्रीश्रीजिनमाणिक्यगणि-शिष्य अनंतहंसगणिकृता ॥

॥ अनंतकीर्तिगणिना लिखिता श्रे०गोरा पठनार्थं ॥श्री॥

श्रीस्तंभतीर्थनगरे ॥छा॥ ॥श्री॥ ॥छा॥

(महावीर जैन विद्यालय द्वारा सोनगढमां योजित २३मा जैन साहित्य समारोहमां प्रस्तुत करेल शोधपत्र)

C/o. A-2, वात्सल्य फ्लेट, ६३, वसंतकुंज, पालडी, अमदावाद-७

तत्त्वबोधप्रवेशिका - १

प्रामाण्यवाद

— मुनि त्रैलोक्यमण्डनविजय

[श्रीसिद्धसेन दिवाकर विरचित सन्मतितर्कप्रकरण तथा तेना पर न्यायपञ्चानन श्रीअभयदेवसूरिजी (लगभग विक्रमनो दसमो सैको) रचित तत्त्वबोधविधायिनी वृत्तिना अध्ययन दरमियान ख्याल आव्यो के वृत्तिमां समाविष्ट अनेक चर्चाओ, तेमनी तर्क-प्रतितर्कनी प्रमाणमां अजाणी परिपाटी, दुरूह विकल्पजाळ, पाण्डित्यपूर्ण शैली व.ने लीधे विद्यार्थीओ माटे दुर्गम बने तेवी छे. तेमां पण खण्डन-मण्डननी सुविस्तृत प्रक्रिया आ मुश्केलीमां वधारो करी शके तेम छे. तेथी आ चर्चाओमांथी आ बधुं गाळी नांखीने, चर्चानुं मूळभूत हार्द जो सरळ शैलीमां सङ्क्षिप्त रीते रजू करवामां आवे तेमज साथे थोडाक तुलनात्मक सन्दर्भो पण पूरा पाडवामां आवे तो अे रजूआत विद्यार्थीओ माटे उपयोगी अने रसप्रद बनी शके. आ भावनाथी प्रेराईने आवा प्रकारनां लखाणोनी अेक श्रेणी करवानो विचार आव्यो. आ विचार अनुसार आ वखते वृत्तिमां सौ प्रथम वर्णित प्रामाण्यवादनी चर्चा रजू करी छे.]

आपणने थता सघळाय अनुभवो मात्र यथार्थ के मात्र अयथार्थ नथी होता अने अे अनुभवगत यथार्थता-अयथार्थतानुं भान पण आपणने प्रायः थतुं होय छे, अे अेक अनुभवसिद्ध हकीकत छे अने सर्व दर्शनोने अे वात सम्मत पण छे.[१] प्रश्नो अे ऊठे छे के ज्ञानगत यथार्थता-अयथार्थता (प्रामाण्य-अप्रामाण्य) नक्की कोण करी आपे छे ? अेनो निश्चय कई रीते थतो होय छे ? ज्ञान स्वप्रकाशक छे अेम स्वीकारनाराओना मते,[२] ज्ञान ज्यारे पोते ज पोताने जणावे त्यारे, अेनी साथे, पोताना प्रामाण्य-अप्रामाण्यने पण जणावे

१. अेकमात्र मीमांसक प्रभाकरना मते अयथार्थ ज्ञान होतुं ज नथी, सर्व ज्ञानो प्रमाणात्मक ज होय छे. पण स्मृतिप्रमोष, भेदाग्रह के विवेकाख्यातिनी प्रक्रिया वर्णवीने भ्रमात्मक ज्ञाननी सङ्गति तो तेओ पण करे ज छे.

२. जैन, सौत्रान्तिक बौद्ध, योगाचार बौद्ध, प्रभाकर (मीमांसक), शङ्कराचार्य व.ना मते ज्ञान स्वप्रकाश होय छे. तेथी स्वसंवेदन द्वारा अेनुं ग्रहण थाय छे.

खरुं ? अने परप्रकाशवादीओना मते[१] ज्यारे ज्ञान अन्य ज्ञान द्वारा गृहीत थाय, त्यारे तेनी साथे ज, ते ज्ञानमां रहेलुं प्रामाण्य-अप्रामाण्य पण, ते अन्य ज्ञान द्वारा, जणाई ज जाय ? के पछी ते जाणवा माटे कोई अलग प्रक्रिया करवी पडे ? टूंकमां, ज्ञाननुं ज्ञान थाय त्यारे स्वाभाविकपणे अेना प्रामाण्य-अप्रामाण्यनुं पण ग्रहण थई ज जाय के अे ग्रहण पछीथी कोईक क्रियानी सापेक्षपणे थाय ? आ विचारणीय प्रश्न छे. अत्रे दार्शनिक परिभाषामां स्वाभाविक सहभावी ग्रहण 'स्वतः' अने सापेक्ष ग्रहण 'परतः' कहेवाय छे, तथा आ प्रामाण्य-अप्रामाण्यनुं ग्रहण 'स्वतः' के 'परतः' थाय अे चर्चा 'ज्ञप्तौ (ग्रहणमां) प्रामाण्यवाद' तरीके ओळखाय छे.

उपर आपणे प्रामाण्यवाद अंगे जे वात करी ते प्रमा(-यथार्थज्ञान)-गत प्रामाण्य अने अप्रमा(-अयथार्थ ज्ञान)गत अप्रामाण्य केवी रीते जणाय ते सन्दर्भे करी. पण अे सिवाय ज्ञानमां प्रामाण्य-अप्रामाण्य क्यांथी जन्मे छे अे मुद्दे पण दार्शनिक आचार्योनां विभिन्न मन्तव्यो छे. केटलाकना मते ज्ञानसामान्य-(-तमाम ज्ञानो)नी जनक जे कारणसामग्री छे, ते ज ते ते ज्ञानमां प्रामाण्य के अप्रामाण्यनी पण जनक छे. प्रामाण्य के अप्रामाण्य अे रीते स्वाभाविक उत्पत्ति धरावे छे, आपेक्षिक नहीं; केम के अेमने ज्ञानजनक सामग्री सिवाय अन्य कशायनी पोतानी उत्पत्तिमां गरज नथी. आ पक्ष 'स्वतः' गणाय छे. आनाथी सामा छेडे परतः प्रामाण्य के अप्रामाण्यनी उत्पत्ति स्वीकारनारा आचार्यो ज्ञानजनक सामग्रीने अविशिष्ट ज्ञाननी जनक गणे छे. अेमना मते ते सामान्य ज्ञानमां प्रामाण्य के अप्रामाण्य स्वरूप विशिष्टता तो गुण के दोषथी सापेक्षपणे जन्मे छे, स्वाभाविक रीते नहीं. प्रामाण्य-अप्रामाण्यनी उत्पत्ति विशेनी आ चर्चा 'उत्पत्तौ प्रामाण्यवाद' तरीके ओळखाय छे.

सामान्यतः प्रामाण्यवादने सम्बन्धित आ बन्ने चर्चाओ अेकबीजा पर अवलम्बित होवाने कारणे, उत्पत्तिमां 'स्वतः' पक्षना समर्थको ज्ञप्तिमां पण 'स्वतः' पक्ष ज स्वीकारे छे, अने परतः पक्षना समर्थको बन्नेमां 'परतः' ज

१. ज्ञान पोताना विषयने ज जाणी शके छे, पोताने नहि. तेने जाणवा माटे तो अन्य ज्ञान जोइअे अेम माननारा नैयायिक, मुरारि मिश्र (मीमांसक), कुमारिल भट्ट (मीमांसक) व. परप्रकाशवादी गणाय छे.

माने छे. जो के आमां अपवाद छे खरा, पण बहु जूज.[१]

मूळभूत रीते आ चर्चा ईश्वरनी सिद्धिना मुद्दा पर निर्भर हती, अने तेमां पण शब्दप्रमाण पूरती ज सीमित हती. नैयायिको ईश्वरनी सिद्धि माटे ज उत्पत्ति अने ज्ञप्ति - बन्नेमां परतः-प्रामाण्य स्वीकारता हता.[२] तेओ अेम कहेता हता के वक्तृगत यथार्थ-ज्ञानात्मक गुणने लीधे ज, तेना द्वारा प्रयोजाता वाक्यथी जन्य बोधमां प्रामाण्य आवे छे, स्वाभाविक रीते नहि. मतलब के श्रोताने थतो वाक्यजन्य बोध जो प्रमात्मक होय, तो ए बोधमां प्रामाण्यना जनक तरीके वाक्यनी प्रयोजक व्यक्तिमां यथार्थज्ञाननो स्वीकार करवो ज जोईअे; अन्यथा व्यक्तिमां रहेला अयथार्थज्ञानात्मक दोषने लीधे, तेना द्वारा प्रयुक्त वाक्यथी जन्य बोध भ्रमात्मक बनी शके छे. आम वाक्य पोते प्रमा-अप्रमा उभयात्मक बोधनुं कारण होवा छतां, अेक बोधमां प्रामाण्य के अप्रामाण्यमांथी अेक ज जन्मे छे, ते वक्तृगत गुण के दोषने लीधे. हवे जो वेदथी जन्य बोध प्रमात्मक होय, तो अे प्रामाण्यना जनक तरीके यथार्थज्ञानात्मक गुणनो स्वीकार करवो ज जोइअे. अने अे सर्वव्यापी यथार्थज्ञान ईश्वर सिवाय कोईमां सम्भवे नंहि, तेथी अे यथार्थज्ञानना आश्रय तरीके ईश्वर सिद्ध थाय छे.

अे ज रीते वाक्यजन्य बोधमां रहेला प्रामाण्यनुं ग्रहण पण 'आ वाक्य यथार्थज्ञान धरावता आप्तपुरुष द्वारा प्रयुक्त होवाने लीधे प्रमाणभूत छे' अेवी विचारणाने सापेक्षपणे थतुं होय छे. तेथी वेदजन्य बोधमां पण प्रामाण्यनो स्वीकार, यथार्थज्ञान धरावता आप्तपुरुष द्वारा प्रयुक्तत्वनो निश्चय करीने ज करी शकाय. अने अे रीते वेदना रचयिता यथार्थज्ञानी आप्तपुरुष तरीके पण ईश्वर सिद्ध थाय छे.

आम प्रारम्भमां तो नैयायिकोना मते ईश्वरसिद्धि माटे शब्दप्रमाणमां ज

१. जेम के जैनमते उत्पत्तिमां 'परतः' पक्षनो ज स्वीकार होवा छतां, ज्ञप्तिमां कथञ्चित् स्वतः पक्षनो पण आदर छे.

२. "न्याये चेश्वरसिद्ध्यर्थमेव प्रामाण्यस्य परतस्त्वादरः । तत्र प्रमायाः परतस्त्वेन गुणजन्यत्व-सिद्धौ, वेदप्रभवप्रमायामपि गुणजन्यत्वसिद्धिः । गुणश्च तत्र प्रयोगहेतुभूतयथार्थज्ञानवत्त्वमिति तदाश्रयतयेश्वरः सिद्ध्यति । एवं प्रमात्वग्रहस्य परतस्त्वे, वेदजप्रमायाः प्रामाण्यमप्या-प्तोक्तवाक्यजन्यत्वेन ग्राह्यमित्याप्तयेश्वरः सिद्ध्यति ।" - सन्मतितर्कवृत्ति-विवरण (-श्रीविजयनेमिसूरिजी, अप्रगट)

उत्पत्ति अने ज्ञप्ति - बन्ने रीते परतःप्रामाण्यनो आदर हतो. पण पाछळथी सैद्धान्तिक रीते सघळांये प्रमाणोमां तेओओ परतःप्रामाण्यनो पक्ष स्थिर कर्यो.

आनाथी विरुद्ध मीमांसको वेदने अपौरुषेय (-अकर्तृक) गणता हता. वळी तेमना मतमां ईश्वरनो पण स्वीकार न हतो. तेथी, तेओ शब्दप्रमाणमां उत्पत्ति के ज्ञप्ति - अेके रीते परतःप्रामाण्य स्वीकारी शके तेम न हता. अेटले तेओअे स्वतःप्रामाण्यनो ज आग्रह राख्यो. मतलब के तेओना मते 'वेद यथार्थज्ञानी आप्त पुरुषथी प्रणीत छे, माटे प्रमाण छे' आवी विचारणाथी वेदनुं प्रामाण्य गृहीत नथी थतुं, पण वेद प्रमाणभूत तरीके स्वयं प्रतिष्ठित छे. अने अे प्रामाण्य पण अेना कर्ताना यथार्थज्ञानने लीधे नथी आव्युं, केम के अे अपौरुषेय होवाथी अेनो कोई कर्ता ज नथी, पण वेद स्वयंसिद्ध प्रामाण्य धरावे छे. माटे वेदमां प्रामाण्यना जनक अने ग्राहक यथार्थज्ञान अने आप्तत्वना आश्रय तरीके ईश्वर सिद्ध थई शके नहि. आगळ जतां मीमांसको माटे स्वतःप्रामाण्य सघळाअे शाब्दबोधमां अने अेथीये आगळ वधीने सघळांये प्रमाणोमां सिद्ध करवुं जरूंरी बन्युं. कोईक जग्याअे परतः अने कोइक ठेकाणे स्वतः - अेम वैकल्पिक नियमन अस्याद्वादी मीमांसको माटे शक्य न हतुं. तेथी मीमांसक मते स्वतःप्रामाण्यनो सिद्धान्त स्थिर थयो.

जो के शरुआतमां तो आ चर्चा मीमांसक-नैयायिक वच्चे ज मर्यादित हती. पण क्रमशः अन्य दर्शनोने पण, आ चर्चाना प्रभाव हेठळ, पोतपोतानुं मन्तव्य दर्शाववानुं अने आ चर्चामां भाग लेवानुं जरूरी बन्युं. जेने परिणामे भारतीय तत्त्वज्ञाननी परम्परामां प्रामाण्यवादने लगतुं विपुल अने विस्तृत साहित्य सर्जायुं. जेमां उद्योतकरना न्यायवार्तिक व.ना सरल तर्कोथी मांडीने गदाधर भट्टाचार्यना प्रामाण्यवादनी जटिल तर्कजाल सुधीनो समावेश थाय छे. अने हजु पण अेने लगतुं नूतन साहित्य पण सर्जातुं ज जाय छे.

आ साहित्यना आधारे मुख्यत्वे पांच पक्षो समजाय छे.[१]

१. प्रमाणत्वा-ऽप्रमाणत्वे, स्वतः साङ्ख्याः समाश्रिताः ।
नैयायिकास्ते परतः, सौगताश्चरमं स्वतः ॥
प्रथमं परतः प्राहुः, प्रामाण्यं वेदवादिनः ।
प्रमाणत्वं स्वतः प्राहुः, परतश्चाऽप्रमाणताम् ॥ -सर्वदर्शनसङ्ग्रहः(माधवाचार्य)

१. स्वतः प्रामाण्य अने स्वतः अप्रामाण्यनो स्वीकार - साङ्ख्यदर्शन

२. स्वतः प्रामाण्य अने परतः अप्रामाण्यनो स्वीकार - वेदान्त अने मीमांसा दर्शन

३. परतः प्रामाण्य अने स्वतः अप्रामाण्यनो स्वीकार - प्राचीन बौद्ध मत

४. परतः प्रामाण्य अने परतः अप्रामाण्यनो स्वीकार - न्याय अने वैशेषिक दर्शन

५. अनियमित पक्ष - जैन अने नव्य बौद्ध मत

हवे आपणे आ पांचे पक्षो विशे क्रमशः सङ्क्षेपमां विचारीशुं :

१. प्रामाण्य अने अप्रामाण्य बन्ने स्वतः - आ पक्षनो स्वीकार साङ्ख्याचार्यो द्वारा थाय छे अेवा उल्लेखो माधवाचार्यना सर्वदर्शनसङ्ग्रह, कुमारिल भट्टना श्लोकवार्तिक व.मां मळे छे. परन्तु आ मत पाछळनुं हार्द, अे माटेनी दलीलो, अेनां प्रमाणो - आ बधांने सम्बन्धित साहित्य उपलब्ध नथी. तेथी ते विशे विमर्श करवो शक्य नथी.

अेक विचार आवे छे के साङ्ख्यमत सत्कार्यवादी छे. अर्थात् ते मते सर्व कार्य उपादान कारणमां पहेलेथी प्रच्छन्नपणे विद्यमान ज होय छे. सहकारीभूत निमित्त कारणो द्वारा मात्र तेमनो प्रकटभाव ज थाय छे. प्रामाण्य-अप्रामाण्य पण अे ज रीते कार्यात्मक धर्मो छे, तो तेमने पण तेमना उपादान कारणमां पहेलेथी विद्यमान ज गणवा जोइअे अने तेथी तेमनो स्वतः उत्पाद समजी शकाय.[१] जो के आ अेक कल्पनामात्र छे, वास्तविकता शुं होई शके ते साहित्यना अभावमां समजवुं मुश्केल छे.

अे ज रीते चार्वाक अने योग दर्शननुं आ बाबतमां मन्तव्य शुं छे ते पण नथी जाणवा मळतुं. जो के वैशेषिक दर्शननुं आ विषयमां स्वतन्त्र मन्तव्य अनुपलभ्य होवा छतां, न्यायं दर्शन साथे घणी बाबतोमां समानतन्त्र

१. आ विचारणानी आडकतरी रीते पोषक अेक वात सन्मति० वृत्ति पृ. ४ पं. ९ पर जोवा मळे छे. त्यां चोखवट करवामां आवी छे के "अमे मीमांसको स्वतःप्रामाण्यनो स्वीकार सत्कार्यवादनो आश्रय लईने नथी करता." आनो मतलब अे समजी शकाय के सत्कार्यवादथी पण स्वतःप्रामाण्य ज सिद्ध थतुं हशे.

होवाने लीधे, आमां पण परतःप्रामाण्यवादी तरीके तेने गणवामां आवे छे तेम, योग दर्शननुं पण समानतन्त्र अेवा साङ्ख्यदर्शन जेवुं ज मन्तव्य होय अेम मानवामां झाझी आपत्ति नथी लागती.

२. प्रामाण्य स्वतः अने अप्रामाण्य परतः - मीमांसा (पूर्व) अने वेदान्त (उत्तर मीमांसा) - उभय मते ज्ञानोत्पत्ति अने ज्ञानग्रहणनी प्रक्रिया विभिन्न होवा छतां, प्रामाण्य-अप्रामाण्यनी बाबतमां बन्नेनुं मन्तव्य सरखुं ज छे. उभय मते प्रामाण्यनी उत्पत्ति अने ज्ञप्ति बन्ने स्वतः, अने अप्रामाण्यनी उत्पत्ति अने ज्ञप्ति बन्ने परतः स्वीकृत छे.

उत्पत्तिमां स्वतस्त्वनो मतलब छे तमाम ज्ञानोनी जनक जे साधारण सामग्री छे, तेमांथी ज्ञाननी साथे ज उत्पन्न थवुं[१]; बीजा कोई विशिष्ट तत्त्वनी उत्पत्तिमां, अपेक्षा न राखवी. अर्थात् ज्ञानजनक सामग्री प्रामाण्यवाळा ज्ञानने ज जन्म आपे छे. माटे कोई पण ज्ञानमां प्रामाण्य स्वतः (-स्वाभाविकपणे) होय ज छे. हा, जो ज्ञानसामग्रीमां दोष पण भळे अेटले के दोषयुक्त ज्ञानसामग्री होय तो तेनाथी उत्पन्न थतुं ज्ञान अप्रमाण होय छे. माटे उत्पत्तिमां अप्रामाण्य ज्ञानजनक सामान्य सामग्री उपरान्त दोषोनी पण अपेक्षा राखतुं होवाथी परतः (-परापेक्ष) छे, अने प्रामाण्यने कोईनी अपेक्षा न होवाथी स्वतः (-स्वाभाविक, निरपेक्ष) छे.[२]

आ मतमां अेक समस्या अे सर्जाई शके छे के चक्षुगत निर्मळता, धातुनी समता, मननी स्वस्थता व. प्रमाणभूत ज्ञानना जनक गुणो तरीके लोक-शास्त्र उभयसम्मत छे. हवे जो आ गुणोने प्रामाण्यजनक तरीके न स्वीकारीअे, अेटले के प्रामाण्यने उत्पत्तिमां आ गुणोनी अपेक्षा छे अेम न मानीअे तो, अे गुणोना अनुभवसिद्ध कर्तृत्व-जनकत्वनो ज विरोध आवशे. तो आनी सङ्गति कई रीते करवी ?

आ समस्यानो उकेल स्वतःप्रामाण्यवादीओ अेम सूचवे छे के अमे अेम नथी कहेता के अे गुणोनुं कशुं कर्तव्य ज नथी; अे गुणो तरीके सम्मत

१. उत्पत्तौ प्रामाण्यस्य स्वतस्त्वं नाम कार्यकारणादेव कार्येण सहोत्पत्तिः - अथर्वभाष्य.

२. "उत्पत्तौ स्वतस्त्वं नाम ज्ञानकरणमात्रजन्यत्वम् ।
येन ज्ञानं जायते तेनैव तद्गतं प्रामाण्यमपि जायते इति ।" – प्रमाणपद्धतिः - परिच्छेद १

तत्त्वोनी प्रामाण्यजनकताने नकारवानो अमारो आशय ज नथी. अमे तो फक्त अेटलुं ज कहीअे छीअे के तमे जे तत्त्वोने 'गुण' अेवी सञ्ज्ञा आपो छो, ते तत्त्वो ते ते पदार्थनी स्वाभाविक अवस्था ज छे, अलग वस्तु नथी.[१] चक्षु माटे समलताने आगन्तुक धर्म गणी शकाय, अने तेथी ते आगन्तुक धर्मने 'दोष' गणीने, तेने लीधे सर्जाता अप्रामाण्यने 'परतः' पण कही शकाय. परन्तु निर्मळता तो चक्षुनो पोतीको गुणधर्म छे, पारकी वस्तु नथी के जेनी अपेक्षा राखवी 'परतः' बनी शके. टूंकमां गुणो ज्ञानजनक सामग्री अन्तर्गत ज आवे छे, माटे तेनाथी (-ज्ञानजनक सामग्रीथी) सर्जाता ज्ञानमां प्रामाण्य स्वाभाविकपणे जन्मे छे, ज्यारे दोषो आगन्तुक धर्म छे, माटे तेमनाथी सर्जातुं अप्रामाण्य पण अस्वाभाविक बने छे.

ज्ञप्तिमां प्रामाण्यना स्वतस्त्वनो अर्थ छे - पोताना आश्रय (-प्रमात्मक ज्ञान)ना ग्राहक ज्ञानथी ग्राह्य होवुं.[२] मतलब के प्रमात्मक ज्ञाननुं स्वसंवेदन (-प्रभाकर मते), अनुव्यवसाय (-मुरारि मिश्र मते), ज्ञाततालिङ्गक अनुमिति (-कुमारिल भट्ट मते) के साक्षिज्ञान (-वेदान्त मते) द्वारा ग्रहण थाय; अे साथे ज 'अे ज्ञान प्रमाण छे, अप्रमाण नहि' अे रीते तन्निष्ठ प्रामाण्यनुं पण ग्रहण थई ज जाय छे.[३] आ तमाम ज्ञानो माटे समान बाबत छे. तेथी तमाम ज्ञानोनुं भान थाय ते साथे ज ते साचां छे तेवो बोध पण जन्मे ज छे. अर्थात् ज्ञान होय प्रमात्मक के भ्रमात्मक, प्रारम्भिक स्तरे तो स्वतःप्रामाण्यना बळे ते निरपवादपणे साचुं ज जणाय छे. पण ज्ञान पोते जो अप्रमात्मक होय अने पछी पाछळथी अन्य प्रत्यक्ष द्वारा अथवा अे ज्ञानने अनुसरीने थती प्रवृत्तिनी विफळताथी जन्य अनुमिति द्वारा अथवा आप्तपुरुषनां वचनो द्वारा जो अेमां भ्रान्तिनो बोध थाय तो प्रामाण्यनो बोध निवृत्त थाय छे अने अप्रामाण्यनुं भान थाय छे. आम प्रामाण्यनो बोध स्वतः (-स्वाभाविकपणे) जन्मनारो छे, अेने

१. "न चेन्द्रियनैर्मल्यादि गुणत्वेन वक्तुं शक्यम्, नैर्मल्यं हि तत्स्वरूपमेव, न पुनरौपाधिको गुणः । तथाव्यपदेशस्तु दोषाभावनिबन्धनः । - सन्मतितर्कवृत्तिः, पृ. ३

२. "ज्ञप्तौ स्वतस्त्वं नाम ज्ञानग्राहकमात्रग्राह्यत्वम् । येन ज्ञानं गृह्यते तेनैव तद्गतं प्रामाण्यमपि गृह्यते इति ।" — प्रमाणपद्धतिः - परि० १

३. "यया कारणसामग्र्या ज्ञानं गृह्यते तयैव तद्गतं प्रामाण्यमपि गृह्यते इति स्पष्टार्थः ।" — न्यायकोशः, पृ. ५५९

अन्य कोईनी अपेक्षा नथी.[१] ज्यारे अप्रामाण्यनो बोध परतः (-अन्य ज्ञानथी सापेक्ष पणे) जन्मनारो छे.

स्वतःप्रामाण्यवादीओनो आ पक्ष स्वीकारवा पाछळनो मुख्य तर्क अे छे के ज्ञानमां ज्यां सुधी प्रामाण्यनो निश्चय न थाय, त्यां सुधी अे ज्ञानने अनुसरीने पुरुषनी ते ज्ञानना विषयभूत पदार्थ विशे प्रवृत्ति थती नथी ज.[२] दा.त. "मने 'आ घट छे' अेवुं ज्ञान थयुं छे अने सामे देखातो पदार्थ घडो ज छे" आवो निश्चय न जन्मे त्यां सुधी पुरुष घडो लेवा नथी ज जवानो, अने आ निश्चय स्वतः प्रामाण्यज्ञप्ति स्वीकारो तो ज सम्भवे. जो ज्ञानने अनुसरीने क्रिया थाय पछी ज ज्ञानना प्रामाण्यनो निश्चय थई शके अेवो आग्रह राखीअे तो तो अे निश्चय वगर पुरुषनी प्रवृत्ति थशे ज कई रीते ? माटे कोईपण ज्ञानमां पहेलां प्रामाण्यनो निश्चय थाय छे, पछी ते ज्ञान पुरुषने पदार्थनुं प्रकाशक बनवा द्वारा प्रवर्तक (-प्रवृत्तिनुं जनक) बने छे. अने अे प्रवृत्ति थया पछी जो अे प्रवृत्ति संवादी बने अेटले ज्ञान अने क्रियामां कोई विरोध न आवे तो पूर्वगृहीत प्रामाण्यनी पुष्टि थाय छे अने प्रवृत्ति विसंवादी बने मतलब के ज्ञान करतां पदार्थ अन्यस्वरूपनो जणाय तो अप्रामाण्यनो निश्चय थाय छे.

आ मतमां अेक मुख्य समस्या अे सर्जाय छे के सघळांय ज्ञानो प्रारम्भमां प्रमाण तरीके ज जणाय छे अेम स्वीकारीअे तो कोई दिवस कोई ज्ञान अंगे 'आ ज्ञान साचुं हशे के नहि' अेवो संशय थई शके नहि. अने आवो संशय तो आपणने बधाने थतो ज होय छे. तो आनो समन्वय कई रीते थई शके ? स्वतःप्रामाण्यवादीओ आ समस्याना समाधान माटे स्वतःप्रामाण्यनी ज्ञप्तिना लक्षणमां परिष्कार करीने 'दोषाभावे सति' उमेरे छे.[३] अेटले के पोताना

---

१. "तस्मात् तत् प्रमाणम्, अनपेक्षत्वात् । न ह्येवं सति प्रत्ययान्तरमपेक्षितव्यम्, पुरुषान्तरं वाऽपि । स्वयंप्रत्ययो ह्यसौ ।" - शाबरभाष्य १.१५

२. "यथा दूरात् प्रत्यक्षेणेन्द्रियेण जलादिज्ञाने जाते तत्र स्वत एव यथार्थज्ञानत्वरूपप्रामाण्यमवधार्य जलार्थी प्रवर्तते । ज्ञानग्रहे तद्गतप्रामाण्यस्याऽपि ग्रहात् ।" - तर्ककौमुदी

३. "स्वतोग्राह्यत्वं च दोषाभावे सति यावत्स्वाश्रयग्राहकसामग्रीग्राह्यत्वम् । ... न चैवं प्रामाण्यसंशयानुपपत्तिः । तत्र संशयानुरोधेन दोषस्याऽपि सत्त्वेन दोषाभावघटितस्वाश्रयग्राहकाभावेन तत्र प्रामाण्यस्यैवाऽग्रहात् ।" - वेदान्तपरिभाषा-अनुपलब्धिपरिच्छेदः ।

आश्रयना ग्राहक ज्ञानथी ग्राह्य थवुं अे स्वतःज्ञप्ति खरी, पण अे क्यारे ? 'दोष न होय तो'. हवे संशय तो दोष होय तो ज थाय. तो, प्रामाण्य अंगे संशय थाय अेनो मतलब अे ज छे के त्यां दोषोनुं अस्तित्व छे ज. तो त्यां स्वतःज्ञप्ति माटेनी शरत पूरी थती ज नथी. माटे उपर कहेली आपत्ति आववानो प्रश्न ज ऊभो थतो नथी.

हवे स्वतःप्रामाण्यवादीओना मते प्रामाण्यग्रहणनी प्रक्रिया कई रीते घटे छे ते जोईअे. तेमां प्रभाकर गुरु, मुरारि मिश्र अने कुमारिल भट्ट - अे त्रणे मीमांसकोनी प्रक्रिया प्रस्थानभेदे जुदी जुदी छे. वळी वेदान्तदर्शननी प्रक्रिया अेनाथी तद्दन जुदी ज छे. क्रमशः जोईअे तो –

प्रभाकर गुरु - नैयायिक मते जेम ईश्वरज्ञान स्वप्रकाशक होय छे, तेम आ मते सर्व ज्ञान स्वप्रकाशक ज होय छे. माटे सर्व ज्ञान स्वसंवेदनथी गृहीत थाय छे. सघळांये प्रत्यक्षमां मिति (-ज्ञाननुं स्वस्वरूप), मेय (-विषयभूत बाह्य पदार्थ) अने मातृ (-प्रमाता व्यक्ति) - अे त्रणेनुं प्रत्यक्ष थाय छे. माटे ते त्रिपुटीप्रत्यक्षवादी तरीके ओळखाय छे.[१] मतलब के बधां प्रत्यक्षो व्यवसाय अने अनुव्यवसाय उभयात्मक होय छे. दा.त. 'घटत्वेन घटमहं जानामि' (-घटत्वधर्मथी युक्त घडाने हुं जाणुं छुं). आ ज्ञानमां जे स्वप्रकाशनुं सामर्थ्य छे तेना बळे ते स्वस्वरूपनी जेम स्वनिष्ठ प्रामाण्यनो पण बोध करी शके छे.[२] तेथी ज्ञाननुं स्वसंवेदन थाय अेनी साथे तेना प्रामाण्यनुं पण ग्रहण थई ज जाय छे, माटे स्वतःप्रामाण्य छे.

मुरारि मिश्र – आ मते 'आ घट छे' इत्यादि आकारवाळुं ज्ञान थाय अे पछी अे ज्ञाननुं ग्राहक 'घटत्वधर्मथी युक्त घडाने हुं जाणुं छुं' अेवा आकारनुं मानस प्रत्यक्ष (-अनुव्यवसाय) जन्मे छे. आ मानस प्रत्यक्ष द्वारा जेम ज्ञान गृहीत थाय छे, तेम ते ज्ञाननिष्ठ प्रामाण्य पण गृहीत थाय ज छे, माटे प्रामाण्यनुं ग्रहण पण स्वतः ज छे.[३]

---

१. "सर्वस्य व्यवसायस्याऽनुव्यवसायात्मकत्वे च ज्ञानस्य मितिमातृमेयविषयकत्वात् त्रिपुटीप्रत्यक्षतेति प्रवादः ।" - तत्त्वप्रकाशिका - खण्ड ४

२. "तथा च स्वप्रकाशमहिम्ना स्वमिव स्वप्रामाण्यमपि सिद्ध्यति इत्याहुः ।" - न्यायमञ्जरी ४

३. "मिश्रमते च - 'अयं घटः' इत्याकारकज्ञानानन्तरं 'घटत्वेन घटमहं जानामि' इति ज्ञानविषयकलौकिकमानसमुत्पद्यते । तेन प्रामाण्यस्य ग्रहणम् ।" - सिद्धान्तचन्द्रोदयः

कुमारिल भट्ट - ज्ञान अतीन्द्रिय होवाथी स्वसंवेदन के मानस प्रत्यक्ष द्वारा अेनुं ग्रहण थवुं शक्य नथी. पण ज्ञानथी जन्य ज्ञाततानें लीधे तेना अस्तित्वनुं अनुमान करी शकाय छे. आ अनुमान द्वारा मूळ ज्ञानना ग्रहणनी साथे ते ज्ञाननिष्ठ प्रामाण्यनुं पण ग्रहण थई जाय छे. जेमके घडानुं ज्ञान लइअे तो, सौ प्रथम 'आ घडो छे' अेवुं ज्ञान थाय छे. त्यारबाद 'घडो जणायो' अेवुं मानस प्रत्यक्ष थाय छे. आ मानस प्रत्यक्ष द्वारा घटमां 'ज्ञातता' नामनो धर्म उत्पन्न थयो छे अेम जणाय छे. आ ज्ञातता द्वारा मूळ घटज्ञान अनुमित थाय छे के 'घटनिष्ठ ज्ञातता तो ज सम्भवे के जो घटनुं ज्ञान थयुं होय'. आ रीते घटज्ञाननो बोध थाय अे साथे घटज्ञाननिष्ठ प्रामाण्य पण जणाई ज जाय छे.[१] तेथी अे मते पण स्वतःप्रामाण्य ज सम्भवे छे.

वेदान्ती मत - अन्तःकरणना परिणामरूप वृत्ति विषयाकार परिणाम धारण करे छे, त्यारे वृत्तिज्ञानात्मक प्रत्यक्षभान थाय छे. आ वृत्तिज्ञाननुं साक्षिज्ञान द्वारा ग्रहण थाय छे. अने आ ग्रहणनी साथे तन्निष्ठ प्रामाण्यनुं पण ग्रहण थाय छे.[२] आम आ मते स्वतःप्रामाण्य ज सम्मत छे.

आ रीते जोइअे तो ज्ञानप्रक्रिया विभिन्न होवा छतां ज्ञानगत प्रामाण्यनुं ज्ञानग्रहणनी साथे ज ग्रहण थाय अे बाबतमां बधा ज स्वतःप्रामाण्यवादीओ एकमत छे. अने अे ज रीते अप्रामाण्य परतः- अन्यज्ञानथी सापेक्षपणे थाय अे पण तेओ समानपणे ज स्वीकारे छे.

३. अप्रामाण्य स्वतः अने प्रामाण्य परतः - उपरना मतथी ठीक ऊलटी वात बौद्धोना आ प्राचीन मतनी छे. आ मत माधवाचार्यना सर्वदर्शनसङ्ग्रह[३], श्चेरबात्स्कीना Buddhist Logic (p. 66) अने आचार्य नरेन्द्र देवना बौद्धधर्म-दर्शन (पृ. ५९१) पर उल्लिखित छे. आ मते सर्व

१. "भट्टास्तु ज्ञानं तावत् स्वविषये ज्ञाताख्यं फलं जनयति इति निरूढम् । तयैवाऽनुमेयं ज्ञानम् । तथा च ज्ञाततया ज्ञानानुमितिर्जायमाना प्रामाण्यमपि विषयीकरोति इत्याहुः ।"
- तर्कप्रकाशः (शितिकण्ठी) - खण्ड ४

२. "स्वाश्रयः वृत्तिज्ञानम् । तद्ग्राहकं साक्षिज्ञानम् । तेन वृत्तिज्ञाने गृह्यमाणे तद्गतं प्रामाण्यमपि ज्ञायते ।" – वेदान्तपरिभाषा-अनुप० परि०

३. जुओ, पृ. १५४ टि. १

ज्ञानमां व्यभिचार सम्भवित छे. तेथी ज तो दरेक ज्ञानना ग्रहणनी साथे अेना अप्रामाण्यनुं ज स्वाभाविक ग्रहण थाय छे, अने आपणने 'ज्ञान साचुं हशे के खोटुं' अेवो संशय जन्मे छे. पछी अेना कारणगत गुणोनुं ज्ञान थाय अथवा अे ज्ञानथी प्रवर्तेली अर्थक्रिया संवादी बने के अे बोध आप्तवचनथी पण प्रमाणित थाय तो, अे स्वाभाविक जणायेला अप्रामाण्यनुं निरसन थईने प्रामाण्य गृहीत थाय छे. अन्यथा अप्रामाण्यनो बोध जेमनो तेम टकी रहे छे. माटे अप्रामाण्य स्वतः (-स्वाभाविक) जणाय छे, परन्तु प्रामाण्य परतः (-अन्य ज्ञाननी अपेक्षाअे) गृहीत थाय छे. प्रामाण्यनिश्चय नहि, पण प्रामाण्यसंशय प्रवृत्तिनो जनक बनी शके छे अे आ मतना स्वीकार पाछळनुं मुख्य आलम्बन जणाय छे.

पाछळथी बौद्धोअे (कदाच आर्हत मतना प्रभाव हेठळ) अनियमित पक्ष अङ्गीकार कर्यो होवानुं जणाय छे.

४. प्रामाण्य अने अप्रामाण्य बन्ने परतः - नैयायिको (अने समानतन्त्र होवाने लीधे वैशेषिकोना पण) मते प्रामाण्य अने अप्रामाण्य बन्ने उत्पत्ति तेमज ज्ञप्ति बन्नेनी अपेक्षाअे परतः छे.

उत्पत्तिमां परतः गणवानो मतलब अे छे के ज्ञानसामान्यनी जनक सामग्रीथी ज्ञानसामान्य ज जन्मे छे. पण अेमां यथार्थत्व-अयथार्थत्वनुं वैशिष्ट्य तो गुण-दोषने लीधे ज जन्मे छे.[१] दोषो अप्रामाण्यना जनक छे, ज्यारे गुणो प्रामाण्यना जनक छे.[२]

आशय अे छे के आपणा बधा ज अनुभवो यथार्थ नथी होता तेनुं कारण अे छे के अनुभव उत्पन्न करनार जे कारणो छे, ते ज कारणो अनुभवगत यथार्थताना उत्पादक नथी. जो अनुभवने उत्पन्न करनार कारणो ज तद्गत यथार्थताने उत्पन्न करतां होत तो बधा ज अनुभवो यथार्थ उत्पन्न थात. पण अेवुं नथी. तेथी समजी शकाय छे के अनुभवनी यथार्थता अनुभवनां कारणोथी जन्य नथी, परंतु कारणगत गुणोथी जन्य छे. अे ज रीते अनुभवनी

१. "उत्पत्तौ परतस्त्वं नाम ज्ञानकारणातिरिक्तकारणजन्यत्वम् ।"
— प्रमाणचन्द्रिका - परि० १

२. "दोषोऽप्रमाया जनकः प्रमायास्तु गुणो भवेत् ।" — सिद्धान्तमुक्तावली - ३१

अयथार्थता पण अनुभवनां कारणोथी जन्य नथी, किन्तु कारणगत दोषोथी जन्य छे. आम, प्रामाण्य अने अप्रामाण्य बन्ने उत्पत्तिमां परतः छे.

हवे प्रश्न रहे छे कारणगत गुणोना अस्तित्व विशेनो. केटलाक दोषाभावने ज गुणो गणवाना पक्षमां छे, तो केटलाक अेमने शब्दान्तरे कारणोनी स्वाभाविक अवस्था ज गणवाना मतना छे. आनी सामे नैयायिकोनुं कहेवुं छे के जेम चक्षुनी समलता, धातुनी विषमता, मननी अस्वस्थता व. दोषो छे, अेमनी स्वतन्त्र सत्ता छे; तो अेनी माफक चक्षुनी निर्मळता, धातुनी समता, मननी स्वस्थता व. गुणो पण छे ज, अेमनुं पण स्वतन्त्र अस्तित्व छे ज. अेमने दोषोना अभाव तरीके के कारणोनी स्वाभाविक अवस्था तरीके खपावी शकाय नहि. अन्यथा दोषो माटे पण गुणाभाव के कारणोनी स्वाभाविक अवस्था अेम कही शकाय; अने अेमनुं स्वतन्त्र अस्तित्व नकारी शकाय. टूंकमां, कारणोनी स्वाभाविक अवस्था ज्ञान-सामान्यनी जनक छे, तद्गत यथार्थता-अयथार्थतानी नहि. यथार्थता-अयथार्थता तो गुण-दोष सापेक्ष छे, माटे परतः छे.

प्रत्यक्षप्रमामां विशेषणवाळा विशेष्य साथेनो इन्द्रियसन्निकर्ष व., अनुमितिमां व्यापक स्थळे व्याप्तिप्रतिबद्ध व्याप्यनुं ज्ञान व., उपमितिमां यथार्थ सादृश्यनुं ज्ञान व., शाब्दबोधमां यथार्थ योग्यता अथवा तात्पर्यनुं ज्ञान व. गुणो छे.[१] अने आ बधानो अभाव के विपरीतपणुं अे दोषो छे.

हवे ज्ञप्तिमां प्रामाण्य-अप्रामाण्यना परतस्त्व विशे विचार करीअे. आनो अर्थ अे थाय छे के ज्ञानना ग्रहण साथे ज तद्गत प्रामाण्य-अप्रामाण्यनुं ग्रहण नथी थतुं, पण ते पछी अन्य ज्ञानथी सापेक्षपणे थाय छे.

आशय अे छे के अनुभव थया पछी आपणे अनुभवने आधारे प्रवृत्ति करीअे छीअे. ते प्रवृत्ति जो सफळ थाय छे तो आपणने भान थाय छे के आपणने थयेलो अनुभव यथार्थ हतो. अने जो प्रवृत्ति सफळ नथी थती तो आपणने भान थाय छे के आपणने थयेलो अनुभव अयथार्थ हतो. दा.त. आपणे दूरथी पाणी जोयुं अने पाणी लेवा त्यां गया. परन्तु त्यां पाणी तो हतुं नहि. माटे आपणी प्रवृत्ति विफल थई अने आपणने ख्याल आव्यो के अे प्रवृत्ति जेना आधारे थई हती ते अनुभव अयथार्थ हतो. परन्तु जो प्रवृत्ति

१. जुओ न्यायसिद्धान्तमञ्जरीप्रकाशः - ४

सफल थई होत तो अनुभवने आपणे यथार्थ समजत.[१] आम अनुभव उत्पन्न थतांनी साथे ज तद्गत यथार्थता के अयथार्थतानुं ज्ञान आपणने स्वतः (-स्वाभाविकपणे) थतुं नथी, पण सफल के विफल प्रवृत्ति परथी अनुमित थाय छे, माटे ते परतः (-परनी अपेक्षाथी ग्राह्य) छे.

जो के, उपरोक्त प्रवृत्ति पछीनी अनुमिति द्वारा यथार्थता-अयथार्थतानुं ज्ञान थवानी वात अनभ्यस्तदशाना (प्रारम्भिक १-२ वार थता) ज्ञान पूरती ज साची छे. अभ्यासदशामां तो पूर्वज्ञानना सादृश्यना बळे ज ज्ञानगत प्रामाण्य-अप्रामाण्यनी अनुमिति थई शके छे.[२] अे माटे अर्थक्रिया करवी ज पडे ते जरूरी नथी, अलबत्त, प्रामाण्य-अप्रामाण्यनुं ग्रहण थाय छे तो अनुमिति द्वारा ज[३], परतः ज.

प्रामाण्यनुं ग्रहण स्वतः न होई शके अे अंगे परतःप्रामाण्यवादीओनी मुख्य दलील अे छे के ज्ञानना ग्रहणनी साथे ज अेना प्रामाण्यनुं पण ज्ञान थई ज जतुं होय तो, कोई पण ज्ञान विशे 'आ साचुं हशे के खोटुं ?' अेवो संशय थई शके ज नहि. अने अनभ्यासदशामां थयेला ज्ञान अंगे आवो संशय थई शके छे ते अनुभवसिद्ध बाबत छे. तो आ वातनी सङ्गति केवी रीते करवी ? ज्ञानमात्र विशे प्रामाण्यनिश्चय स्वाभाविकपणे थई ज जतो होय तो तो अे अंगे संशय थवानो कोई अवकाश ज नथी रहेतो.[४] स्वतःप्रामाण्यवादीओ आनुं समाधान 'दोषाभावे सति' अेवो परिष्कार करीने आपे छे ते आपणे जोई गया छीअे.[५]

---

१. "प्रामाण्यं हि समर्थप्रवृत्तिजनकत्वादनुमेयम्" - न्यायवार्तिकतात्पर्यटीका १.१.१

२. "अभ्यासदशापन्नज्ञानेषु द्वितीयतृतीयजलादिज्ञानेषु तु प्रवृत्तेः पूर्वमप्यन्वयव्यतिरेकिणाऽपि पूर्वज्ञानदृष्टान्तेन तत्सजातीयत्वलिङ्गेन प्रामाण्यमवधार्यते ।" - तर्ककौमुदी

३. क्यांक अेभ्यासदशापन्न ज्ञान स्थळे द्वितीय अनुव्यवसायथी पण प्रामाण्यग्रहण स्वीकृत छे. जुओ तर्कप्रकाश - खण्ड ४

४. "प्रामाण्यस्य स्वतोग्रहेऽनभ्यासदशोत्पन्नज्ञाने तत्संशयो न स्यात् । ज्ञानग्रहे प्रामाण्यनिश्चयात् । अनिश्चये वा न स्वतः प्रामाण्यग्रहः ।"

- तत्त्वचिन्तामणि-मथुरानाथी-प्रमा०

५. जुओ पृ. १५८ परि० ३. वास्तवमां जोइअे तो आम करीने तेओ परोक्ष रीते तो जैनोना *कथञ्चित् स्वतः पक्षने ज समर्थन आपे छे.*

५. अनियमित - आ मतना समर्थक नव्य बौद्धदर्शन अने आर्हत मत छे. जो के आ बन्नेनो स्वीकार तद्दन सरखो नथी. क्रमशः -

प्राचीन बौद्धमतनुं निरूपण आपणे जोई गयां छीओ.[१] पाछळथी बौद्धोओ प्रामाण्य-अप्रामाण्य-ग्रहण अङ्गेना उपरोक्त चारे पक्षोनो त्याग करीने प्रामाण्य-अप्रामाण्य बन्नेनुं क्यांक स्वतः ग्रहण अने क्यांक परतः ग्रहण स्वीकार्युं.

बौद्धाचार्य शान्तरक्षितनी तत्त्वसङ्ग्रहपञ्जिका-श्लोक २८१०-११मां पूर्वोक्त ४ भेद दर्शावीने तेनुं निरसन करायुं छे. आ मतनुं विवरण करतां तत्त्व-सङ्ग्रहपञ्जिका - श्लोक ३१२२नी टीकामां आचार्य कमलशील जणावे छे के "बौद्धोने अनियम पक्ष इष्ट होवाथी आ चारमांथी अेक पण पक्ष स्वीकार्य नथी. वास्तवमां प्रामाण्य-अप्रामाण्य बन्ने क्यांक स्वतः अने क्यांक परतः गृहीत थाय छे."[२] आमां जो के क्यां स्वतः अने क्यां परतः तेनी स्पष्टता नथी. पण सन्मतितर्कवृत्तिमां बौद्धमत-सम्मत प्रामाण्यनी ज्ञप्तिमां परतस्त्वना निरूपणमां क्यां क्यां स्वतस्त्व पण सम्भवे ते सूचवायुं छे.[३] जो के बौद्धो द्वारा आ मतना स्वीकार पाछळ आर्हत मतनो प्रभाव जोई शकाय छे.

आर्हत दर्शन अनुसार प्रामाण्य अने अप्रामाण्य उत्पत्तिमां तो परतः (- कारणगत गुण अने दोषथी सापेक्षपणे उत्पन्न थनारां) ज होय छे, परन्तु ज्ञप्तिमां, अभ्यासदशामां स्वतः गृहीत थई शके छे, ज्यारे अनभ्यासदशामां अेमना ज्ञान माटे परनी अपेक्षा राखवी पडे छे.[४]

आ मत अनुसार प्रामाण्यनिश्चय ज प्रवृत्तिनो जनक बने अेवो एकान्त नथी. अनभ्यासदशामां प्रामाण्यसन्देहथी पण प्रवृत्ति थई ज शके छे,[५] अने

१. पृ. १६०

२. "न हि बौद्धैरेषां चतुर्णामेकतमोऽपि पक्षोऽभीष्टः, अनियमपक्षस्येष्टत्वात् । तथाहि - उभयमप्येतत् किञ्चित् स्वतः किञ्चित् परत इति ।"

३. जुओ पृ. १७३ परि० २

४. "तदुभयमुत्पत्तौ परत एव, ज्ञप्तौ तु स्वतः परतश्च ।" – प्रमाणनयतत्त्वालोक-१.२१. आनुं विवरण - "ज्ञानस्य प्रामाण्यमप्रामाण्यं च द्वितयमपि ज्ञानकारणगतगुण-दोषरूपं परमपेक्ष्योत्पद्यते । निश्चीयते त्वभ्यासदशायां स्वतोऽनभ्यासदशायां तु परतः ।"
– स्याद्वादरत्नाकरः

५. "न खलु सर्वत्र प्रवर्तकज्ञानस्य प्रामाण्यनिश्चये सति प्रवृत्तिरिति नः पक्षः । किन्तर्हि ? अनभ्यासदशायां प्रामाण्यसन्देहादपि प्रवृत्तिरिति ।" – स्याद्वादरत्नाकरः - १.२१

प्रवृत्तिनी सफलता-विफलताथी ज्ञाननी यथार्थता-अयथार्थता अनुमित थई शके छे.

आ मत अनुभवना नक्कर आधार पर स्वतः प्रामाण्यग्रहण के परतः प्रामाण्यग्रहणना अेकान्तने नकारे छे. अने अनेकान्तवादने पुरस्कृत करे छे. क्यांक आपणे जाते ज ज्ञाननी यथार्थता-अयथार्थताने जाणी लईअे छीअे अने क्यांक, संशयितपणामां, प्रवृत्तिना आधारे अेने जाणी शकीअे छीअे. आ आपणो रोजिंदो अनुभव छे. अेनी उपेक्षा करीने कोई अेक ज पक्षनो आग्रह राखीअे तो अे खण्डनीय ज बने. स्वतःप्रामाण्यवादना मतमां अनभ्यासदशाना ज्ञानगत प्रामाण्यना संशयनो प्रश्न जन्मे छे अने परतःप्रामाण्यवादना मतमां अभ्यासदशाना ज्ञानगत प्रामाण्यनी स्वतः अनुभूतिनी समस्या ऊठे छे. माटे बन्ने अस्वीकार्य बने छे. अेने बदले स्याद्वादना अवलम्बने कथञ्चित् पक्ष ज अनुभवसिद्ध अने युक्तिपुरस्सर स्वीकारनो विषय बनी शके.

स्वतःप्रामाण्यवादीओ उत्पत्तिमां प्रामाण्यने अपेक्षित गुणोने 'दोषाभाव' तरीके जुअे छे, अने अेथी परतः पक्षने नकारे छे. जैन दर्शन कहे छे के चक्षुनी निर्मलता व.ने 'गुण' तरीके जुओ के 'दोषाभाव' तरीके, अे आखरे तो 'पर' ज छे, अने तेथी ज तेमनी अपेक्षा राखीने उत्पन्न थता प्रामाण्यने 'परतः' ज गणाय, 'स्वतः' नहि.

अेक वात अे पण ध्यानपात्र छे के स्वतःप्रामाण्यवादी मीमांसक व. होय के परतःप्रामाण्यवादी नैयायिक व. होय, बन्ने अप्रामाण्यनी ज्ञप्तिमां तो 'परतः' पक्षनो ज आग्रह राखे छे. जैन दर्शन अहीं पण पूर्वोक्त युक्तिओना बळे अभ्यासदशामां अप्रामाण्यनी स्वतः ज्ञप्ति अने अनभ्यासदशामां परतः ज्ञप्ति स्वीकारे छे तेमज पूर्वोक्त अेकान्तवादनुं खण्डन करे छे.

*

आटली भूमिका बाद आपणे न्यायपञ्चानन श्रीअभयदेवसूरि रचित सन्मतितर्कनी 'तत्त्वबोधविधायिनी' वृत्ति अन्तर्गत प्रामाण्यवादनी चर्चा सङ्क्षेपमां जोइशुं. आ चर्चा जोती वखते बे वात ध्यानमां राखवानी छे :

१. आचार्ये अत्रे मीमांसकोने स्वतःप्रामाण्यना पक्षधर तरीके अने

बौद्धोने परतः प्रामाण्यना पक्षधर तरीके रजू कर्या छे; नैयायिकोने आ चर्चामां स्थान नथी आप्युं. तेथी खण्डन-मण्डन बौद्ध परिपाटी अने सिद्धान्तोने अनुलक्षीने छे.[१] वळी तेमां पण आचार्यने पोताने तो कथञ्चित् पक्ष ज सम्मत छे. तेथी तेनी पुष्टि थाय ते हेतुथी तेओओ अेकान्ते स्वतःप्रामाण्यवादी अने अेकान्ते परतःप्रामाण्यवादीओनी चर्चा योजीने परस्पर खण्डन-मण्डन करावीने बन्ने पक्षोने दोषित देखाड्या छे.[२] अलबत्त, वृत्तिमां तो प्रथम स्वतः पक्षनुं मण्डन अने त्यारबाद परतः पक्ष द्वारा तेनुं खण्डन ज देखाडायुं छे, पण गम्भीरताथी विचारीअे तो परतः पक्षना अन्तिम समर्थननो पुनः स्वतः पक्षनी दलीलो द्वारा खण्डन थवानो सम्भव छे. तेथी आ चक्रकनो अन्त जैन दर्शन सम्मत कथञ्चित् पक्ष द्वारा ज थई शके, अने तेथी ते ज विद्वज्जनो माटे उपादेय छे, अे सूचववानो आचार्यश्रीनो आशय जणाय छे.

२. जे ते दर्शनने सम्मत तमाम प्रमाणोमां स्वसम्मत स्वतः के परतः पक्ष लागु पडतो होय छे. परन्तु प्रामाण्यवादनी चर्चा तो प्रत्यक्षप्रमाणमां ज केन्द्रित थती होय छे. केमके प्रत्यक्षप्रमाण सर्व दर्शनोने सम्मत छे. वळी तेमां सूक्ष्मता अने विशदताथी आ चर्चा करी शकाय छे - समजी शकाय छे. अने अेमां थती चर्चाथी साबित थतो पक्ष पछीथी तमाम प्रमाणोमां लागु पाडी शकाय छे.[३] तेथी अत्रे पण प्रत्यक्षप्रमाणने ज केन्द्रमां राखीने चर्चा थई छे.

अेक वात अे पण स्पष्ट करवानी के मूळ ग्रन्थमां सौप्रथम स्वतः-प्रामाण्यवादी मीमांसको तरफथी क्रमशः प्रामाण्यनी उत्पत्ति, ज्ञप्ति अने कार्यमां[४]

१. "अन्तराऽन्तरा बौद्धोपादानं तन्मतावलम्बनेनैव परतःप्रामाण्यावस्थापनं प्रस्तुतमित्येतद् द्रढीकर्तुम् ।" – सन्मति०-वृत्तिविवरणम् (-श्रीविजयनेमिसूरिः)

२. "कथञ्चित्-स्वतःप्रामाण्यं व्यवस्थापयितुमेकान्तेन स्वतःप्रामाण्यवादिनं परतःप्रामाण्यवादिनं चाऽन्योन्यं सुन्दोपसुन्दन्यायेन वादसमितावावस्कन्दयितुमवतारयति।" - सन्मति०-वृत्तिविवरणम्

३. "यद्यपि प्रमामात्रस्यैव प्रामाण्यमुत्पत्तौ स्वतः परतो वेति विचार्यते । तत्र प्रत्यक्षप्रमाणमधिकृत्य गुणसाधन-तद्बाधनप्रकारो नाऽतिसामञ्जस्यमञ्चति । ....तथापि शिष्यबुद्धिसौकर्याय प्रत्यक्षादिप्रामाण्यविशेषमाश्रित्य तद्विचार आदृतः । विशेषे स्वतस्त्वपरतस्त्वान्यतरसिद्धौ, तन्न्यायेन सामान्येऽपि तदुपसंहारः कर्तुं शक्य इत्यभिप्रायः सूरेरिति बोध्यम् ।" - सन्मति०वृत्तिविवरणम्

४. कार्य पक्षमां स्वतस्त्व-परतस्त्वनी चर्चा भूमिकामां नथी करी. ते हवे आवशे.

स्वतः पक्षनुं मण्डन थयुं छे, अने त्यारबाद परतःप्रामाण्यवादी बौद्धो तरफथी क्रमशः अे त्रणे पक्षनुं खण्डन थयुं छे. परन्तु अत्रे विद्यार्थीओनी सगवड माटे प्रथम प्रामाण्यनी उत्पत्तिमां स्वतस्त्वनुं मण्डन-खण्डन, पछी ज्ञप्तिमां अने त्यारबाद कार्यमां - अे रीते क्रम राख्यो छे.

वृत्तिगत चर्चाने सङ्क्षेपमां जोइअे तो –

प्रामाण्यनुं उत्पत्तिमां स्वतस्त्व : (-मीमांसक)

प्रामाण्यने पोतानी उत्पत्तिमां ज्ञानसामान्यनां कारणो सिवाय गुणोनी अपेक्षा छे - अे वात बराबर नथी. केमके गुणोनुं अस्तित्व ज साबित करवुं शक्य नथी. प्रत्यक्षथी तो अे गुणोने जाणवा शक्य नथी. कारण के अे गुणोनुं आश्रयस्थान इन्द्रिय पोते अतीन्द्रिय वस्तु छे. अने अतीन्द्रिय पदार्थ के तेमां रहेला गुणो प्रत्यक्षनो विषय बनी शके नहि. अे ज रीते प्रत्यक्षथी जे वस्तु जणाई होय तेनुं ज अनुमान थई शके अेवो नियम होवाथी गुणो अनुमानथी *पण न जाणी शकाय.*

वळी, बौद्ध मते अनुमान त्रण प्रकारनां ज होइ शके : १. स्वभावहेतुजन्य, २. कार्यहेतुप्रभव, ३. अनुपलब्धिहेतुसम्भव. तेमां स्वभावहेतु तो प्रत्यक्षथी गृहीत अर्थमां व्यवहार प्रवर्तावे छे. जेम के आ शिंशपा छे, माटे वृक्ष छे. आम, प्रत्यक्षथी देखाता शिंशपामां 'वृक्ष' तरीकेनो व्यवहार स्वभावहेतु प्रवर्तावे छे. 'गुण' तरीके सम्मत पदार्थो तो प्रत्यक्षथी जणाता नथी, तो स्वभावहेतुथी जन्य अनुमान त्यां केवी रीते काम लागे ? अे ज रीते 'गुण'थी जन्य कोई कार्य पण सिद्ध नथी के जेना बळे कार्यहेतुजन्य अनुमान प्रवर्ते अने गुणोने कारण तरीके सिद्ध करी आपे. अनुपलब्धि हेतु तो आमे अभावसाधक छे. तेथी ते पण गुणोने सिद्ध करवा काम न लागे.[१] आ सिवाय कोई चोथा प्रकारनुं अनुमान तो तमे मानता नथी, तेथी अनुमानप्रमाणथी गुणो सिद्ध करवा असम्भव छे. अने बौद्ध मते प्रत्यक्ष अने अनुमान - बे ज प्रमाण स्वीकार्य होवाथी, अे बेथी असिद्ध-अगृहीत अेवा गुणो आपोआप 'असत्' बने छे.

१. वृत्तिमां आ त्रणे अनुमाननी चर्चा सहेज जुदा सन्दर्भे छे. पण विद्यार्थीओनी सरळता खातर अत्रे आ रीते वर्णवी छे.

यथार्थ उपलब्धिना जनक तरीके पण गुणोने सिद्ध न करी शकाय. केम के यथार्थत्व-अयथार्थत्वथी रहित उपलब्धिमात्रनुं स्वरूप निश्चित थाय, तो अे उपलब्धिनी जनक तरीके ज्ञानसामान्यनी जनक सामग्रीने कल्पीने, अेमां 'यथार्थत्व' नामनी विशिष्टताना जनक तरीके गुणोनी कल्पना करी शकाय. हवे, तमे यथार्थत्व-अयथार्थत्वथी रहित उपलब्धिमात्रनुं स्वरूप बतावी शकशो ? ना, केमके ज्ञानसामान्यनी जनक सामग्री यथार्थ उपलब्धिने ज जन्मावे छे, उपलब्धिसामान्यने नहि. तो कया वैशिष्ट्यना जनक तरीके तमे गुणोनी कल्पना करशो ?

अयथार्थत्व स्वरूप उपलब्धिगत जे विशेषता छे ते ज्ञानसामान्यनी जनक सामग्रीथी जन्य नथी, तेथी तेना जनक तरीके कारणसामग्रीमां 'दोष' ने पण लावेवा पडे छे. अने अे दोषथी जन्य अप्रामाण्यने परतः गणी शकाय छे. प्रामाण्यना जनक 'गुण' माटे आवुं न कही शकाय. कारण के तमे 'गुण' तरीके जे तत्त्वोने ओळखो छो, ते तत्त्वो ते ते कारणोनी स्वाभाविक अवस्था ज छे. दोषनुं न होवुं तेने 'गुण' गणीअे तेनो वांधो नहि, पण ते कोई अलग बाबत नथी, कारणोनी सहज अवस्था ज छे. तेथी दोषरहित कारणसामग्रीथी उत्पन्न ज्ञानमात्र प्रमाण ज होय छे, अने ते प्रामाण्य 'स्वतः' ज गणाय छे.

जो तमे अेवी दलील करो के "अमे 'गुणो'ने आगन्तुक धर्म गणीने, तेमना अभावने 'दोष' तरीके ओळखीशुं अने अे दोषोने कारणोनी स्वाभाविक अवस्था गणीशुं. तेथी स्वाभाविक अवस्थाथी जन्य अप्रामाण्य 'स्वतः' बनशे अने आगन्तुक धर्मथी जन्य प्रामाण्य 'परतः' बनशे. आम करवामां शुं वांधो ?" तो अमे अेम कहीअे छीअे के तमे लोकव्यवहार तो तपासो. लोकव्यवहारमां बगडेली वस्तुने 'स्वाभाविक अवस्था'मां गणाय छे के सारी वस्तुने ? तो आटली सादी वात तमे अहीं पण केम नथी समजता ?

बीजी वात, अर्थनो यथावस्थित बोध करवानी ज्ञानगत शक्ति ज 'प्रामाण्य' कहेवाय छे. अने शक्ति तो सकल पदार्थोमां स्वाभाविकपणे ज होय छे, अेने कंई कारणोनी गरज होती नथी. जुओ, माटीना रूप-गन्ध व. गुणधर्मो अेना द्वारा उत्पन्न थता घडामां पण आवे छे, पण घडामां जे पाणीना धारणनी शक्ति छे, ते कंई माटीमांथी नथी आवी. कारण के ते माटीमां हती ज क्यां ?

अे तो घडानी स्वाभाविक (-स्वतः) शक्ति छे. अे ज रीते ज्ञानमां प्रामाण्य अेटले के अर्थनो यथावस्थित बोध करवानी शक्ति ज्ञानजनक सामग्रीमांथी नथी आवती, अे तो स्वतः ज होय छे.

प्रामाण्यनुं उत्पत्तिमां परतस्त्व : (-बौद्ध)

प्रामाण्यनी उत्पत्ति जो वगर कारणे ज थती होय, तो अे कायम बधे ज थया ज करवी जोइअे. केम के "जे वस्तुने पोतानी उत्पत्तिमां बीजा कोई निमित्तनी अपेक्षा न होय, ते वस्तु सर्व देश-कालमां उत्पन्न थया ज करे" अेवो नियम छे. निमित्तनी अपेक्षा ज वस्तुनी उत्पत्तिने चोक्कस देश-काल-भावमां सीमित करे छे. माटे क्यांक, क्यारेक ज होनारा प्रामाण्यने पण पोतानी उत्पत्तिमां कोईक निमित्तनी अपेक्षा छे अेवुं स्वीकारवुं ज पडे. अने आ निमित्त अेटले कारणगत गुणो. अने तेमनी प्रामाण्य द्वारा रखाती अपेक्षा ते ज प्रामाण्यनुं परतस्त्व.

गुणो अतीन्द्रिय अेवी इन्द्रियने आश्रित होवाथी तेमनुं प्रत्यक्षदर्शन के प्रत्यक्षाधारित अनुमानथी ग्रहण शक्य नथी, अेटले तेमनुं अस्तित्व नथी - अे वात बराबर नथी. केम के अे रीते तो इन्द्रियाश्रित दोषोनुं पण अस्तित्व नकारी शकाय. अने तेथी अप्रामाण्य पण स्वतः उत्पन्न गणवानी आपत्ति आवे. माटे ज्ञानगत अप्रामाण्यने आधार बनावीने आपणे जेम दोष-विषयक अनुमिति करीअे छीअे, तेम ज्ञाननिष्ठ प्रामाण्यने आधार बनावीने गुण-विषयक अनुमिति पण करी ज शकाय. लोकव्यवहारमां पण खामी जेम 'दोष' गणाय छे, तेम खूबी पण 'गुण' गणाय ज छे. तो लोकव्यवहारनी दुहाई आपीने अेकने अलग धर्म गणवा अने अेकने स्वाभाविक अवस्था गणवी - आ क्यांनो न्याय ?

प्रामाण्य-अप्रामाण्य रूप वैशिष्ट्यथी रहित ज्ञानसामान्यना स्वरूपना असम्भवनी तमे वात करी, ते पण बराबर नथी. केमके अमे अेम नथी कहेता के पहेलां ज्ञान जन्मी जाय छे अने पछीथी अेमां गुण के दोषने लीधे प्रामाण्य-अप्रामाण्य जन्मे छे. परन्तु अमारो अभ्युपगम तो अेवो छे के गुणयुक्त ज्ञानजनक सामग्रीथी प्रामाण्यवाळुं ज ज्ञान जन्मे छे अने दोषयुक्त ज्ञानजनक सामग्रीथी अप्रामाण्यवाळुं ज ज्ञान जन्मे छे. ज्ञान अने प्रामाण्य-अप्रामाण्य बन्ने कंई सर्वथा

जुदी वस्तु नथी.

प्रामाण्यने शक्तिस्वरूप समजीने अेना स्वतस्त्व अंगे जे वात करी, ते वात तो अयथार्थ बोधजनक शक्तिस्वरूप अप्रामाण्य अंगे पण लागु पाडी ज शकाय. अने अे रीते अप्रामाण्यने पण उत्पत्तिमां स्वतः गणी ज शकाय. तो शा माटे अप्रामाण्यने परतः गणो छो ? वास्तवमां अमुक पदार्थोमां अमुक ज प्रकारनी शक्तिनो नियम ज सूचवे छे के अे शक्ति पण कारणसापेक्ष ज छे, स्वतः नहीं. माटे प्रामाण्य-अप्रामाण्य उभयने परतः ज गणवा जोइअे.

प्रामाण्यनुं ज्ञप्तिमां स्वतस्त्व : (-मीमांसक)

प्रामाण्यनी ज्ञप्तिमां पण अन्य वस्तुनी जरूर नथी होती. केम के तमे प्रामाण्यनी ज्ञप्तिमां जेनी अपेक्षा समजो छो ते वस्तु कई छे - गुणो के संवाद ? मतलब के ज्ञानजनक सामग्री गुणयुक्त छे माटे ज्ञान शुद्ध छे - आ रीते प्रामाण्यनो निश्चय स्वीकारो छो ? के ते ज्ञानथी जन्य प्रवृत्ति सफळ बने छे माटे ज्ञान प्रमाणभूत छे - अे रीते प्रामाण्यनो बोध तमने मान्य छे ?

कारणगुणोनी अपेक्षाअे प्रामाण्यनो निश्चय स्वीकारवो शक्य नथी. केम के गुणोनुं ज्ञान प्रत्यक्ष के अनुमान-प्रमाणथी करवुं शक्य नथी अने अे वात अमे पहेलां ज कही आव्या छीअे. वळी, 'अनुभव यथार्थ छे, माटे कारणसामग्री गुणयुक्त छे' - अे रीते पण तेमनो निश्चय न थई शके, केम के आनो मतलब अेम थाय के, 'गुणोथी जन्य छे माटे ज्ञानमां प्रामाण्य छे' अने 'ज्ञान प्रमाणभूत छे माटे गुणोथी जन्य छे' आवा परस्पर आश्रित अनुमानो स्वीकारवानां थाय.[१] आमां तमे कयुं अनुमान पहेलां करशो अने कयुं पछी ? माटे कारणगुणोनी अपेक्षाअे प्रामाण्यनो निश्चय शक्य नथी.

पहेलां ज्ञान थाय, पछी अे ज्ञानथी जन्य ते ज्ञानना विषयभूत पदार्थ विशे प्रवृत्ति (-अर्थक्रिया) थाय अने अे प्रवृत्ति सफल बने, अेटले के "मने जे पदार्थनुं जेवा स्वरूपवाळुं ज्ञान थयुं हतुं, तेवा स्वरूपवाळो ज ते पदार्थ मळ्यो" अेवुं ज्ञान (-अर्थक्रियाज्ञान) जन्मे, तो अे ज्ञानात्मक संवादना आधारे पूर्व ज्ञानना प्रामाण्यनो निश्चय थई शके - आवो विचार पण बराबर नथी.

१. दार्शनिक परिभाषामां आ वात 'इतरेतराश्रय दोष' तरीके ओळखाय छे.

केम के ज्ञानगत प्रामाण्यनो निश्चय थाय तो ज ते ज्ञान प्रवृत्तिमां प्रवर्तक बनी शके. तेथी तमे जे प्रवृत्ति थया पछी प्रामाण्यना निश्चयनी वात करो छो, ते प्रवृत्ति ज प्रामाण्यना निश्चय वगर थवी शक्य नथी. वास्तवमां जोइअे तो, ''मारी प्रवृत्ति विफल न थाय'' अेम विचारीने व्यक्ति प्रवृत्तिना प्रेरक ज्ञाननी यथार्थतानो निश्चय करवा इच्छे छे. हवे जो प्रवृत्ति ज प्रामाण्यना निश्चय वगर थई शकती होय, तो प्रामाण्यना निश्चयनी जरूर ज शी छे ? प्रवृत्ति थया पछी अने सफळता के विफळता मळी गया पछी ज्ञाननी यथार्थता-अयथार्थता नक्की करवानो मतलब ज कयो रहे छे ?

वळी, तमे जे अर्थक्रियाज्ञानना आधारे प्रवर्तकज्ञानना प्रामाण्यनो निश्चय कहो छो, ते अर्थक्रियाज्ञानना प्रामाण्यनो निश्चय केवी रीते थाय छे ? ते स्वयं अप्रमाण होय तो प्रमाणनिश्चय करावी शके नहि. अने तेनो निश्चय अन्य ज्ञानना आधारे करवा जशो तो तो ''अे अन्य ज्ञानना प्रामाण्यनो निश्चय कोना आधारे ?'' अेम आ वातनो अन्त ज नहि आवे.[१] अने जो तमे अर्थक्रियाज्ञानने स्वतः प्रमाण मानशो, तो अमे कहीअे छीअे तेम मूळभूत प्रवर्तकज्ञानने ज स्वतः प्रमाणभूत मानवामां शुं वांधो आवे छे ?

बीजी वात, ज्ञान जो अप्रमाणभूत होय, तो तेना पछी अवश्य ते ज्ञानथी विरुद्ध जणावनारुं ज्ञान (-बाधकज्ञान) अथवा ते ज्ञानने जन्मावनार कारणसामग्रीनी अशुद्धिनुं ज्ञान थाय ज छे, अने तेथी ज्ञानमां अप्रामाण्यनो निश्चय थई शके छे. प्रमाणभूत ज्ञान पछी तो आवां ज्ञानो जन्मतां ज नथी, तो त्यां अप्रामाण्यनी आशङ्का थाय ज कई रीते ? अने जो कदाच पण कोईक कारणसर अेवी आशङ्का जन्मे, तो संवादज्ञान व.थी अे अप्रामाण्यनी आशङ्कानो निरास थई शके छे. जो के अे संवादज्ञान व. मूळ ज्ञानना प्रामाण्यनो निश्चय नथी करावतां, अे निश्चय तो स्वतः थयेलो ज होय छे; पण अे निश्चय थया पछी जे आशङ्का जन्मेली तेनो निरास ज ते करी आपे छे. तेथी अेवी क्वचित् सर्जाती आशङ्काने मुख्य बनावी, दरेक ज्ञानमां अेवी आशङ्का कल्पवी अने संवादथी ज प्रामाण्यनो निश्चय मानवो ते तो अनर्थकारी ज गणाय. ''संशयात्मा विनश्यति !''

१. दार्शनिक परिभाषामां आ वात 'अनवस्था दोष' तरीके ओळखाय छे.

माटे, प्रामाण्यनुं स्वतः ग्रहण स्वीकारवुं ज वाजबी छे.

प्रामाण्यनुं ज्ञप्तिमां परतस्त्व : (बौद्ध)

प्रामाण्यनुं ग्रहण चोक्कस देश-कालमां ज थाय छे, तेथी ते वगर निमित्ते तो न ज होय, अेनुं कोईक निमित्त तो स्वीकारवुं ज पडे. आ निमित्त 'कारणगुणोनुं ज्ञान' तो न ज होय. केम के अे ज्ञान संवादज्ञान वगर थवुं शक्य नथी. अने संवादज्ञानथी कारण गुणोनुं ज्ञान जन्मे, अने अे ज्ञानथी प्रामाण्यनुं ज्ञान थाय - अेम मानवा करतां तो संवादज्ञानथी प्रामाण्यनुं ज्ञान ज स्वीकारी लेवुं वधारे सारुं छे.

वास्तवमां ज्ञानगत प्रामाण्यनो अर्थ ज अे छे के ते संवादने उत्पन्न करवानी योग्यता धरावे छे. आ योग्यतानो निश्चय प्रवृत्ति कर्या वगर थई शके नहि, केम के नियम अेवो छे के "कार्यने जोया विना कारणमां अे कार्य करवानी शक्ति छे अे निश्चित थई शकतुं नथी." माटे संवादज्ञानथी पूर्वज्ञाननी संवादजननशक्ति = प्रामाण्य निश्चित थाय छे एम स्वीकारवुं जोइअे. आ संवादज्ञानमां प्रामाण्यना निश्चय माटे कोई बीजा ज्ञाननी जरूर पडती नथी. केम के अे स्वयं संवादस्वरूप छे. अेना द्वारा पोताना विषयनुं संवेदन थाय अे ज अेनुं प्रामाण्य छे. अने आ संवादने उत्पन्न करवानी शक्ति पहेला ज्ञानमां हती अेवुं नक्की थाय ते पहेला ज्ञाननुं प्रामाण्य छे.

जेम के कोई माणसने दूरथी 'त्यां अग्नि छे' अेवुं ज्ञान थयुं. आ ज्ञानथी अे ते प्रदेशमां गयो अने अग्निविषयक दाह-पाक व. प्रवृत्ति करी. आ प्रवृत्ति पोते अग्निना अनुभवरूप छे, तेथी तेना प्रामाण्य विशे शङ्का ऊठवानो कोई सवाल ज नथी. अने आ संवादात्मक प्रवृत्ति पूर्वना प्रवर्तक ज्ञानना प्रामाण्यनो पण निश्चय करावी आपे छे. टूंकमां, ज्यां प्रवर्तकज्ञान अने अर्थक्रियाज्ञान संवादी बने छे त्यां आपोआप बन्ने ज्ञानना प्रामाण्यनो निश्चय थतो होय छे. माटे 'संवादज्ञानना प्रामाण्यनो निश्चय कई रीते ?' अे प्रश्न ज अस्थाने छे. केम के जो संवादज्ञान = अर्थक्रियाज्ञान पण अप्रमाणभूत होई शके अेम मानो तो तो तमे शेना बळे पदार्थनी व्यवस्था गोठवशो ?

अर्थक्रियाज्ञानरूप फळ उत्पन्न करवुं अे ज ज्ञानगत प्रामाण्य छे. हवे

आ फळरूप जे ज्ञान छे ते ज्ञान, 'प्रमाण छे के अप्रमाण' तेवी चिन्तानो विषय ज नथी. जेम के अङ्कुररूप फळ उत्पन्न करवुं ते ज बीजनी बीजरूपता छे. अङ्कुरने जोइने बीजनी बीजरूपतानो निश्चय थई शके छे. पण त्यां अङ्कुरमां बीजरूपता छे के नहि तेवो प्रश्न कोई उठावतुं नथी. तेवी ज रीते संवादज्ञानथी प्रवर्तकज्ञानना प्रामाण्यनो निश्चय थई शके छे. अने त्यां संवादज्ञानविषयक प्रामाण्यनी आशङ्का पण जागती नथी. टूंकमां संवादज्ञान पोते ज संवादरूप छे, अने स्वरूपअंशमां तो सर्व ज्ञान प्रमाणात्मक ज होय छे अने ओ प्रामाण्य स्वत:सिद्ध ज होय छे. बाह्यविषयनी अपेक्षाओ ज ज्ञानमां प्रामाण्य-अप्रामाण्य, स्वतस्त्व-परतस्त्वनी चिन्ता करवी शेष रहे छे. अने ओथी संवादज्ञानना प्रामाण्यनो प्रश्न उठावीने, अनवस्था दोष आपीने, प्रवर्तकज्ञानना प्रामाण्यने स्वत:सिद्ध साबित करवुं वाजबी नथी.

प्रश्न थई शके के जो संवादथी ज पूर्वज्ञाननुं प्रामाण्य निश्चित थई शकतुं होय, तो कानथी सांभळीने थती बुद्धि अप्रमाण थई जशे. केम के शब्द पोते स्थिर रहेवावाळी वस्तु नथी. तेथी अेक वखत जे शब्द संभळायो ते फरीथी नथी ज संभळाववानो. तो आमां संवाद उत्पन्न थवानी शक्यता ज क्यां रहे छे ? परत:प्रामाण्यवादीओ आनो जवाब अेवो आपे छे के, आपणे दूरथी चांदी जोई तो त्यां जइने हाथमां लइने जोइने नक्की करवुं पडे के खरेखर चांदी छे के नहि ? पण श्रोत्रबुद्धिमां तो आवुं नथी. अे तो स्वत:प्रमाण छे. कानथी शब्द सांभळ्या पछी, मने संभळायो ते खरेखर शब्द ज हतो के नहि अेवो प्रश्न ज नथी थतो. हा, अेमां ध्वनिविशेषविषयक 'आ वीणानो शब्द हतो अेवुं ज्ञान थयुं ते साचुं हशे के नहीं' अेवो प्रमाणसंशय थई शके छे, अने वीणा वगेरे जोईने तेवा प्रकारना संवादक ज्ञानथी प्रामाण्यनो निश्चय करी शकाय छे. पण ध्वनिसामान्य ज्ञान, चित्रमां आलिखित रूपनुं ज्ञान, गन्ध-रस-स्पर्श व.नी अनुभूतिओ - आ बधां ज्ञानो अर्थक्रियाज्ञानात्मक होवाथी स्वत:सिद्ध प्रमाणभूत होय छे.

हवे, वात रहे छे प्रामाण्यना निश्चय वगर पण प्रवृत्ति केवी रीते थाय छे तेनी. ज्ञान बे दशामां थई शके छे. १. अभ्यासदशा २. अनभ्यासदशा. धारो के कोईने एकाद-बे वार अग्निने लीधे ठंडीथी रक्षण मळ्युं. तो अेना मनमां

अेक सम्बन्ध जोडाशे के आवा स्वरूपवाळो पदार्थ ठंडीथी बचावे छे. हवे आ पुरुषने ज्यां सुधी अग्निनो बराबर अभ्यास नथी थई जतो त्यां सुधी, अग्निने जोइने, पूर्वज्ञानना सादृश्यथी ते ज्ञानना प्रामाण्यनुं अनुमान करीने, *अग्निविषयक अर्थक्रियामां* प्रवृत्ति करशे. अभ्यासदशामां तो अनुमान वगर पण प्रत्यक्षथी ज प्रवृत्ति थई शके छे. माटे अभ्यासदशामां तो स्वतः प्रामाण्यनिश्चय अमे स्वीकारीअे छीअे; पण अनभ्यासदशामां तो संवाद वगर प्रामाण्यनो निश्चय शक्य नथी ज, माटे त्यां तो परतः प्रामाण्य ज स्वीकारवुं जोइअे.

प्रमाणभूत ज्ञान पछी ते ज्ञानमां अप्रामाण्यनी आशङ्का जन्मवामां कारणभूत बाधकज्ञान के कारणदोषज्ञान नथी थतां, माटे त्यां अप्रामाण्यनी आशङ्का न जन्मी शके अे वात पण बराबर नथी. केमके अप्रमाण स्थळे पण क्यारेक अमुक समय सुधी आवां ज्ञानो न जन्मे तेम बनी शके. त्यारे ते ज्ञान 'प्रमाण' तरीके ज जणाय छे, अने पाछळथी बाधकज्ञान व. जन्मतां खबर पडे छे के वास्तवमां तो ते अप्रमाण हतुं. तेथी व्यक्तिने प्रमाणभूत ज्ञान स्थळे पण तेवो संशय जन्मी ज शके के "खरेखर आ ज्ञान प्रमाण छे, माटे बाधकज्ञान व. नथी, के बाधकज्ञान व. मने जणातां नथी ?" अने आ संशय प्रामाण्यसंशय पण जन्मावी ज शके. अने अे संशयनुं निरसन करीने प्रामाण्यनो निश्चय करवा माटे संवादज्ञाननी जरूर पडे ज. माटे अमे परतः प्रामाण्य स्वीकारीअे छीअे.

कार्यमां प्रामाण्यनुं स्वतस्त्व : (-मीमांसक)

'प्रमाण' शब्द बे अर्थमां वपराय छे - १. प्रमारूप ज्ञान २. प्रमारूप ज्ञाननुं जनक.[१] ज्यारे प्रमारूप ज्ञानने 'प्रमाण' तरीके ओळखीअे त्यारे ते प्रमाणमां रहेलुं प्रामाण्य (-यथार्थता) क्यांथी प्रगटे छे अने केवी रीते जणाय छे, तेनी चर्चा थाय छे. अने ज्यारे प्रमाना करण तरीके 'प्रमाण'ने ओळखीअे त्यारे ते प्रमाण कई रीते प्रमाने जन्मावे छे ते विशे चर्चा थाय छे. अने ते 'कार्ये प्रामाण्यचर्चा' तरीके ओळखाय छे. प्रामाण्यवादना साहित्यमां अेकाद अपवादने बाद करतां आ चर्चा लगभग जोवा मळती नथी. केम के ज्ञप्ति अने उत्पत्तिनी चर्चामां ज ते प्रायः समाई जाय छे. छतां सन्मति० वृत्तिमां तेनी चर्चा

१. 'प्रमाकरणं प्रमाणम्' आवी व्युत्पत्ति करवाथी आवो अर्थ प्राप्त थाय छे.

अलगथी करी होवाथी ते जोईअे –

प्रामाण्यनुं कार्य छे अर्थनो यथावस्थित बोध उत्पन्न करवो ते. आ कार्य ते कोईनी अपेक्षा राखीने करे छे अेम न कही शकाय. केमके प्रमारुप कार्य जन्मावावामां अेने कोनी अपेक्षा होय ? - संवादज्ञाननी के कारणगुणोनी ? संवादनी अपेक्षा तो मानी न शकाय. केम के जो प्रामाण्य प्रमात्मक बोध उत्पन्न करे, तो अेने अनुसरीने प्रवृत्ति थाय, अने तो प्रवृत्तिनी सफलताथी संवादज्ञान जन्मे. हवे जो प्रामाण्य प्रमात्मक बोधरूप कार्य ज संवादनी अपेक्षा वगर न करी शकतुं होय, तो संवाद जन्मे ज कई रीते ?

कारणगुणोनी अपेक्षा पण प्रामाण्यने होय ते वात बराबर नथी. केम के अेक तो कारणगुणोनुं ज्ञान ज शक्य नथी, ते वात पहेलां कही आव्या छीअे. अने बीजुं कारणगुणोना ज्ञानना प्रामाण्यनो निश्चय करवा अेना कारणगुणोनुं ज्ञान जोईशे, अेना माटे अेना कारणगुणोनुं - आ रीते अनवस्था ज सर्जाशे. माटे प्रामाण्य स्वतः- पोतानी जाते ज अर्थनो यथावस्थित बोध - प्रमात्मक ज्ञान उत्पन्न करी शके छे, तेम मानवुं जोईअे.

कार्यमां प्रामाण्यनुं परतस्त्व : (-बौद्ध)

प्रमाण कोईनी अपेक्षा वगर प्रमाने जन्म आपी शके ते वात ज सम्भवित नथी. केम के "कारणसामग्री कार्यनी जनक होय छे, कोई अेकाद कारण नहि" अे नियम छे. प्रमाण प्रमाजनकसामग्रीनो अेक अंश छे. ते अेकलुं प्रमा न जन्मावी शके, तेने माटे बीजानी अपेक्षा रहे ज.

वळी, अर्थनो यथावस्थित बोध जो निमित्त वगर ज थतो होय, तो तो बधे ज थवो जोईअे. पण तेवुं बधे ज नथी थतुं, ते सूचवे छे के ते कोईकनी अपेक्षा राखे ज छे. आ अपेक्षित पदार्थ अेटले ज ज्ञानमां रहेलुं संवादित्व- संवाद जन्मावावानी योग्यता. आ योग्यतानो निश्चय संवादज्ञाननी उत्पत्ति वगर नथी ज थतो. अने आ निश्चयना बळे ज प्रामाण्य अर्थनो यथावस्थित बोध जन्मावावारूप स्वकार्य करी शके छे, माटे प्रामाण्य स्वकार्यमां पण परतः ज सिद्ध थाय छे.

टूंकमां, प्रामाण्यना संशयथी पुरुष अर्थक्रियामां प्रवृत्त थाय छे अने

अे प्रवृत्तिनी सफलताथी ज्ञानमां प्रामाण्यनो अेटले के अर्थनो यथावत् बोध करावनारी शक्तिनो निश्चय थाय छे. अने आ शक्तिनिश्चयनी अपेक्षाअे प्रमाण स्वकार्य - यथावस्थित बोध करावी शके छे. आ अपेक्षा राखवी अे ज तेनुं परतस्त्व छे.

*

सन्मतितर्कवृत्तिगत प्रामाण्यवादनी चर्चा अत्रे पूर्ण थाय छे. विद्यार्थीओ माटे प्रारम्भिक स्तरे जरूरी बने अेटली ज दलीलो अत्रे रजू करी छे. मूळ चर्चामां बन्ने पक्षोनी हजु बीजी घणी दलीलो छे, ते सरळता अने सङ्क्षिप्तताने साचवणी खातर अत्रे रजू नथी करी. जिज्ञासुओने मूळ चर्चा जोवा अनुरोध छे.

प्रामाण्यवादनी आ चर्चा-विचारणामां अर्थघटननी, दृष्टिबिन्दुनी, सङ्कलननी के अन्य कोई बाबतनी त्रुटि होवानी पूरेपूरी सम्भावना छे ज. ते सूचवीने आ लेखकने उपकृत करवा विद्वज्जनोने नम्र विनन्ति.

आ लखाणनां टिप्पणोमां केटलाक ग्रन्थोनी मूळ पङ्क्तिओ नोंधवामां न्यायकोश (-भीमाचार्य झलकीकर, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन)नी सहायता मळेल छे.

* * *

टूंकनोंध :

नवपदप्रकरण-बृहद्वृत्तिनी प्रशस्तिना अर्थघटन अंगे

– मुनि त्रैलोक्यमण्डनविजय

विक्रमना ११मा सैकामां थयेला श्रीदेवगुप्तसूरिजीओ श्रीनवपदप्रकरणनी रचना करी छे. मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, श्रावकना १२ व्रत तथा संलेखना विशे नव द्वारोथी अत्रे विचारणा करवामां आवी छे, तेथी तेनुं 'नवपदप्रकरण' अेवुं नाम छे. आ प्रकरण पर ग्रन्थकारे स्वयं एक वृत्ति रची छे.

आ प्रकरण पर ग्रन्थकारना ज शिष्य श्रीयशोदेव उपाध्याये ग्रन्थकारनी स्वोपज्ञवृत्तिना आधारे बृहद्वृत्ति रचेली छे. जे पूज्यपाद श्रीसागरजी महाराज द्वारा सम्पादित थईने, देवचन्द लालभाई जैन पुस्तकोद्धार संस्था तरफथी सं. १९८३मां प्रकाशित थई छे.

प्रस्तुत प्रकाशननी प्रस्तावनामां श्रीसागरजी महाराजे आ प्रमाणे विधान कर्युं छे :- "...श्रीदेवगुप्तसूरीणां पादोपजीविनः श्रीमन्तो यशोदेवोपाध्याया धनदेवेतिप्रागभिधाना सविस्तरामेनां वृत्तिं विस्तृतकथायुतां चक्रुः । ...प्रस्तुतां च वृत्तिमुपाध्यायपदमाश्रिताश्चक्रुः । परं विशेषोऽत्रैतावान् यदुत नैते उपाध्यायपदव्या श्रीमद्भिर्देवगुप्तसूरिभिर्विभूषिता किन्तु श्रीमद्देवगुप्तसूरिगुरुभिः सिद्धसूरिभिः । तदपि उपाध्यायपदं सूरिपदेऽभिषेक्तुमनोभिरेव सिद्धसूरिभिर्दत्तं, परं ते परलोकमलंचक्रुरन्तरैवेति स्थिता एते यशोदेवा उपाध्यायपदे एव । सर्वमेतत् स्वयमेव पट्टावल्यां प्रस्तुतग्रन्थप्रान्त्यभागे स्पष्टमेव जगदुः ।"

("श्रीदेवगुप्तसूरिजीना शिष्य श्रीयशोदेव उपाध्याय, जेमनुं पूर्वावस्थामां 'धनदेव' अेवुं नाम हतुं तेमणे, विस्तृत कथावाळी आ बृहद्वृत्ति रची छे. तेमणे आ वृत्ति उपाध्यायपदना पर्यायमां रची छे. परन्तु आमां अे विशेष छे के तेमने उपाध्यायपद तेमना गुरु देवगुप्तसूरिजीअे नहि, पण तेमना दादागुरु सिद्धसूरिजीअे आप्युं हतुं. वास्तवमां सिद्धसूरिजीनी इच्छा तो यशोदेव मुनिने आचार्यपद आपवानी ज हती, अने ते माटे ज तेओअे तेमने उपाध्याय पद आप्युं हतुं

(के जेथी भविष्यमां आचार्यपद आपी शकाय); परन्तु आचार्यपद आपतां पूर्वे ज सिद्धसूरिजी कालधर्म पामतां, यशोदेव उपाध्यायपदे ज रह्या. आ बधुं यशोदेव उपाध्याये स्वयं आ बृहद्वृत्तिना अन्तभागे आलेखेली पट्टावलीमां जणाव्युं छे.")

हमणां नवपदप्रकरण बृहद्वृत्ति साथे श्रीयोगतिलकसूरिजी म.ना हाथे पुनः सम्पादित थईने वीरशासन नामनी संस्था द्वारा प्रकाशित थयुं छे.* प्रकाशननी सम्पादकीय भूमिकामां जणावायुं छे के "या च बृहद्वृत्तिरस्ति सा तेषामेव शिष्यैः श्रीमद्यशोदेवोपाध्यायैर्विरचिता । तेभ्यश्चोपाध्यायपदवी स्वप्रगुरुभिः श्रीसिद्धसूरिभिरेव दत्ता । ते च प्रगुरव आचार्यपदवीमपि दातुकामा आसन्, किन्तु अन्तरैव तेषां कालधर्मो जातः । (देवगुप्तसूरिजीना शिष्य यशोदेव उपाध्याये बृहद्वृत्ति रची छे. तेमने उपाध्यायपदवी तेमना दादागुरु सिद्धसूरिजीओ ज आपी हती. ते दादागुरुने तो यशोदेव उपाध्यायने आचार्यपद पण आपवुं हतुं, पण ते थाय ते पूर्वे ज तेमनो काळधर्म थई गयो.)" स्पष्ट छे के पुनःसम्पादक अत्रे पूर्वसम्पादनगत प्रस्तावनाने ज अनुसर्या छे.

बन्ने सम्पादकश्रीओनां विधानो परथी नीचेना निष्कर्षो नीकळे छे :

१. यशोदेव उपाध्यायने आचार्यपद आपवानी तेमना दादागुरु सिद्धसूरिजीने इच्छा हती.

२. आ इच्छाने पार पाडवा तेओओ यशोदेवने आचार्यपद पूर्वेनुं उपाध्यायपद आप्युं हतुं. आम यशोदेवने उपाध्यायपद तेमना गुरु देवगुप्तसूरिजी पासेथी नहि, पण दादागुरु सिद्धसूरिजीना हाथे मळ्युं हतुं.

३. उपाध्यायपद आप्या बाद सिद्धसूरिजी काळ करी जतां, यशोदेव उपाध्यायपदे ज रह्या. आनो अर्थ अेवो थई शके के सिद्धसूरिजीओ यशोदेवमां आचार्यपदनी लायकात जोया छतां, तेमना काळधर्म बाद देवगुप्तसूरिजी के अन्य ज्येष्ठ आचार्य पासे यशोदेवने आचार्यपद मळ्युं नहि.

४. पोते उपाध्याय होवा छतां पोतानामां आचार्यपदनी योग्यता छे अे सहितनी बधी वातो यशोदेव उपाध्याये पोते लखी छे.

---

* उपदेशसाहित्यमाला - भाग १

हवे आपणे, सम्पादक भगवन्तोओ आ विधानो जे पद्योने आधारे कर्यां छे ते प्रशस्तिगत पद्यो जोइओ :

''तत्पादपद्मद्वयचञ्चरीकः, शिष्यस्तदीयोऽजनि सिद्धसूरिः ।
तस्माद् बभूवोज्ज्वलशीलशाली, त्रिगुप्तिगुप्तः खलु देवगुप्तः ॥५॥
यं वीक्ष्य निःसीमगुणैरुपेतं, श्रीसिद्धसूरिः स्वपदे विधातुम् ।
श्रीमत्युपाध्यायपदे निवेश्य, प्रख्यापयामास जनस्य मध्ये ॥६॥
तद्वचनेनाऽऽरब्धा, तस्याऽन्तेवासिना विवृतिरेषा ।
तत्रैवाऽऽचार्यपदं, विशदं पालयति सन्नीत्या ॥७॥
लोकान्तरिते तस्मिं-स्तस्य विनेयेन निजगुरुभ्रात्रा ।
श्रीसिद्धसूरिनाम्ना, भणितेन समर्थिता चेति ॥८॥
उपाध्यायो यशोदेवो, धनदेवाद्यनामकः ।
जडोऽपि धार्ष्ट्यतश्चक्रे, वृत्तिमेनां सविस्तराम् ॥९॥''

आ पद्योनो शब्दशः अनुवाद आम थई शके :

''तेमना (-श्रीकक्कसूरिजीना) पट्टधर थया श्रीसिद्धसूरि. तेमनाथी उज्ज्वलशीलथी विभूषित अने गुप्तिओथी गुप्त एवा श्रीदेवगुप्तसूरि थया... ५

''जेमने असीम गुणोना भण्डार जोईने श्रीसिद्धसूरिओ पोतानी पाटे स्थापित करवा माटे, उपाध्यायपद आपीने लोकोमां प्रसिद्ध कर्या... ६

''तेमनी आज्ञाथी तेमना शिष्ये, तेओ आचार्यपद धारण करता हता ते वखते, आ वृत्तिनी रचनानो प्रारम्भ कर्यो... ७

''अने तेमना काळधर्म बाद, तेमना शिष्य अने पोताना गुरुभाई श्रीसिद्धसूरिजीना कहेवाथी आ वृत्ति पूर्ण करी... ८

''धनदेव जेमनुं पूर्वावस्थानुं नाम हतुं अेवा उपाध्याय यशोदेवे जड होवा छतां पण धृष्टता करीने आ सविस्तर वृत्तिनी रचना करी छे... ९''

हवे, आ पद्योमां नीचेनी बाबतो ध्यानपात्र जणाय छे :

१. पद्य ७ अने ८मां 'तद्' सर्वनाम एकधारुं, वच्चे अन्य कोई विशेषनाम वगर, चाल्युं आवे छे. माटे 'तद्'नां वपरायेलां बधां ज रूपाख्यान कोई एक ज व्यक्तिने सूचवे छे अेम मानवामां हरकत नथी.

२. आ व्यक्ति कोण होई शके ते विशे विचारीअे. ''तेमनी आज्ञाथी तेमना शिष्ये आ वृत्तिनी रचनानो प्रारम्भ कर्यो'' आ वाक्य परथी, वृत्तिकार उपाध्याय यशोदेवना गुरु देवगुप्तसूरिजीनो 'तद्' थी निर्देश थयो छे अेम सहेजे समजी शकाय. तो पछी अेना पछी तरत आवता ८मा पद्यमां ''लोकान्तरिते तस्मिन् (-तेमना कालधर्म बाद)'' मां 'तद्'थी देवगुप्तसूरिजीना गुरु सिद्धसूरिजीनुं कई रीते ग्रहण करी शकाय ? अने जो अेम करीअे तो, ''तस्य विनेयेन निजगुरुभ्रात्रा''मां सिद्धसूरिजीना शिष्यने यशोदेव उपाध्याय कई रीते पोताना गुरुभाई गणावी शके ? माटे प्रशस्तिनां पद्य ७ अने ८मां आवती 'तद्'थी सूचित तमाम हकीकतो उपाध्याय यशोदेवना गुरु देवगुप्तसूरिजीने लागु पडे छे ते समजी शकाय तेम छे.

३. हवे प्रश्न बाकी रहे छे पद्य ६मां सूचित उपाध्यायपदवी कोने मळी हती तेनो. पद्य तो अेटलुं ज कहे छे के ''जेमने निःसीम गुणोंना भण्डार स्वरूप जोईने सिद्धसूरिजीअे पोतानी पाटे स्थापन करवा माटे उपाध्याय पदवी आपी हती.'' आमां यशोदेव उपाध्यायनी उपाध्यायपदवीनुं सूचन छे अेम सम्पादकश्रीओनुं कहेवुं छे. पण अे कथन अेटले वास्तविक नथी जणातुं के १. पद्यकार यशोदेव पोताना माटे 'निःसीमगुणैरुपेतं' शब्द वापरे ते असम्भवित छे. २. सिद्धसूरिजी पोतानी पाटे देवगुप्तसूरिजी जेवा समर्थ शिष्यने बदले प्रशिष्य यशोदेवने स्थापित करवानुं विचारे ते पण बनवाजोग नथी. ३. संस्कृतभाषानी स्थापित प्रणालिका मुजब एक सळंग सन्दर्भे प्रयोजाता 'यत्-तत्' एक ज व्यक्तिना सूचक होय तेम सामान्यतः बनतुं होय छे. हवे जो ७-८ मा पद्यमां 'तत्' थी देवगुप्तसूरिजी सूचवाता होय तो, ६ठ्ठा पद्यमां 'यत्'थी अेमने छोडीने यशोदेव उपाध्यायनुं ग्रहण करवानुं कोई प्रयोजन देखातुं नथी.

४. यशोदेव उपाध्याय अेम कहे के ''मने दादागुरु तो आचार्यपद आपवा इच्छता हता, पण तेमनो काळधर्म थई जतां तेम न बन्युं.'' अने देवगुप्तसूरिजी जेवा समर्पित शिष्य पोताना गुरुनी इच्छाने पूर्ण न करे - आ बधुं गळे ऊतरे अेम नथी.

तेथी आ प्रशस्तिपद्योनुं तात्पर्य अेम समजाय छे के : श्रीकक्कसूरिजीना श्रीसिद्धसूरिजी पट्टधर थया. अने तेमना पट्टधर श्रीदेवगुप्तसूरिजी थया.

देवगुप्तसूरिजीना गुणोने जोईने, तेमना गुरु श्रीसिद्धसूरिजीओ तेमने पोतानी पाटे स्थापवा माटे, उपाध्यायपद आपीने लोकोमां प्रसिद्ध कर्या. आ देवगुप्तसूरिजीनी आचार्यपदवी थई त्यारबाद तेमनी आज्ञाथी तेमना शिष्य उपाध्याय यशोदेवे आ वृत्तिनो आरम्भ कर्यो. अने देवगुप्तसूरिजीना काळधर्म बाद, तेमना शिष्य अने पोताना गुरुभाई श्रीसिद्धसूरिजीना (देवगुप्तसूरिजीना गुरु श्रीसिद्धसूरिजीना प्रशिष्य) कहेवाथी आ वृत्ति पूर्ण करी. धनदेव जेमनुं आद्य नाम छे अेवा उपाध्याय यशोदेवे आ वृत्ति रची छे.

आ तात्पर्यमांथी नीचेनी हकीकतो फलित थाय छे :

१. श्रीसिद्धसूरिजी पोतानी पाटे देवगुप्तसूरिजीने स्थापन करवा इच्छता हता, उपाध्याय यशोदेवने नहि. तेमज तेओअे ते माटे देवगुप्तसूरिजीने ज उपाध्यायपदवी आपी हती, सम्पादकश्रीओ कहे छे तेम यशोदेवने नहि. वास्तवमां श्रीसिद्धसूरि अने यशोदेव वच्चे काळनुं अन्तर होवाथी बन्ने वच्चे पदवीप्रदाननो व्यवहार थवो भाग्ये ज सम्भवित छे.

२. देवगुप्तसूरिने आचार्यपदवी कोणे आपी ते आमां जणावायुं नथी. अे ज रीते यशोदेवने उपाध्यायपदवी कोना हाथे मळी ते पण नोंधायुं नथी.

३. प्रशस्तिमां जे काळधर्मनी नोंध छे ते देवगुप्तसूरिजीने अंगे छे, सिद्धसूरिजीने अंगे नहि. तेथी सम्पादकश्रीओ कहे छे तेम सिद्धसूरिजीनो काळधर्म थवाथी यशोदेवनी आचार्यपदवी अटकी पडी एवो कोई सन्दर्भ अत्रे छे ज नहि. कमसे कम यशोदेव उपाध्याये तो एवुं नथी ज कह्युं.

◆

उपाध्याय यशोदेवे आ बृहद्वृत्ति सिवाय सं. ११७८मां चन्द्रप्रभचरित्र (प्राकृत) रच्युं हतुं तेमज पोताना गुरुभाई सिद्धसूरिजीने शास्त्रार्थ पण शीखव्या हता, तेवी नोंध जैन साहित्यनो सङ्क्षिप्त इतिहास (मोहनलाल दलीचंद देसाई), पारा-३३१मां नोंधाई छे. त्यां तेमनुं नाम 'यशोदेवसूरि' जणावायुं छे. पण ते उल्लेख वास्तविक होय तेवी शक्यता ओछी छे, केम के सं. ११९२मां तेमना गुरुभाई सिद्धसूरिजीअे रचेली क्षेत्रसमासवृत्तिमां पण तेमने 'उपाध्याय' ज जणावाया छे.

* * *

श्री हेमचद्धाचार्य-चद्धक-१४-समारोह : अहेवाल

"कलिकालसर्वज्ञ श्रीहेमचन्द्राचार्य नवम जन्मशताब्दी स्मृति संस्कार शिक्षणनिधि" ए आचार्य श्रीविजयसूर्योदयसूरिजी महाराजनी प्रेरणाथी, हेमचन्द्राचार्यनी नवमी जन्मशताब्दी (सं. २०४५)ना उपलक्ष्यमां स्थपायेलुं ट्रस्ट छे. तेना आश्रये मुख्यत्वे त्रण प्रकारनी प्रवृत्तिओ थती रहे छे : १. चन्द्रक-प्रदान, २. ग्रन्थ-प्रकाशन, ३. परिसंवादो.

ट्रस्ट द्वारा विगत वर्षोमां संस्कृत-प्राकृत-गुर्जर भाषामां, विविध विषयना, शताधिक ग्रन्थो प्रकाशित थया छे. 'अनुसन्धान' नामे शोधपत्रिकानो पण तेमां समावेश थाय छे. तो तेर जेटला विद्वज्जनोने 'हेमचन्द्राचार्य चन्द्रक' पण आपवामां आवेल छे.

चालु - ई. २०१६ना - वर्षना प्रारम्भे, १० जान्युआरीए, अमदावादना शेठ हठीसिंह केसरीसिंहनी वाडीना प्रांगणमां, पेरिस (फ्रान्स)नां विदुषी प्राध्यापिका बहेन डो. नलिनी बलबीरने, तेमना जैन साहित्यना ऊंडा अध्ययन-संशोधन बदल, 'हेमचन्द्राचार्य चन्द्रक' अर्पण करवानो एक भव्य समारोह योजाई गयो.

समारोह आ. श्रीविजयशीलचन्द्रसूरिजीनी निश्रामां योजायो हतो. तेमां अतिथिविशेष तरीके विख्यात विद्वान डो. मधुसूदन ढांकी तेमज सुश्री जयश्रीबेन संजयभाई लालभाई उपस्थित रह्या हता. उपरांत, तीथलथी बन्धुत्रिपुटी मुनि कीर्तिचन्द्रजी, फ्रान्सना योगशिक्षक किरणभाई व्यास, तथा अन्य अनेक सज्जनो तथा महानुभावो पण पधार्या हता.

आ समारोहनुं संचालन रापर (कच्छ) कोलेजना प्राध्यापक डो. रमजान हसणियाए आगवी कुशलतापूर्वक कर्युं. संगीतज्ञ श्री अमित ठक्कर तथा दीप्ति देसाईए संस्कृत भाषानां बे मधुर गीतोनुं मङ्गलगान करीने वातावरणने प्रसन्नमङ्गल बनाव्युं हतुं.

प्रारम्भमां महाराजश्रीना मङ्गलाचरण बाद, ट्रस्टना ट्रस्टी श्री पङ्कजभाई शेठे स्वागत कर्युं हतुं, अने ते पछी डो. कुमारपाल देसाई, किरणभाई व्यास, डॉ. ढांकी, श्रीकीर्तिचन्द्रजी, श्रीमती जयश्रीबेन वगेरे वक्ताओए वक्तव्य आप्यां

अने नलिनीबेननो परिचय करावता साथे तेमने वधाव्यां हता.

आ पछी अतिथिविशेषो तेमज ट्रस्टीगण द्वारा डो. नलिनीबेनने 'हेमचन्द्राचार्य चन्द्रक' तेमज सरस्वतीदेवीनी चन्दनमय ऊभी प्रतिमा, शॉल, श्रीफल अने कंकुतिलक, प्रशस्तिपत्र तथा पुरस्कारनी राशिना कवर वगेरे प्रदान करवापूर्वक सन्मान करवामां आव्युं हतुं.

आ साथे ज, एक खास अपवादरूप चेष्टालेखे, आ प्रसंगे, अन्य त्रण संस्थाओए पण तेमने शॉल ओढाडीने बहुमान कर्युं हतुं. गुजरात विश्वकोश ट्रस्ट वती कुमारपाल देसाई, शान्तिनिकेतन साधना केन्द्र - तीथल वती तेना ट्रस्टीओ, फ्रान्स-नोर्मन्डीना तपोवन आश्रम वती किरणभाई व्यास - आ बधाए तेमने सन्मान्यां.

आ प्रसंगे मुंबईनां सुश्री अर्चना शाहे हेमचन्द्राचार्यनां माता पाहिणी देवी विषे ३० मिनिटनो अभिनयात्मक एकोक्तिनो प्रयोग (मोनोलोग) प्रस्तुत कर्यो हतो, जे खूब भावनात्मक अने हृदयस्पर्शी बन्यो हतो.

आ. श्रीविजयशीलचन्द्रसूरिजीए प्रासङ्गिक प्रवचन कर्युं हतुं, अने डॉ. नलिनी बलबीरे पोतानो प्रतिभाव प्रगटावतुं प्रवचन कर्युं हतुं, ते आ अङ्कमां अन्यत्र प्रगट करवामां आव्युं छे.

समारोह पूर्ण थया बाद सहु भोजन लईने विखराया हता. आशरे ३०० जेटली संख्या समारोहमां उपस्थित रही हती.

* * *

श्रीहेमचन्द्राचार्य-चन्द्रक-१४थी सन्मानित*

डॉ. नलिनी बलबीरनुं प्रतिभाव-प्रवचन

परमपूज्य आचार्य विजयशीलचन्द्रसूरिजी महाराज, परमपूज्य बन्धुत्रिपुटीजी महाराज, पूज्य साधु एवं साध्वीजी महाराज, माननीय देवियों और सज्जनों,

आज जिस समारोह के लिए हम लोग इकट्ठे हुए हैं, वह एक जैन जगत की अभूतपूर्व विभूति के संस्मरण के अवसर पर है क्योंकि वह कलिकाल हेमचन्द्राचार्य का नाम पर ही हो रहा है। और हठीसिंह जैन मन्दिर पुण्य तीर्थ तो है। इस मन्दिर की सुन्दर कला के सामने हम सब लोग जैन परम्परा की एक अद्भुत कृति देख सकते हैं। श्रमण सङ्घ की प्रेरणा से श्रावक सङ्घने एवं कलाकारों ने इसको निष्पादित करने में एक साथ हाथ जोड़ दिये। ऐसी एकता के बिना ऐसी आश्चर्यजनक कृतियाँ कैसे हो सकती थीं ?

सब से पहले मैं संयोजकमण्डल की आभारी हूँ। यहाँ के जैन श्रावक वर्ग को भी मैं बहुत धन्यवाद देती हूँ, जिन्होंने इतना सुन्दर आयोजन किया है।

इस शुभ अवसर पर मैं आपका अधिक समय नहीं लेना चाहती। केवल जैन धर्म, संस्कृति एवं संशोधन के उपर अपने अनुभव संक्षेप में बोलूँगी।

आरम्भ से ही मेरे जीवन का वातावरण भारतीय संस्कृति और सभ्यता से ओतप्रोत रहा। मेरा जन्म फ्राँस में हुआ पर ६ साल की आयु तक हम लोग India में ठहरे। माताजी फ्राँसीसी थीं, पिताजी और उनका परिवार सदियों से पुरानी दिल्ली के रहनेवाले हैं। उनका परिवार हिन्दु धर्म मानता है। जैन धर्म से मेरा कोई सहज सम्बन्ध नहीं हुआ। पूरी शिक्षा-दीक्षा फ्राँस में हुई। High school और विश्वविद्यालय में पहले Latin और Greek भाषा तथा साहित्य सीखे गये और मैंने इन विषयों को खुद पढाया। पर M.A. के समय मैंने संस्कृत भाषा और साहित्य का अध्ययन शुरू किया। अध्यापकों के बीच में प्रो० श्रीमती कोलेट कैया थीं, जिन्होंने फ्राँस में पहली

* ता. १०-१-१६, हठीभाईनी वाडी - अमदावाद

बार जैन आगमों के उपर सचमुच शोधकार्य किया है । उन्होंने ही मुझे जैन परम्परा का अध्ययन करने की सलाह दी थी । एक कारण यह था कि इस विषय पर भारत के बहार इतना काम नहीं हो रहा था । दूसरा कि विविध भारतीय भाषाओं में मेरी रुचि थी और कम से कम हिन्दी थोडी-बहुत आती थी । प्रो० क० कैया मेरी गुरुणी और पथदर्शिका बन गयीं । वे L.D. विद्यामन्दिर से एवं विशेषतः पं० दलसुखभाई मालवाणिया से अच्छी तरह से परिचित थीं । इसी तरह मेरे जीवन में अहमदाबाद शहर तीर्थ जैसे बन गया । दानाष्टककथाओं के उपर Ph.D. करते समय अहमदाबाद में ही L.D. विद्यामन्दिर में पहली बार आ गयी । उस समय पं. लक्ष्मणभाई भोजक, कनुभाई शेठ, पं. रुपेन्द्रकुमार पगारिया, पं. दलसुखभाई मालवाणिया और प्रो. हरिवल्लभ भायाणी के पास मैंने हस्तलिखित ग्रन्थ पढ लिये और प्राकृत जैन कथा साहित्य के भिन्न-भिन्न स्रोतों का मैंने अध्ययन किया । ये लोग सचमुच विद्यापुरुष ही हैं और विद्यार्थियों के लिये कल्पवृक्ष थे । हर ज्ञानअर्जन इच्छुक व्यक्ति को सहायता देने को सदैव उपस्थित रहे । इस संस्था में अध्ययन करने के लिये आज तक लगभग मैं हर साल आने लगी और कोई न कोई जानकारी अवश्य मिल पाती रही । हमको इन विद्वानों से जानकारी मिली, तो हमको यह ठीक लगा कि उनके शोधकार्य और अधिक प्रचलित करने के लिये एक पैरिस से छपी हुई शोधपत्रिका में पं० मालवाणिया और भायाणी साहब की स्मृति में उनका परिचय दिया जाए और उनकी ग्रन्थसूचि भी दी जाए।

उस समय भी, १९८० के आसपास में, पहली बार मुझे जैन साधु-साध्वियों का दर्शन करने का अवसर मिला । डा० कनुभाई शेठ के साथ हम वीरमगाम गये । वहाँ स्वर्गीय जम्बूविजयजी महाराज एक छोटे उपाश्रय में पुस्तकों के बीच में चौमास के लिए बिराजमान थे । जैन साधुओं की विद्या तथा जीवनसरलता को देखकर मैं इतनी प्रभावित हो गयी कि जागृत जैसे हो गई । तब से मैंने यह निश्चय किया कि जब भी गुजरात आ जाऊँगी तब जैन साधु-साध्वियों के पास सीखने जाती रहूँगी और उनके प्रवचन सुनने जाऊँगी । इससे जैन धर्म सीखने की इच्छा हमेशा बढ़ती रही । मुझे लगा कि शिक्षा पाए बिना जीवन का मूल्य नहीं होता क्योंकि शिक्षा से ही मनुष्य में मनुष्यता आती है । जैन सूत्रों में कहा जाता है कि ज्ञान का दूसरा नाम

प्रकाश है। जैसे ही दीप से ज्योति आती है, वैसे ही साधुओं और साध्वियों से। इसीलिये विशेषकर आचार्य विजयशीलचन्द्रसूरिजी महाराज तथा साध्वी चारुशीलाजी महाराज का दर्शन करने की जैसे मेरी आदत बन गयी। उस समय मैंने जैन मन्दिरों का सर्वप्रथम दर्शन किया और पर्युषण के अवसर पर मैंने अनेक साधुओं को कल्पसूत्र पढते सुना। शुरु से, जैन परम्परा से मैं इसी लिये आकर्षित हो गई कि इतनी पुरानी है तो भी आज तक इतनी जीवित रह गई है। व्याख्यान सुनते-सुनते हम को पता चलता है कि जैन साधु जैन आगमों का सार आधुनिक परिषद के सामने तथा आधुनिक भाषाओं द्वारा कैसे प्रसारित करते हैं।

आश्चर्य की बात यह हुई कि जिन व्यक्तियों के पास मैं पढने जाती थी, ये सब लोग जीवन-दोस्त बन गये हैं। उनसे घनिष्ठ सम्पर्क रखना मेरे लिये मुख्य बात है। जहाँ तक कि मुझे ऐसा लगता है कि आत्मीय जीवन और शोध जीवन के बीच में कोई अन्तर नहीं है। विशेषकर शेठ परिवार और मालवणिया परिवार वास्तव में मेरे परिवार-सदस्य जैसे बन गये हैं।

जैन हस्तलिपियों की विशेषताएँ एवं इनका इतिहास मेरा एक विषय है। यह आरम्भ से हुआ। सुपात्रदान की आठ कथाएँ, जिन पर मैंने Ph.D. कर लिया, धर्मदास की उवएसमाला की एक गाथा पर आधारित हैं। उनकी भाषा संस्कृत थी, पर बीच में अनेक प्राकृत सुभाषित भी उद्धारित किये गये थे। यह अप्रकाशित ग्रन्थ था, पर इसकी एक हस्तप्रत फ्राँस में Strasbourg Library में रखा था। इस संग्रहालय की सूचि चन्द्रभाल त्रिपाठी ने बनाई थी। एक और प्रति Germany-Berlin में थी। पर अहमदाबाद आने के बाद हमको पता चला कि यह कथासंग्रह गुजरात और राजस्थान में अच्छी तरह प्रचलित था। और हस्तप्रत मिल गयी। इसके अतिरिक्त पाटण की एक प्रति से इन कथाओं का पुरानी गुजराती भाषा में अनुवाद भी प्राप्त हुआ। उसी समय से मैं प्रो० त्रिपाठी से परिचित हो गयी। तब से उनके देहान्त तक हम दोनों ने घनिष्ठ सम्बन्ध बनाऐ रखा और साथ-साथ बहुत काम किया। Manuscriptology की उनकी पूरी जानकारी थी। उन्होंने मुझे सब कुछ सिखाया। स्वर्गवास से पहले उन्होंने मुझसे प्रतिज्ञा करवा ली कि British Library की जैन हस्तप्रतों की सूचि समाप्त करूँगी। अनेक साल बीत गये

क्योंकि अधिक हस्तप्रत निकली और काम बढता रहा । पर कनुभाई एवं कल्पनाबेन सेठ की सहयोगता से हम Catalogue पूरा कर पाए । इसी प्रकार युरोप में *विशेषत: England में रखी हुई हस्तप्रतों की सूचियाँ को तैयार* करने में मैंने भाग लिया । यह अच्छी बात है । पर यह भी जानने लायक है कि भारत से यह सारी हस्तप्रत परदेश तक कैसे आ पहुँची । बहुत लोग जानते हैं कि १९ शताब्दी के अन्त में जर्मन, ब्रिटिश, फ्रेन्च विद्वानों ने संस्कृत-प्राकृत हस्तप्रतों की खोज में थे । परन्तु जैन ग्रन्थ पाने के लिये उन विद्वानों को भारतीय पण्डितों या जैन लोगों की सहायता की आवश्यकता थी । ये ही थे जो भण्डार रखनेवालों से परिचित थे और उन लोगों के साथ देशी भाषा में बात कर सकते थे । मेरा यह एक शोध-विषय हो गया है कि ये भारतीय प्रतिनिधि (intermediate) कौन थे । भगवानदास केवलदास सूरत रहनेवाली एक ऐसी व्यक्ति थी जिसने युरोप के अलग-अलग देशों की लाइब्रेरिस को बढ़ाने के लिये लगभग ३० साल के लिये बड़ा सहयोग दिया। कर्नाटक में रहनेवाले ब्रह्मसूरि शास्त्री एक और व्यक्ति थी जिन्होंने दिगम्बर हस्तप्रतों को प्राप्त करने में युरोप के विद्वानों को बड़ी सहायता दे दी । उन व्यक्तियों को अपनी संस्कृति में गम्भीर रुचि एवं जानकारी थी, उनके बिना कुछ नहीं हो पाता । इसीलिये मुझे लगता है कि वे बेनाम नहीं रहने चाहिए। हमको उनके जीवनचरित्र परिचित करने चाहिए ।

जैन कथा साहित्य अद्वितीय भण्डार है । मैं मध्यकालीन दानकथाओं से आगमिक कथा परम्परा तक चली गयी । मैंने विशेषकर आवश्यक निर्युक्ति एवं चूर्णि में उपलब्ध कथाओं पर ध्यान दिया । निर्युक्तियों के पारिभाषिक *शब्दों को समझाने का प्रयत्न किया । कभी कभी कहा जाता है कि निर्युक्ति* कुछ अजीब होती हैं क्योंकि इन में सब तरह की वस्तु मिलती है । पर मुझे लगता है कि निर्युक्तियाँ की रीति-पद्धति न्याय एवं तर्कपूर्ण होती हैं। निरुक्ति, निक्षेप तथा एकार्थ द्वारा मूल सिद्धान्त और मूल शब्दों के अर्थ पूरे निकल जाते हैं । दसवेयालियसुत्त के स-भिक्खू के नाम से प्रसिद्ध दसवे अध्ययन में भिक्खु शब्द के साथ ऐसा होता है । निर्युक्तिकार हमको समझाते है कि द्रव्य-भिक्खु एवं भाव-भिक्खु क्या होते हैं । आजकल प्राकृत भाषा के महत्त्व को रेखांकित करने के लिये मेरे दो project चल रहे हैं। एक

है हाल(सातवाहन) रचित गाहासत्तसई का अनुवाद और दूसरा वसुदेवहिण्डी का पूरा अनुवाद एवं अध्ययन । अर्धमागधी, जैन माहाराष्ट्री तथा अपभ्रंश से मिश्रित भाषावाली वसुदेवहिण्डी की आगमिक कथाओं और उत्तरकालीन कथा साहित्य के बीच में विशेष स्थिति होती है ।

वैसे ही श्वेताम्बर गच्छों का इतिहास, जैन तीर्थों का विकास या जैन उत्सवों के मानने की विधि इत्यादि भी सालों साल मेरे संशोधन-विषय हो गये । जैन श्रावको-श्राविकाओं के बीच में रहने से और उनके धार्मिक जीवन को देखने से कौतुक बढ़ गया । अनेक शोधलेख ऐसे ही पैदा हुए थे । अंचलगच्छ, अक्षयतृतीया व हस्तिनापुर के उपर जो कुछ भी मैं लिख सकी पुराने ग्रन्थों के आधार पर और आधुनिक अन्वेषण से निकल गये । जैन साधु-साध्वी जीवन के उपकरण, उनके अनेक पारिभाषिक शब्दों को समझने और उनके वर्णन देने का प्रयत्न हुआ ।

आज आप लोग मुझे कलिकालसर्वज्ञ हेमचन्द्राचार्य-चन्द्रक अर्पण करने को ठीक समझे । हेमचन्द्राचार्य रचित कृतियाँ पढ़े बिना क्या कोई विद्वान हो सकता है ? वहाँ फ्राँस में अपने विद्यार्थियों को भी हम इनके संस्कृत ग्रन्थ पढ़ने को देते हैं या M.A. के रूप में विषय सौंप देते हैं । हेमचन्द्राचार्य असाधारण प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति थी और गुजरात प्रदेश की संस्कृति में उनका योगदान महत्त्वपूर्ण हुआ । उनकी साहित्य-साधना बहुत विशाल एवं व्यापक है । उन्होंने सब तरह की कृतियों की रचना की । इनके ग्रन्थ रोचक, मर्मस्पर्शी एवं सजीव हैं । उनके त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र में २४ तीर्थंकरों, १२ चक्रवर्तियों, ९ बलदेवों, ९ वासुदेवों तथा ९ प्रतिवासुदेवों की जीवनकथाओं का वर्णन किया गया है । पर २४ तीर्थंकरों के समवसरणों के अवसर पर एक साथ जैन धर्म का शिक्षण भी दिया गया है । सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन तथा सम्यक्चारित्र के विषय पर तीर्थंकरों के व्याख्यानों से हमको पूरी शिक्षा मिल जाती है । ९ तत्त्व, ८ कर्मप्रकृति इत्यादि का स्पष्ट विवेचन किया गया है । दार्शनिक मान्यताओं का भी विशद विवेचन विद्यमान है । लेखक उचित उपमाओं द्वारा हमको सारे मूल-सिद्धान्तों को समझाता है । केवल यही नहीं, परन्तु यह त्रिषष्टि वास्तव में एक सर्वोत्तम संस्कृत महाकाव्य मना जा सकता है । प्रकृति-वर्णन, ऋतु-वर्णन, स्त्रीसौन्दर्य-वर्णन सर्वोत्कृष्ट हैं । इसका कारण यह भी है कि

हेमचन्द्राचार्य पूरे शब्दशास्त्रज्ञ थे। उनके संस्कृत-प्राकृत व्याकरण, काव्यानुशासन एवं विविध कोश-ग्रन्थ भारतीय परम्परा के प्रामाणिक शास्त्र हो गये हैं। मेरे लिये संस्कृत के पर्यायवाची शब्दों की जानकारी के लिये अभिधानचिन्तामणि एक अनमोल ग्रन्थ है जिसमें बहुत शब्द-रत्न अभी भी गुप्त रहते हैं। साधारण संस्कृत शब्दों के अतिरिक्त लेखक ने इस कोश में विभिन्न दुर्लभ शब्द भी संगृहीत किये हैं, जो जैन सन्दर्भों में ही मिलते हैं। हेमचन्द्राचार्य ने नवीन और प्राचीन सभी प्रकार के शब्दसमूह का रक्षण और पोषण प्रस्तुत किया है। १२वीं शती का रचनाकार उस समय की प्रचलित भाषा से प्रभावित कैसे न हो सका ? अभिधानचिन्तामणि में अनेक ऐसे शब्द आये हैं, जो अन्य कोशों में नहीं मिलते। हेमचन्द्राचार्यरचित वीतरागस्तोत्र काव्य एक उनका दूसरा ग्रन्थ है जो मुझे अधिक आकर्षित करता है। शब्दरचना का सौन्दर्य वीतराग के सौन्दर्य का वर्णन करने के लिये उचित है। हेमचन्द्राचार्य तीर्थंकर के शरीर पर वह सौन्दर्य और धर्मशीलता के गुणों का आरोप करते हैं क्योंकि वह किसी भी परिवर्तन से प्रभावित नहीं होता। एक श्लोक में कहा जाता है कि शुद्धता से तीर्थंकर का शरीर लोगों को आकर्षित करता है। आचार्य विजयशीलचन्द्रसूरिजी महाराज के पद्यानुवाद में यह पढ सकते हैं।

नीला प्रियंगु, स्फटिक उज्ज्वल, स्वर्ण पीला चमकता
फिर पद्मराग अरुण व अंजन रत्न श्यामल दमकता।
इन-सा मनोरम रूप मालिक! आपका, नहाये बिना
भी शुचि सुगंधित, कौन रह सकता उसे निरखे बिना ?॥ (VRS 2.1)

जिन देव वीतराग हैं, इसलिये पूरे निवृत्त होते हैं और हिन्दु देवताओं से विलक्षण हैं। कवि ने वीतराग की अलौकिकता अद्भुत रीति से स्थापित की है। अलौकिकता प्रदर्शित करते हुए उन्होंने विविध अलंकारों का उपयोग किया है। हेमचन्द्राचार्य काव्यशास्त्रज्ञ तो थे, पर प्रशंसनीय कवि भी थे।

ऐसे श्लोक पढना मन एवं जीवन को अवश्य प्रभावित करता है। कलिकालसर्वज्ञश्री हेमचन्द्राचार्य-चन्द्रक मिलने का सुपात्र हूँ कि नहीं, यह नहीं जानती, पर यह स्पष्ट है कि जैन ग्रन्थों, जैन श्रावक-श्राविकाओं एवं जैन साधु-साध्वियों के सान्निध्य में पूरा समय बिताना मेरी जीवन-ज्योति हो गई है।

* * *

आवरणचित्र-परिचय

आवरण पृष्ठ - १ : श्रीकलिकुण्डपार्श्वनाथजिननी खड्गासनस्थ एक अद्‌भुत प्रतिमा. 'कलिकुण्ड' एवा नामनो उल्लेख धरावती प्राचीन प्रतिमा भाग्ये ज मळे छे, त्यारे आ प्रतिमा एक दुर्लभ प्रतिमा गणाय. सप्रमाण ऊर्ध्वासनस्थ प्रतिमा, मस्तक पर फणायुक्त नागराज, चरणोनी नीचे पुरुषाकार सर्पनुं लाञ्छन. हाथना भागे खण्डित. पलांठी-भागे लेख आ प्रमाणे वांची शकाय छे :

"सं. १४९२ माघ सु. १० रवौ मृगशरनक्षत्रे छाया पद ११ मीनलग्नोदये दिवा प्रथम घटी १ समये श्रीप्राग्वाटज्ञातीय वृद्धशाखायां मन्त्रीवर कान्हासुत उदयसीह पारिखि कारापित श्रीकलिकुण्ड-पार्श्वनाथमूर्तिः ॥ श्रीकुमरविहारे ॥"

प्रतिष्ठा-मुहूर्तनी आटली झीणी विगत प्रतिमालेखमां होय ते विरल बाबत छे. नगरनुं नाम नथी, पण 'कुमरविहारे' शब्दथी पाटणना कुमारपाल-कारित कुमार-विहार-चैत्यनी आ प्रतिमा होवानुं समजाय छे.

आवरण - ४ : जिन-परिकरनी एक प्राचीन गादी. ते परनो लेख आम छे : — **'श्रीब्रह्माणगच्छे श्रीजसोभद्रसूरिभक्तेन ठकु..... मातृ नाइलानिमित्तं कारिता । सं. ११२४ ॥'**

आजनुं **वरमाण** ते ब्रह्माण. ते परथी प्रवर्तेल गच्छ ते ब्रह्माण गच्छ. वरमाण एटले वर्धमान नहि.